प्रकाशक

जीतमल लूणिया, मन्त्री

सस्ता-साहित्य-प्रकाशक मण्डल, अजमेर

यूरोप के इतिहास के सम्बन्ध में

आवश्यक सूचना

यूरोप के इतिहास का प्रथम भाग जिसमें आरम्भ से मध्यकाल तक का इतिहास है छप गया है। पृष्ठ संख्या २६२ और मूल्य केवल ॥।=) है। यह पहला भाग प्रकीर्ण-माला के प्रथम वर्ष में निकला था। इसलिये दूसरे वर्ष के ग्राहकों को उसका मूल्य भेजकर मंगालेना चाहिये। इस इतिहास का तीसरा भाग भी छप गया है। पृष्ठ संख्या २४२ मूल्य ॥-) इस तरह तीनों भागों की पृष्ठ संख्या ८३० है और मूल्य केवल २) रखा गया है

मुद्रक—

गणपति कृष्ण गुर्जर,

श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी

संख्या विषय पृष्ठ

संख्या	विषय	पृष्ठ

लागत का ब्योरा

कागज़	२२५) रु०
छपाई	२४५) ,,
बाइंडिंग	४०) ,,
लिखाई, व्यवस्था, विज्ञापन आदि खर्च	२८०) ,,
	७९०) रु०

कुल प्रतियाँ २१००

लागत मूल्य प्रति पुस्तक ।=)

आदर्श पुस्तक-भण्डार

यूरोपीय राष्ट्रों का इतिहास

द्वितीय खण्ड

(नवीन काल के आरम्भ से फ्रांस की राज्यक्रांति तक)

पहला अध्याय

नवीन काल और उसकी विशेषताएँ

अब हम युरोपीय इतिहास के तीसरे खण्ड में प्रवेश करते हैं। इसे नवीन काल कहते हैं क्योंकि इसी काल में नये विचारों, नये भावों और नये धर्मों का आरंभ हुआ। यह काल अब से लगभग साढ़े चार सौ वर्ष पूर्व आरंभ हो गया था। हम देख चुके हैं कि जब सम्राट् कान्स्टेन्टाइन ने ईसाई धर्म का पुनरुद्धार किया, तभी से मध्यकाल का आरम्भ समझा जाता है। अतः ऐसे समय में जब उस धर्म का ह्रास तथा नये प्रोटेस्टैन्ट मत का उदय हुआ, मध्यकाल की समाप्ति करना उचित ही है।

मध्यकाल को नवीन काल से अलग करनेवाली दो बड़ी घटनाएँ हैं—रिनासेंस अथवा साहित्यिक पुनरुत्थान और खोज का युग—जिनके फलस्वरूप मनुष्य के साहित्यिक और भौगोलिक ज्ञान में बहुत वृद्धि हुई। अनेक इतिहास-लेखक सन् १४५३ ई० से—जब तुर्कों ने कुस्तुन्तुनियाँ पर अधिकार कर के पूर्वी साम्राज्य का अन्त किया और वहाँ के यूनानी विद्वानों ने इटली

में आकर आश्रय लिया—तब से नवीन युग का आरंभ कहते हैं और इटली में साहित्यिक जागृति का यही कारण वतलाते हैं। वास्तव में यह एक वड़ी घटना हुई क्योंकि उस समय तुर्क लोग वड़े शक्तिमान् थे और सारा युरोप उनसे काँपता था। उन्होंने पूर्वी तथा दक्षिण-पूर्वी युरोप के अनेक स्थानों पर अधिकार कर लिया था। केवल कुस्तुन्तुनिया अब तक वचा था, परन्तु १४५३ में तुर्कों ने उस पर भी अधिकार करके ईसाई साम्राज्य का अन्त कर दिया। पर यह विचार ठीक नहीं है कि वहाँ से भागे हुए यूनानी विद्वानों के कारण ही साहित्य को उत्तेजना मिली, क्योंकि इस घटना से लगभग पचास वर्ष पूर्व से ही इटली में यूनानी साहित्य का प्रचार वढ़ चला था। इटली इस साहित्यिक उन्नति के लिये सब से उपयुक्त स्थान था, क्योंकि यहां के विद्वानों में लैटिन तथा ग्रीक (यूनानी भाषा) का प्रचार वहुत था। अतः नवीन युग का आरंभ मनुष्य की स्वाभाविक उन्नति और अनुभव-वृद्धि के कारण हुआ। साहित्य के पुनरुत्थान तथा ज्ञान के प्रसार से लोगों का धार्मिक अन्ध-विश्वास धीरे धीरे दूर होने लगा और धर्म में संशोधन करने के विचार दृढ़ होते गये, जिससे अन्त में महान् धार्मिक विप्लव (रिफार्मेशन) हुआ।

नवीन काल की विशेषताएँ—नवीन काल में अनेक नवीन विचारों तथा प्रथाओं का जन्म हुआ। पुराने विचार तथा पुरानी प्रथाएँ लुप्त हो गयीं जिससे समय की दशा ही वदल गई।

इस समय की सब से प्रधान घटना रिनासेन्स अथवा साहित्यिक तथा बौद्धिक उन्नति है। अतः हमें इस घटना का कुछ अधिक हाल जानना चाहिये।

इस समय इटली के लोग एकता के सूत्र में नहीं बँधे थे, परन्तु विद्या तथा कलाकौशल में वे सब युरोप से श्रेष्ठ थे। मध्य-काल में इटली, विद्या का केन्द्र था। इसका प्रधान कारण यह था कि ईसाई-धर्म का केन्द्र रोम नगर इटली में ही था। इसी धार्मिक केन्द्र से आरम्भ होकर रिनासेंस समस्त युरोप में फैला तथा उसके उदय से मध्यकाल का समय इस भाँति गल गया जैसे सूर्य के उदय से बर्फ़।

विशेषतया गिरजों में लैटिन तथा ग्रीक भाषाएँ जीवित थीं। अब इटलीवालों को उन्हें सीखने का शौक फिर पैदा हुआ। पीटार्क, दान्ते आदि के प्रयत्नों और ग्रन्थों ने इन विद्याओं के लिये रुचि उत्पन्न कर दी, मृत-भाषाओं को पुनर्जीवित करने का प्रयत्न होने लगा। इसी समय कुस्तुन्तुनिया से भागे हुए विद्वानों ने इटली में आकर विद्या की रुचि में और भी प्रोत्साहन दिया। ये बातें बड़े महत्त्व की हुईं। ज्ञानवृद्धि का सब से महत्वपूर्ण फल धर्मसंशोधन हुआ। अब तक लोग धर्म की बुराइयों में हस्तक्षेप करने से बहुत डरते थे, परन्तु जब विस्तृत ज्ञान से उन्हें धर्म के असली रूप का पता लगा तब वे निर्भय होकर धार्मिक बुराइयों पर समालोचना तथा आक्षेप करने लगे।

आविष्कार—इसी काल में छापे की कल का आविष्कार हुआ, जिससे पुस्तकें अत्याधिक सस्ती हो गईं तथा समस्त युरोप में नवीन ज्ञान फैलाने में सहायक हुई। अब तक विद्या पादरियों के अधिकार में थी, परन्तु अब सर्वसाधारण उसे सीख कर लाभ उठाने लगे।

बारूद का आविष्कार भी इसी समय हुआ। अब तक

तीर, तलवार और भाले आदि ही युद्ध के हथियार थे। इस आविष्कार से युद्धकला में एक नवीन परिवर्त्तन हुआ। अमीरों की शक्ति में भी कमी हुई। युरोप के अमीर हमारे देश के अमीरों के समान नहीं थे, वे स्वतंत्र रूप से अपने किले वनवातेथे तथा सशस्त्र सैनिक रखते थे। ये लोग कभी कभी इतने वलवान् हो जाते थे कि राजाओं को भी गद्दी से उतार देते थे। इंगलैंड में ऐसा कई वार हुआ। वारूद से राजाओं की शक्ति वढ़ी।

तीसरा आविष्कार समुद्र में दिशा वतलानेवाले यंत्र का हुआ। अव तक अनेक मल्लाह तथा जहाज़ समुद्र में रास्ता भूल कर भटक जाते थे। इसलिये वे दूर जाने का साहस नहीं कर सकते थे। इस दिशा-दर्शक यंत्र ने समुद्र-भ्रमण में वहुत सहायता पहुँचाई जिससे अनेक नये द्वीप तथा महाद्वीप खोज निकाले गये।

शिल्प, उद्योग और व्यापार की उन्नति—इस समय कलाओं का आश्चर्यजनक विकास हुआ, पुरानी सुन्दरता तथा पुराने आदर्शों ने लोगों को आकृष्ट किया। चित्रकार तथा शिल्पियों ने उनकी उन्नति में अपना जीवन विता दिया।

इस भाँति इटली के शहर कलाओं के अद्भुत नमूने वन गये, वस्त्रों में सोने का काम होने लगा और उन पर तरह तरह के रंग होने लगे। नगरों की वृद्धि हुई, जिससे व्यापार की भी उन्नति हुई। व्यापार को और वढ़ाने की इच्छा ने ही अनेक देशों और नये मार्गों का पता लगाया। अव तक खेती का प्रचार कुछ अधिक था, परन्तु उद्योग-धन्धे और व्यापार की—जो आज कल की शक्तियों में प्रधान समझे जाते हैं—इसी काल में उन्नति तथा वृद्धि हुई।

खोज—ज्ञानवृद्धि और व्यापार-वृद्धि की लालसा ने भौगोलिक खोज कराई। यूरोप के लोग अब तक भारत, चीन आदि देशों के धनवान होने की कथाएँ सुनते रहे। अब उन्हें पूर्वी देशों से व्यापार करने की इच्छा हुई परन्तु भूमध्यसागर में तुर्कों ने आधिपत्य जमा लिया था। अतः उन्हें भारत के लिये किसी नये मार्ग की आवश्यकता हुई। आवश्यकता आविष्कार की जननी है। इस समय पुर्तगाल का राजकुमार हेनरी ऐसे कामों में विशेष भाग लेता था। उसने अपना जीवन देशवासियों को नई खोज करने के लिये उत्साहित करने में ही विताया। जिनोवा का रहनेवाला एक मल्लाह कोलम्वस भारत की खोज करने को भेजा गया परन्तु उसने एक नया ही महाद्वीप खोज निकाला। फिर केवाट नामक मल्लाह ने उसकी आन्तरिक दशा का पता लगाया। सन् १४९८ में एक दूसरे मल्लाह वास्कोडिगामा ने आफ्रिका का चक्कर लगा कर अन्त में भारत का पता लगा ही लिया। इन खोजों से लोगों को समुद्री-सफ़र का वहुत उत्साह हुआ और एक पुर्तगाली मल्लाह मैगेलिन ने सर्वप्रथम संसार की परिक्रमा करके साबित कर दिया कि पृथ्वी गोल है। इन नवीन खोजों से भूमध्यसागर का व्यापार वन्द हो गया और उसका स्थान अटलान्टिक महासागर को मिला। यूरोप की सम्पत्ति तथा उसके भौगोलिक ज्ञान में भारी वृद्धि हुई।

इसी वड़ी घटना को लेकर कोई २ इतिहासकार सन् १४९२ ई० से नवीन युग का आरम्भ मानते हैं। वास्तव में यह बड़ी घटना है। अब तक ज्ञात संसार वहुत छोटा था। इस वर्ष उन्हें पृथ्वी के अर्धभाग, एक नई दुनिया अर्थात् अमेरिका का पता लगा। परन्तु इस घटना का कारण लोगों में नाविकता

की रुचि थी जो रिनासेंस के समय से ही आरम्भ हो गई थी। अतः नयी दुनिया के कारण नये विचार तथा नया समय नहीं हुआ बल्कि नये विचारों ने नई दुनिया की खोज की।

कुछ अन्य विशेषताएँ—एकतंत्रवाद—इस समय जो रियासतें कुछ बड़ी तथा शक्तिमान थीं उन्होंने छोटी रियासतों को हराकर अथवा उनसे सम्बन्ध जोड़कर अपनी रियासत में मिलाना चाहा और इस भाँति अपना राज्य विस्तृत करके एकतंत्र राज्य करना चाहा। हमें स्थान २ पर इस बात के प्रमाण मिलेंगे कि अनेक छोटी रियासतें इसी कारण लुप्त हो गईं।

यह बात भी महत्व की है कि इस राज्यविस्तार की नीति ने यूरोप में एक नई प्रथा को जन्म दिया। इसे शक्ति-संविभाग, शक्तियों की समानता अथवा बैलेन्स आफ़ पावर्स कहते हैं अर्थात् जहाँ किसी राजा की विशेष वृद्धि हुई कि फौरन ही अन्य छोटे छोटे राजा आपस में मिलकर उसकी शक्ति को दबा देते थे। इस नीति से कोई राज्य बहुत न बढ़ पाता था। यूरोप की शक्तियां इस भाँति बराबर बँटी रहीं। समस्त इतिहास इसी नीति से भरा है।

इस समय मध्यकाल की एक और विशेषता नष्ट हो चली थी। अब तक लोगों में राष्ट्रीयता का भाव बिलकुल न था परन्तु नवीन यूरोप में यह एक प्रधान शक्ति हुई। मध्यकाल की विशेषता अन्तर्राष्ट्रीयता का विचार था। यद्यपि रियासतों में झगड़े होते थे परन्तु पश्चिमी यूरोप फिर भी एक था। नवीन काल में यह एकता का भाव जाता रहा।

दूसरा अध्याय

यूरोप की उस समय की स्थिति

जर्मनी—इस समय युरोप के अन्य देश तो अपने २ को सुदृढ़ बनाने तथा बढ़ाने में लगे हुए थे परन्तु जर्मनी में दूसरा ही दृश्य उपस्थित था। यहाँ विभिन्न प्रान्तों में अनेक प्रकार की शासन-पद्धतियाँ प्रचलित थीं। सेक्सनी का राज्य वंश-परम्परा का राज्य था परन्तु कोलोन में शासक चुना जाता था। अनेक स्थानों में प्रजा-सत्तात्मक राज्य भी थे। पवित्र रोमन साम्राज्य जो यूरोप का प्रधान समझा जाता था इस समय सबसे निर्बल था। सम्राट् भी पोप की भाँति चुना जाता था। चुननेवालों में (जो इलेक्टर कहलाते थे) मेत्ज, कोलोन तथा ट्रीव्स के तीन आर्कबिशप (लाटपादरी) तथा सेक्सनी, बोहेमिया, ब्रेडनबर्ग और पेलेटाइन के चार शासक थे। चुना हुआ मनुष्य राजा की पदवी धारण करता था तथा पोप द्वारा उसका अभिषेक होने पर वह सम्राट् माना जाता था।

सम्राट् की सहायता के लिये एक डाइट अथवा राज-सभा भी स्थापित की गई थी जिसमें तीन विभाग थे। पहले में सातों चुननेवाले, दूसरे में अन्य रईस व राजा तथा तीसरे में स्वतंत्र नगरों के रहनेवाले होते थे। यही सभा वहाँ की व्यवस्थापक अर्थात् कानून बनानेवाली सभा थी। परन्तु इन तीनों दलों में आपस में वैमनस्य रहता था तथा इस सभा और राजा में भी ऐक्य न था। अतः कोई कार्य ठीक रीति से न हो पाता था।

चुनकर सम्राट् बनाना वहाँ की शासन-पद्धति का दोष था क्योंकि चुननेवालों को सदा अपने स्वार्थ का ध्यान रहता था। वे किसी बलवान् राजा को नहीं चुन सकते थे, क्योंकि उससे उन्हें अपनी शक्ति छिन जाने का भय था। अतः वे सदा निर्बल राजा चुना करते थे। इस कारण ये निर्भय तथा स्वतंत्र रहते थे। अतः जर्मनी में ऐक्य स्थापित करना असंभव सा था, साम्राज्य के स्वतंत्र नगर भी एकता में बाधक थे। जिन लोगों को चुनाव तथा राजसभा में स्थान न था वे पृथ्वी तथा समुद्र में लूट किया करते थे। उन्होंने निज के किले आदि भी बनवा लिये थे तथा उनमें से बाक़ायदा छोटे बड़े सब जहाज़ों को निडर होकर लूटते थे। इस कुमति का फल यह हुआ कि साम्राज्य के बाहरी हिस्से बिना सींचे पेड़ की डालियों के समान सूख २ कर अलग होने लगे। इटली हाथ से निकल चुका था, हंगरी तथा बोहेमिया का भी रुख फिर रहा था, स्वीजरलैन्ड भी स्वतंत्र हो गया था तथा बरगन्डी ने अनेक स्थानों पर कब्ज़ा कर लिया था।

मेक्सिमिलियन—ऐसे समय में सम्राट् मेग्ज़िमिलियन सन् १४९३ में गद्दी पर बैठा। वह वीर, योद्धा, चतुर तथा सर्वप्रिय था।

सम्राट् मेक्स ने अनेक सुधार करने का प्रयत्न किया, रईसों से स्वतंत्रतापूर्वक युद्ध करने का अधिकार छीन लिया तथा राज्य में शान्ति की घोषणा की। इसने एक कर भी लगाया जो सबको देना पड़ता था पर इन सुधारों में से कोई भी सफल न हुआ।

विदेशी नीति—सम्राट् मेक्सिमिलियन विदेशी नीति के लिये अधिक प्रसिद्ध है। उसने अनेक रियासतों से वैवाहिक सम्बन्ध किये जिनसे यूरोप का नकशा बदल गया। स्वयं अपनी शादी

बरगन्डी की मेरी से करके उसने फ्रेंच कान्टी नामक स्थान तथा नीदरलैण्ड देश पाया। उसने अपने लड़के फ़िलिप की शादी स्पेन के राजा फर्डिनेन्ड और रानी आइज़ाबेला की लड़की जुआना से करके स्पेन का राज्य भी (फर्डिनेण्ड के मरने पर) अपने वंश अर्थात् हेप्सवर्ग वंश के अधीन कर लिया तथा अन्त में अपने पौत्र के विवाह से हंगरी और बोहेमिया पर अधिकार किया। इस भांति इसने अपना राज्य फिर बढ़ा लिया।

इटली—धार्मिक केन्द्र होने तथा अपने धन, व्यापार और कलाओं के कारण इटली एक महत्वपूर्ण राज्य था। ये लोग कृषि-कार्य में भी निपुण थे और इन्होंने अनेक नहरें बनाकर पो नदी की घाटी को एक हरा भरा बाग़ बना रक्खा था। वेनिस यहाँ का प्रसिद्ध वन्दरगाह तथा मध्यकाल का व्यापारिक केन्द्र था। इटली के एक भाग नेपिल्स पर स्पेनवालों का अधिकार था। ये लोग अनेक बातों में इटलीवालों की नकल किया करते थे।

परन्तु इटली में कई ऐसे आन्तरिक कारण उपस्थित हो रहे थे जो उसे अधोगति की ओर खींच रहे थे। उस समय इटली एक राष्ट्र न था। स्थान २ पर कलह हो रहे थे, राज्य-व्यवस्था तथा न्याय शिथिल पड़ गये थे तथा शीघ्र ही वह समय आ रहा था जिसने इटली का व्यापार, धन तथा स्वातंत्र्य हरण करके उसे परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ दिया।

अब हमें इटली की आन्तरिक दशा देखना चाहिये। योंही यहाँ अनेक रियासतें थीं परन्तु इस समय पाँच रियासतों ने औरों को दबाकर अधिक शक्ति प्राप्त कर ली थी। ये पाँच रियासतें मिलन, वेनिस, फ्लोरेंस, नेपिल्स तथा पोप की रियासतें थीं।

१. मिलन—पहले यह रोमन साम्राज्य का एक जागीर थी। सन् १४५० में यहाँ स्फोंजी वंश का राज्य हुआ जिसमें सब से चतुर तथा राजनीतिज्ञ फ्रांसेस्को था। उसका पुत्र निर्बल तथा डरपोक और दुराचारी होने के कारण कुछ काल बाद मार डाला गया। उसका पुत्र बालक था—अतः उसका भाई लोडोनिको (अर्थात् बालक राजकुमार का चाचा) संरक्षक नियत हुआ। परन्तु यह राज्य अपने हाथ में लेना चाहता था। अतः उसने सम्राट् और फ्रान्स से सहायता माँगी, जिससे आगे चल कर स्पेन और फ्रांस में झगड़ा हुआ। लोडोनिको जो काले रंग के कारण मूर (अफ्रिका निवासी) कहलाता था अपने पिता फ्रांसेस्को के समान बुद्धिमान् था, पर साहसी न था। अवसर पर वह बेरहमी से भी काम लेता था। पर उसने राज्य अच्छी तरह किया और दरबार खूब सजाया। उसे साहित्य तथा कलाओं से भी प्रेम था।

२. वेनिस—मध्यकाल में वेनिस एक बड़ा व्यापारिक केन्द्र था परन्तु अब उसका महत्व घट रहा था। वह इटली की रियासतों में सब से अधिक शक्तिमान तथा विस्तृत था। यहाँ की प्रजा भी शान्तिप्रिय थी तथा यह इटली को बाहरी शत्रुओं से बचानेवाला समझा जाता था। परन्तु तुर्कों की बढ़ती हुई शक्ति ने उसके अनेक स्थानों पर अधिकार कर लिया जिस पर वेनिस ने उनसे संधि कर ली।

यहाँ यद्यपि प्रजातन्त्र राज्य था, परन्तु प्रधान शक्ति यहाँ के धनी व्यापारियों के हाथ में थी, जो प्रायः अच्छे राजनीतिज्ञ होते थे। ये एक सभा करके एक डोग अथवा राष्ट्रपति चुन लेते थे। यह पद्धति कुछ कुछ स्पार्टा से मिलती जुलती थी।

३. **फ्लोरेन्स**—यहाँ भी प्रजातन्त्र राज्य था परन्तु असली शक्ति मेडिसी वंश के अधीन थी। इस वंश का सब से प्रसिद्ध तथा बलवान् लोरेन्ज़ो (१४६९–९२) हुआ। पोप से उसका झगड़ा हो गया तथा पोप और नेपिल्स ने उसकी जान लेने का षड-यन्त्र रचा, जिससे उसका भाई मारा गया और उसके भी गहरी चोट आई। परन्तु इसके बाद वह यहाँ अधिक सर्वप्रिय हो गया। वह शान्ति का बड़ा पक्षपाती था, उसने फ्लोरेन्स के महत्व और यश को बढ़ाया परन्तु कर भारी लगाये और कुछ अधिकार भी छीन लिये। संन् १४९२ में उसकी मृत्यु से देश को बड़ी हानि पहुँची।

उसके बाद यहाँ की स्थिति फिर बिगड़ गई। इटली तथा फ्लोरेन्स की ऐसी दशा देखकर एक उपदेशक सेवनरोला ने यहाँ पर राष्ट्रीय भाव जगाने का बड़ा प्रयत्न किया। उसने दुःखित हो कर एक बार यह भविष्य-क्रन्दन किया—"हा इटली ! हा रोम ! मुझे परमात्मा की ऐसी इच्छा मालूम पड़ती है कि मैं तुम्हें एक ऐसी जाति के हाथ में छोड़ जाऊँ जो तुम्हें मनुष्य जाति से बहिष्कृत कर देगी। बर्बर लोग (तुर्क) भूखे बाघ की भाँति तुम्हारी ओर आ रहे हैं। मृत्यु-संख्या यहाँ इतनी बढ़ेगी कि कबरें खोदनेवाले गली २ चिल्लाते फिरेंगे 'क्या गाड़ने के लिये कोई मुरदा है' और तब कोई अपने पिता की लाश को लाकर उन्हें देगा और कोई अपने भाई की। हा रोम। मैं तुझसे फिर कहता हूँ, पश्चात्ताप कर, पश्चात्ताप कर ! हा वेनिस् ! हा मिलन !!"

इसके उपदेशों से देश में बड़ा जोश फैला और वह राष्ट्रीय वीर समझा जाने लगा। जब फ्रान्स के राजा आठवें चार्ल्स ने

इटली पर आक्रमण किया तब लोगों ने सेवनरोला को ही अपना नेता बनाया। उसने चार वर्ष तक शान्तिपूर्वक राज्य किया और प्रजा को राज-काज में बहुत भाग दिया। सन् १४९८ में वह हरा दिया गया और जीवित ही जला दिया गया। अब यहाँ विद्रोह का युग उपस्थित हुआ जिसके अन्त में मेडिसी वंश को फिर सत्ता प्राप्त हुई?

४. **नेपिल्स**—पहले नेपिल्स और सिसली मिले हुए थे। परन्तु १५वीं शताब्दी के बीच में जब एरेगोन (स्पेन का एक भाग) के एलफेंजों पंचम ने अपनी जायदाद अपने भाई और पुत्र में बाँटी तो दोनों अलग हो गये और इस भाँति एरेगोन वंश की दो शाखाएँ हो गई। परन्तु उसके पुत्र फर्डिनेन्ड की क्रूरता के कारण वहाँ के सरदारों ने फ्रान्स से सहायता माँगी। अन्त में वह स्पेन में मिला लिया गया तथा यूट्रेक्ट की सन्धि तक उसी में रहा।

५. **पोपों का राज्य**—अपने आध्यात्मिक तथा धार्मिक कर्तव्यों को छोड़कर पोप राजनीतिक शक्ति बन गये थे। उनका देश मध्य इटली में समुद्र के एक किनारे से दूसरे किनारे तक फैला था और पोप उसे बढ़ाने में लगे थे। बोर्जियां वंश का पोप अलक्षेन्द्र छठवाँ राज्य-विस्तार की नीति को भलीभाँति काम में लाया। वह सब पोपों से अधिक निर्दय तथा चालाक समझा जाता है। उसके पुत्र सीज़र ने भी उसे बड़ी सहायता दी जिससे उस समय पोप-राज्य बड़ा बलवान् हो गया। उनके उत्तराधिकारी जूलियस् द्वितीय तथा लियो दशम अनेक कलाओं में निपुण होते हुए भी दुराचारी थे। पोपों के षड्यन्त्रों के कारण लोगों का उन पर से विश्वास उठ रहा था। इन्हीं कारणों से धार्मिक विप्लव हुआ।

इस भांति इटली को विभक्त तथा निर्बल देखकर तीन राष्ट्र उसकी ओर आँख लगाये हुए थे—फ्रान्स, स्पेन और तुर्की। यह कहना कठिन था कि भविष्य में इटली का अधिपति कौन होगा। वेनिस यह समझ कर कि हम तो सब राज्यों के बीच में हैं, समस्त इटली से उदासीन रहता था, क्योंकि उसे आक्रमण का भयन था।

ऐसे समय वेनिस् ने कुस्तुन्तुनिया का अन्तिम करुणा-क्रन्दन सुना (१४५३ ई०)। इस अभागे नगर ने अपनी दीवारों के नीचे ३ लाख वर्बर (तुर्क) लोगों की सेना को देखा परन्तु उसे बचाने की हिम्मत किसे थी। पश्चिमी यूरोप के सब राजा अपने २ झगड़ों में लगे थे। हंगरी घरू लड़ाइयों से वर्बाद था। आष्ट्रिया का राजा फ्रेडरिक तृतीय अपना राज्य बढ़ाने की फ़िक्र में था। दूसरे लोग भी बैठे २ अपनी २ भावी हानि का अन्दाज़ा लगा रहे थे परन्तु उसे बचाने का कोई यत्न न करता था। वेनिस आदि देश भी सोच रहे थे कि हम इस युद्ध में भाग लें या न लें। इसी दुविधा में उधर सब चौपट हो गया। इटली ने कुस्तुंतुनिया से प्राण बचा कर भागनेवाले अनेक लोगों को अपनी गोद में आश्रय लेते देखा। उनकी दुःखभरी कहानी ने समस्त यूरोप में लज्जा, क्रोध तथा भय उत्पन्न किया। कुस्तुन्तुनिया में सेण्ट सोफिया नामक गिरजाघर के स्थान पर एक मसजिद खड़ी देखकर सब आँसू बहाये तथा चुपचाप कुस्तुन्तुनिया की बरबादी और साठ हज़ार ईसाइयों के कत्ल का दुःखद समाचार सुना।

अब यूरोप को कुछ होश हुआ। रूस के ज़ार निकोलस तुर्कों के विरुद्ध धर्म-युद्ध का उपदेश करने लगे। इटली की सब

रियासतें भी लोदी की सन्धि से आपस में मिल गईं। स्थान २ पर धर्म-युद्ध के लिये शोर तथा उत्साह दिखाई देने लगा।

ईसाई धर्म के वीरों में उस समय के दो मनुष्य अवश्य प्रशंसनीय हैं। पहला हंगरी देश का हनीएड्स तथा दूसरा अलवानिया का सिकन्दर वेग। पहला—जिसे तुर्क भूत कहकर अपने बच्चों को उसके नाम से डराते थे—तुर्कों को आगे बढ़ने से रोककर वापस आ गया तथा दूसरे ने उनकी पीछे से खबर ली। उसका वल देखकर विक्रमादित्य के समय के वीर याद आते हैं। कहते हैं कि उसने (सिकन्दर वेग) एक ही घूँसे से एक जंगली सांड़ का सिर तोड़दिया। इसी वल के कारण उसे विश्वविजयी 'सिकन्दर' का नाम दिया गया था। उसके मरने पर तुर्कों ने उसकी हड्डियाँ आपस में बाँट लीं जिससे वे अजेय हो जाँय।

इसी एहसान के कारण उसके पुत्र मथिया कारविनस को हंगरी का सिंहासन प्राप्त हुआ। उसने अपनी काली पल्टन को तुर्कों से लड़ने भेजा। उसका राज्य हंगरी में बड़ा उज्वल तथा प्रसिद्ध है। उसने अपनी राजधानी में एक विश्वविद्यालय भी खोला तथा एक वेधशाला, एक अजायबघर और एक पुस्तकालय भी—जो उस समय संसार के सब पुस्तकालयों से बड़ा था—स्थापित किया। उसीने हंगरी को बहुत अधिकार दिये। वह १४६४ में मर गया।

स्पेन और पुर्तगाल—स्पेन में उस समय अधिकतर यहूदी (ज्यू) लोगों की बस्ती थी जो हाल में ईसाई बना लिये गये थे। ये लोग बड़े लड़ाके थे। उस समय वहाँ मूर लोगों का भी बहुत ज़ोर था। ये लोग तुर्की, अफ्रिका आदि में फैले हुए थे और धर्म के मुसलमान थे। स्पेन के दक्षिणी सूबे ग्रेनाडा को इन्होंने

मध्यकाल में जीत लिया था और इस समय यह उन्हीं के अधिकार में था और प्रायः वहाँ बस्ती भी उन्हीं की थी। शेष रियासतों में ऐरेगान और केस्टाइल, पुर्तगाल और नेवार थी। मूर लोगों के विरुद्ध लगातार युद्ध होने पर भी इन रियासतों में ऐक्य न था जो फर्डिनेन्ड के समय में हुआ।

केस्टाइल के राजा हेनरी द्वितीय की मृत्यु के बाद उसकी बहन आइज़ाबेला रानी बनाई गई और सरदारों ने उसकी शादी ऐरेगान के राजा जुआन द्वितीय के पुत्र फर्डिनेन्ड के साथ कर दी। (सन् १४६७) में रानी की मृत्यु के बाद वह दोनों राज्यों का राजा स्वीकार किया गया। फिर उसने इस सम्मिलित शक्ति से मूर लोगों से लड़ाई की।

ग्रेनाडा के एक फ़क़ीर ने कह दिया था कि अब यह राज्य अस्त होने को है। वहाँ की आन्तरिक दशा देखकर लोगों को यह बात सही भी मालूम हुई। मूर और ईसाई लोग सदा आपस में लड़ा करते थे और एक दूसरे का देश नष्ट किया करते थे। सन् १४८१ मूर लोगों ने जहारा पर आक्रमण किया। बस लड़ाई का बहाना मिल गया। ग्यारह वर्ष तक युद्ध होता रहा, जिसमें स्पेनिश लोग धीरे धीरे ग्रेनाडा के कस्बों पर अधिकार करते गये। अन्त में अस्सी हज़ार सिपाहियों ने ग्रेनाडा पर ही घेरा डाला। नौ मास तक घेरा पड़ा रहा। एक मूर ने फर्डिनेन्ड और रानी को मारने के लिये उनके डेरे में आग लगा दी; परन्तु वे दोनों बच गये और उन्होंने रहने के लिये एक नया नगर ३ माह में तैयार करवा लिया। यह दृढ़ता देखकर मूर लोगों ने—इस शर्त पर कि उनके धर्म में बाधा न डाली जाय और उनके न्यायाधीश उनकी ही

जाति के बनाए जायँ—सन् १४९२ में किले के फाटक खोल दिये। इस भाँति पश्चिमी युरोप में मुसलमानी राज्य का अन्त हुआ।

फर्डिनंड की नीति—फर्डिनेन्ड की आन्तरिक नीति का उद्देश्य देश में अपनी शक्ति दृढ़ और केन्द्रित करना था। वह देश में धार्मिक ऐक्य स्थापित करना चाहता था। उसने सरदारों की शक्ति कम करने का भी प्रयत्न किया। धार्मिक जोश में उसने इन-क्विज़िशन नामक एक सभा स्थापित की जिसका कार्य कैथोलिक ईसाई मत न माननेवाले सब लोगों को कठोर दण्ड देना था। यह सभा क्रूरता के लिये प्रसिद्ध होगई और अन्त में उसने स्पेन को नष्ट कर दिया। उसने पुरानी शर्त का विचार न करके यहूदी और मूर लोगों से भी ईसाई बनने को कहा। पहले उसने आज्ञा निकाली कि या तो सब यहूदी ईसाई हो जायँ या देश से निकल जायँ परन्तु सोना चाँदी आदि कुछ न ले जाने पावें। इस भाँति लगभग आठ लाख मनुष्य पुर्तगाल, इटली, अफ्रिका, आदि में जा बसे। पुर्तगाल में ये प्रति मनुष्य ८ सुवर्ण मुद्रा देने पर घुसने दिये जाते थे और फिर भी इनके गुलाम बनाए जाने का खटका था; परन्तु स्पेन से ये इतने डर गये थे कि जो लोग यहाँ आगये उन्होंने अपने स्पेनवाले कुटुम्बियों को लिखा—'यह पृथ्वी अच्छी है, यहाँ के मनुष्य पागल हैं, यहाँ हमारे लिये अच्छा अवसर है, तुम चले जाओ और थोड़े दिनों में यहाँ की प्रत्येक वस्तु हमारी हो जायगी।' इसी भाँति अनेक मूर भी अफ्रीका भेज दिये गये।

सन् १५०४ में रानी आइज़ाबेला की मृत्यु हुई। यह बड़ी वीर तथा विदुषी थी। फर्डिनेन्ड अपना नाम भी न लिख सकता

था परन्तु यह लैटिन भाषा तक जानती थी। उसी ने कोलम्बस को अनेक तरह से सहायता दी थी तथा उसपर इल्जाम लगाये जाने पर भी उसकी रक्षा की थी; वह लोकप्रिय थी। उसकी मृत्यु के बाद मंत्री ज़िमनीज़ के कहने से लोगों ने फर्डिनेन्ड को राजा माना।

फर्डिनेन्ड की बाहरी नीति—विदेशी नीति में भी वह बहुत सफल रहा। उसने फ्रांस के विरुद्ध कई गुट बनाये और नेपिल्स पर अधिकार कर लिया। उसने नेवार की राजकुमारी से अपनी दूसरी शादी की जिससे १५१२ ई० में उसे नेवार राज्य भी प्राप्त हो गया। कोलम्बस की खोज ने समुद्रपार भी उसके साम्राज्य की स्थापना की, फिर उसने पुर्तगाल भी मिलाने की इच्छा से अपनी दो पुत्रियों की शादी पुर्तगाल के राजकुमार से की। एक तीसरी लड़की इंगलैन्ड के राजकुमार आर्थर तथा उस की मृत्यु के बाद उसके भाई आठवें हेनरी को ब्याही गई। एक लड़की का विवाह उसने सम्राट् मेग्ज़िमिलियन के पुत्र फिलिप से किया, जिससे अन्त में स्पेनिश राज्य हेप्सबर्ग वंश के अधीन हो गया। उसके पुत्र की शादी सम्राट् मेग्जीमीलियन की लड़की मारगरेट से हुई। इस भाँति उसने अपनी लड़कियों और लड़कों को विदेशी नीति के अस्त्र स्वरूप व्यवहार किया और इस भाँति विदेशों में अपना प्रभाव बढ़ाया।

इसी के फल स्वरूप उसकी पुत्री जुआना—जो मेग्ज़िमिलियन के पुत्र फिलिप को ब्याही गई थी—का पुत्र चार्ल्स (पंचम) एक बड़े राज्य का अधिकारी हुआ।

फ्रान्स—नवीनकाल में फ्रान्स ने बहुत भाग लिया है तथा

उसका इतिहास महत्वपूर्ण है। इस समय फ्रांस और इंगलैण्ड के बीच का शतवार्षिक युद्ध समाप्त हो चुका था और फ्रान्स अपनी हानि की पूर्ति भी कर चुका था। अब वह अपने राज्य को दृढ़ तथा विस्तृत करने के उद्योग में था। फ्रान्स में कई शक्तिमान् रईस थे जिनमें बरगंडी का ड्यूक सबसे शक्तिमान् था। ये लोग राजा को कुछ चीज़ न समझते थे। जनता उन रईसों के अत्याचारों से घबड़ा कर राजा के पक्ष में थी अतः राजा सरदारों को दबा सकता था।

सन् १४६१ में सातवें चार्ल्स की मृत्यु के बाद उसका पुत्र लुई ग्यारहवाँ गद्दी पर बैठा। यद्यपि वह बुद्धिमान् तथा साहसी था जैसा कि उसके कार्यों से मालूम होगा, पर उसने ओछे तथा सभासद पसन्द काम करने में ही मन लगाया। एक सिपाही को अपना राजदूत नियत किया और एक नाई को अपने महल का सुपरिन्टेन्डेन्ट (निरीक्षक) बनाया और स्वयं भी मैले वस्त्र पहने और बीमारी में भी मैले कमरों में ही रहना पसन्द किया। पिता के समय के सब मंत्रियों तथा कर्मचारियों को उसने बरखास्त कर दिया और फिर रईसों की जागीरें ज़ब्त करने की धमकी दी और उनसे शिकार का अधिकार भी छीन लिया। शिकार बन्द कर देना उस समय रईसों का बड़ा अपमान समझा जाता था; अतः सब रईस तथा निकाले हुए लोग मिलकर लुई के विरुद्ध युद्ध की तैयारी करने लगे जिनके नेता बरगंडी तथा ब्रिटेनी के ड्यूक हुए। इंगलैन्ड के राजा एडवर्ड चतुर्थ की बहन बरगंडी के ड्यूक को ब्याही थी, अतः उसने भी उनकी सहायता की। लुई को हारकर रईसों को बहुत सी रियायतें देनी पड़ी। इसी

बीच में लुई का भाई जो सरदारों की ओर मिला हुआ था, मरगया। इससे रईसों का उत्साह एकदम कम हो गया। लुई ने अवसर देखकर एडवर्ड चतुर्थ को तो रिश्वत देकर उससे पीछा छुड़ाया, शेष दो चार रईसों को हरा दिया और इस भाँति अपनी स्थिति फिर दृढ़ करली।

बरगन्डी का ड्यूक चार्ल्स बहादुर इस समय का बड़ा विख्यात वीर है। उसे युद्ध करने की प्रबल इच्छा रहती थी। फ्रान्स में मौका न देखकर उसने छोटी छोटी रियासतें दबाकर अपने लिये एक साम्राज्य स्थापित करना चाहा तथा इस के लिये जर्मनी आदि से कई युद्ध भी किये। फिर वह युद्ध के लिये स्वीटजरलैन्ड गया; परन्तु वहाँ की स्वतंत्रताप्रिय जनता ने उत्साह तथा क्रोध से युद्ध करके उसे परास्त कर दिया। इससे उसकी ख्याति को बड़ा धक्का लगा, वह पागलसा हो गया। तब से उसने न अपनी डाढ़ी बनवाई और न कपड़े बदले। फिर उसने पास की लोरेन रियासत से रेनी नामक राजकुमार को निकालना चाहा; परन्तु वह स्विस भाषा बोलता था, अतः स्वीटजरलैन्डवाले उसकी सहायता को आगये। सन् १४७७ में खूब युद्ध हुआ जिसके बाद चार्ल्स का मृत शरीर एक तट्टे की कीचड़ में सना हुआ पाया गया। किसी को मालूम न हुआ कि वह कैसे मरा। रेनी ने जल छिड़क कर उसे पवित्र किया और कहा—'प्यारे भाई, परमात्मा आपकी आत्मा को शांति दे, आपकी मृत्यु से हमें बहुत दुःख हुआ है, बहुत दिनों तक लोगों को विश्वास न हुआ कि ऐसा वीर एक साधारण युद्ध में मारा जायगा और वे बरसों उसकी बाट देखते रहे।

लुई ग्यारहवें ने इस प्रकार बरगंडी के प्रबल वंश का अन्त

होनेपर जलसा मनाया। चार्ल्स वहादुर की पुत्री मेरी का विवाह सम्राट् मेग्ज़िमिलियन से हुआ; परन्तु मेरी एक पुत्र और एक पुत्री छोड़ कर शीघ्र ही मर गई। सन् १४८२ में फ्रान्स तथा सम्राट् में संधि होगई, जिससे फ्रान्स के राजकुमार डार्किन के साथ मेरी की पुत्री मारगरेट का विवाह निश्चित हुआ जिसके दहेज़ में आर्टोइस और वरगंडी देना निश्चित हुआ।

फिर फ्रान्स ने प्रोवेन्स, व्रिटैनी आदि को भी मिला कर अपना राज्य दृढ़ किया। फिर नेपिल्स पर भी अधिकार करना चाहा जिससे स्पेन से झगड़ा हुआ जो ५० वर्ष तक चला।

इंगलैन्ड—इस समय इंगलैन्ड की आन्तरिक दशा वहुत बुरी थी। शतवार्षिक युद्ध के समय एक निर्वल लड़का हेनरी छटवाँ गद्दी पर वैठा था। यहाँ के रईस वड़े वलवान् थे, जिनमें वारवेक का ड्यूक सब से प्रधान था। उसके यहाँ हज़ारों सिपाही रहते थे। एक समय के भोजन के लिये उसके तथा उसके साथियों के लिये छः वैल पकाये जाते थे। हेनरी छटवें का विवाह फ्रान्स के सूवे प्रोवेन्स की सुन्दर राजकुमारी मारगरेट के साथ हुआ था। वह लड़ने में वड़ी वहादुर थी। शतवार्षिक युद्ध में अवतक अंग्रेज़ सफल थे। वे अपने से दूने फ्रांसीसियों को हरा दिया करते थे। परन्तु देवी जॉन के प्रकट होते ही फ्रांसवालों में विचित्र शक्ति आगई। अव वे अपने से दूने अंग्रेज़ों को हराने लगे। इस भाँति उन्होंने तमाम अंग्रेज़ों को मार भगाया। इंगलैंड में इस वात से वहुत खलवली मची। वे फ्रांस को जातीय शत्रु समझने लगे। अतः हेनरी छटवें का विवाह एक फ्रांसीसी राजकुमारी से होना भी लोगों को वहुत बुरा लगा।

जगह जगह विद्रोह के लक्षण दिखाई देने लगे। एक सूबे यार्क के ड्यूक (रईस) रिचार्ड ने और कई रईसों की सहायता से राजा को कैद कर लिया और स्वयं राजा बन गया। हेनरी की रानी मारगरेट ने एक सेना खड़ी करके युद्ध किया, पर वह हार गई; फिर उसने एक और बड़ी सेना तैयार करके वेक़फील्ड स्थान के पास रिचार्ड को हरा दिया जिसमें वह मर गया। उसका बारह वर्ष का लड़का भाग निकला पर पकड़ लिया गया। उस बेचारे ने घुटने टेक कर जान बचाने की प्रार्थना की; परन्तु क्रूर रईसों ने यह कह कर कि तुझे भी अपने बाप की तरह मरना होगा, तलवार से उसके दो टुकड़े कर दिये। इस पर वारवेक के प्रबल रईस ने रिचार्ड के दूसरे पुत्र के राजा होने की घोषणा करदी। वह सन् १४६१ में एडवर्ड चतुर्थ के नाम से गद्दी पर बैठा। वह उस समय इंगलैंड में सब से अधिक़ सुन्दर समझा जाता था। वारवेक के रईस ने उसे मारगरेट की फ़ौज से फिर लड़वाया और कई लड़ाइयों के बाद वह हार कर फ्रान्स को चली गई।

इसी बीच में युद्ध में लूटे हुए माल के बटवारे के ऊपर एडवर्ड तथा वारवेक में झगड़ा हो गया। अब उसने स्वयं मारगरेट को बुलाकर एडवर्ड पर चढ़ाई कर दी। एडवर्ड की सेना ने उसे धोखा दिया और सन् १४७० में वह बरगंडी भाग गया। अब फिर मारगरेट का पति हेनरी छठवाँ क़ैद से निकाल कर राजा बनाया गया। एडवर्ड साहब अपनी बात बिगड़ती देखकर घोषणा करने लगे कि मैं तो सिर्फ अपने बापकी जागीर यार्क माँगता हूँ और अपने साथियों से कह दिया कि तुम लोग बोलते चलो— 'महाराज हेनरी चिरंजीव रहें' परन्तु अपनी शक्ति फिर बढ़ती

देखकर उन्होंने फिर सिंहासन पर अधिकार करना चाहा। वारवेक इस बीच में मर गया। मारगरेट और उसका पुत्र दोनों क़ैद कर लिये गये। पुत्र एडवर्ड के सामने लाया गया। एडवर्ड ने पूछा तुम्हें हमारे राज्य में घुसने का साहस किसके बल पर हुआ? वीर माता के कुमार ने निर्भीकता पूर्वक उत्तर दिया 'मैं अपने पिता हेनरी का राज्य लेने और अपने स्वत्व की रक्षा करने आया हूँ!' एडवर्ड ने क्रोधित होकर उसके मुँह पर ज़ोर से घूँसा मारा, फिर आसपास के लोग उस बच्चे पर दौड़ पड़े और खंजरों से उसे टुकड़े २ कर दिया।

एडवर्ड ने लन्दन में प्रवेश किया। उसी दिन हेनरी ने क़ैद में अपनी मानवलीला समाप्त की, सफेद गुलाब वंश की विजय हुई। (क्योंकि योर्क वंश का झण्डे का चिन्ह सफेद गुलाब का फूल था और लंकाशायर वंश का जिसमें हेनरी छठवाँ था, लाल गुलाब)। एडवर्ड ने अब सब भाई बन्धों को मरवा डाला परन्तु ग्लोसेस्टर के ड्यूक रिचार्ड ने विष देकर उसे भी परमधाम पहुँचा दिया (सन् १४८३)। उसका पुत्र एडवर्ड पंचम अभी बच्चा था अतः ग्लौसेस्टर के ड्यूक ने अपने को उसका संरक्षक प्रकट किया परन्तु राजकुमार की माता जानती थी कि वह कैसा संरक्षण करेगा। हेस्टिंग आदि और कई लोग भी रानी की ओर से एक षड्यन्त्र रच रहे थे। एक दिन रिचार्ड हँसता हुआ पार्लमेन्ट में घुसा परन्तु एकदम त्यौरी बदलकर बोला कि जो लोग मेरे विरुद्ध षड्यन्त्र रच रहे हैं उन्हें क्या दण्ड दिया जाय? फिर उसने हेस्टिंग्ज़ की ओर देखकर कहा कि तुम उस दल के मुखिया हो अतः तुम्हारा सिर काटे बिना मैं भोजन नहीं करूँगा। रिचार्ड

का इशारा पाकर कई सशस्त्र सैनिक हेस्टिंग्स पर टूट पड़े और क्षण भर में उसका सिर पृथ्वी पर गिरा दिया। एडवर्ड पंचम आदि राजकुमारों को मरवा कर रिचार्ड पूर्ण स्वतन्त्र राजा बन गया।

पर अत्याचार का फल प्रायः शीघ्र मिल जाता है। रिचार्ड भलीभाँति गद्दी पर बैठ भी न पाये थे कि एक नया मनुष्य उनसे बदला लेने के लिये उत्पन्न हो गया। फ्रान्स के ब्रिटेनी प्रांत में लंकास्टर वंश का हेनरी ड्यूडर राज्य कर रहा था। उसका बाबा वेल्स प्रदेश का था अतः वेल्सवाले भी उसके पक्ष में थे। युद्ध तथा अशान्ति से प्रायः सारा इंगलैंड घबरा रहा था और हेनरी ड्यूडर सरीखे एक बलवान् राजा का बाट देख रहा था। हेनरी ने यह समाचार सुनकर इंगलैंड आकर बोसवर्थ के मैदान में रिचार्ड को हरा दिया। रिचार्ड वीरता से लड़ता हुआ मारा गया। उसका मुकुट सरदारों ने हेनरी ड्यूडर के सिर पर रक्खा।

सन् १४८५ में यह हेनरी सातवें के नाम से गद्दी पर बैठा। एडवर्ड चतुर्थ की लड़की एलिज़ाबेथ से विवाह करके इसने यार्क और लंकास्टर वंश में मेल स्थापित किया। उसने अनेक उपायों से रईसों को निर्बल करके शान्तिपूर्वक राज्य किया।

स्वीटज़रलैंड—यहाँ के सीधे सादे किसानों को स्वतन्त्रता सदा से प्यारी रही है। ये लोग ट्यूटोनिक जाति के हैं तथा बड़े वीर पुरुष हैं। आल्प्स की सुन्दर गोद में स्थित अपना हरा भरा देश उन्हें प्राणों से भी प्यारा है और उसकी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये उन्हें कई बार बहुत सी जानें बली करनी पड़ी हैं।

तेरहवीं और चौदहवीं शताब्दी में यहाँ के कुछ स्थानों पर आष्ट्रिया के सम्राट् का अधिकार रहा और वे कर भी लेते रहे पर

कुछ दिन बाद एक राष्ट्रीय वीर विलियम टैल ने कर देने से इनकार कर दिया फिर यहाँ की तीन सूबातों ने मिलकर सम्राट् के विरुद्ध विद्रोह किया। सन् १३१५ में आष्ट्रिया के लीपोल्ड ने एक बड़ी सेना भेजी। स्विस लोगों के पास हथियार, लाठी, बरछे आदि थे अतः उन्होंने आष्ट्रियन सेना के लिये रास्ता खाली छोड़ दिया। जब शत्रु सेना एक झील और पर्वतों की घाटी के बीच में आ गई तो स्विस लोगों ने ज़ोर २ से चिल्ला कर पत्थरों और चट्टानों के समूह उन पर बरसाये। फिर घबड़ाकर भागती हुई सेना पर वे लाठी बरछे लेकर टूट पड़े। घाटी तङ्ग थी, कुहरा पड़ रहा था, बहुत से घोड़े झील ही में कूद पड़े, इस प्रकार उस सेना का एक बड़ा भाग नष्ट हो गया।

इसके सत्तर वर्ष बाद आष्ट्रिया ने इसका बदला लेना चाहा। स्विस संघ से लड़ने के लिये एक बड़ी सेना भेजी गई। अब संघ में आठ रियासतें सम्मिलित थीं। जूरिच स्थान पर संघ की सेना खड़ी थी, आष्ट्रिया की छै हजार सेना शत्रुओं का बरछों की धार से स्वागत करने की इच्छा से आगे बढ़ी और उसे चारों ओर से घेर लिया। परन्तु वह सेना एक चट्टान के चारों ओर समुद्र जल के समान साबित हुई। इस समय स्वीटजर्लैंड के सबसे बड़े राष्ट्रीय वीर ने अपनी वीरता दिखाई। आरनोल्ड ने देखा कि यदि इस समय एक मनुष्य अपना बलिदान न करेगा तो सब काम बिगड़ जायगा। उसने सेना से चिल्लाकर कहा कि मैं तुम्हारे आगे बढ़ने के लिये रास्ता तैयार करता हूँ, मेरे स्त्री बच्चों की खबर लेना। इतना कहकर वह शत्रु की सेना में घुस पड़ा और यद्यपि उसकी छाती पर चारों ओर से बरछों की वर्षा हुई, तो भी वह बढ़ता

गया और उसकी सेना उसके साथ बढ़ी और जोश के कारण उन्होंने अन्त में शत्रुओं को हरा दिया।

सन् १४७६ में चार्ल्स बहादुर को भी उन्होंने इसी भांति हराया। विजयों से संघ दृढ़ होता गया और उनमें एकता तथा राष्ट्रीयता के भाव उत्पन्न होते गये। अन्त में १६४८ में वेस्ट-फार्निया की सन्धि से स्विटज़रलैंड एक राष्ट्र माना गया।

—*✿*—

तीसरा अध्याय

इटली के लिये फ्रांस और स्पेन में कलह

नवीन काल के आरम्भ होते ही इटली को हड़पने के लिये फ्रान्स तथा स्पेन में झगड़ा आरम्भ हो गया। दोनों ने अपनी २ सेनाएँ सजाकर इटली के लिये प्रस्थान कर दिया। किसी ने पूछा कि कहाँ जाते हो तो झट जवाब दे दिया कि आजकल तुर्क बहुत प्रबल हो रहे हैं, उन्होंने हमारे धर्म पर आघात किया है, उन्हीं के विरुद्ध धर्मयुद्ध करने के लिये हम जा रहे हैं। मोर्चा जमाकर लड़ने के लिये इटली बहुत उत्तम जगह है अतः हम वहीं से लड़ेंगे। परन्तु लोग इस उत्तर से कब सन्तुष्ट हो सकते थे। वे जान गये कि निर्बल इटली का माँस नोचने के लिये ये गिद्ध उसमें प्रवेश कर रहे हैं।

इटली अशक्त था तथा अनेक छोटे २ भागों में बँटा हुआ था जिनमें आपस में वैर था। नेपिल्स को निर्बल देखकर वेनिस ने उसे दबाने के लिये फ्रान्स से सहायता की प्रार्थना की। मिलन में लोडोविको मूर ने भी अपने भतीजे से राज्य लेने के लिये फ्रान्स

से सहायता माँगी। इस भाँति कई निमंत्रण पाकर फ्रान्स के राजा लुई ग्यारहवें के पुत्र आठवें चार्ल्स ने एक बड़ी सेना लेकर तथा नेपिल्स पर अपना दूर का सम्बन्ध बताकर उसे लेने के बहाने से सन् १४९४ में प्रस्थान कर दिया। राजा साहब जो कुछ बदसूरत थे, काले मखमल के ज़रीदार वस्त्र पहनकर घोड़े पर बैठकर आगे चलते थे। उनके पीछे नाइट लोग (वीरता के लिये सम्मान पाये हुए लोग) पैदल थे। उसके बाद स्विस, गैस्कन, फ्रान्सीसी तथा स्काटलैंड-वालों की सेना थी। लोगों ने यह सैनिक तमाशा बड़े शौक से देखा। मिलन में उनका स्वागत किया गया। फ्लोरेन्स उनका सामना न कर सका। पोप महाराज तो झट शरण में आ गये और कई गाँव देकर सन्धि कर ली। नेपिल्स के महाराज भी अपने को निःसहाय पाकर कहीं को चलते बने। बिना किसी झगड़े के चार्ल्स इटली का राजा बन गया। फ्रेंच लोगों ने वहाँ के नगरों की सुन्दरता, तथा वहाँ की सेना की चतुरता और तीव्र गति देख कर आश्चर्य किया।

चार्ल्स की ऐसी अपूर्व विजय देख कर अन्य राजा घबराने लगे। उसके दोस्त व दुश्मन दोनों डरने लगे कि अब कहीं हम पर हाथ न फेरा जाय। स्पेन को भी ईर्षा हुई। शक्तियों की समता का प्रश्न उत्पन्न हुआ। चार्ल्स बहुत बलवान् हो रहा था, अतः स्पेन के फर्डिनेन्ड, सम्राट् मेग्जिमिलियन तथा पोप ने मिल कर फ्रान्स के विरुद्ध एक प्रबल पार्टी बनाई। यह देख कर चार्ल्स साहब ने चुपचाप अपने घर फ्रान्स का रास्ता लिया। इटली में उसका अधिकार न रहा।

बारहवें लुई के युद्ध—चार्ल्स के बाद फ्रान्स की गद्दी पर उसका बहनोई आरलीन्स का ड्यूक लुई बैठा। मिलन में स्फोर्ज़ा

वंश से पहले उसी के वंश का राज्य था। अतः उसने वहाँ अपना अधिकार बता कर उसे ले लिया। लोडोविको जेल में ही मर गया। अब उसने नेपिल्स भी लेना चाहा, पर यहाँ स्पेन अपना अधिकार बताता था, क्योंकि यह भी वहीं के एरेगौन वंश के हाथ में था। झगड़ा बचाने के लिये फ्रांस तथा स्पेन ने सलाह करके उसे बाँट लेना निश्चित किया, परन्तु बाँट के समय लुई तथा फर्डिनेन्ड में झगड़ा हो गया। इससे दोनों के बीच में युद्ध हुआ। यद्यपि फ्रान्स की सेना सुसज्जित तथा संख्या में अधिक थी, फिर भी स्पेन के प्रसिद्ध इंजीनियर पीड्रो नेवारा की चतुरता से स्पेन ने सब किले जीत लिये और फ्रेंच इटली से फिर भगा दिये गये।

सन् १५१५ में लुई की मृत्यु के बाद फ्रान्सिस राजा हुआ। वह उत्साही था, अतः उसने मिलन फिर लेना चाहा, इस भाँति इटली के युद्ध के तीसरे विभाग का आरम्भ हुआ। रास्ते में मिलन की स्विस सेना मिली, परन्तु फ्रान्सीसियों ने उसे मेरिनानो स्थान पर हरा दिया, इस विजय से उनकी ख्याति बहुत बढ़ गई। उन्होंने बढ़ कर मिलन पर फिर अधिकार कर लिया। इसी समय फर्डिनेन्ड भी मर गया जिससे कुछ काल के लिये दोनों में सुलह हो गई जिसके अनुसार मिलन फ्रांस को मिला और नेपिल्स स्पेन के अधिकार में रहा। इस तरह फ्रांसिस की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई।

परन्तु यह संधि चिरस्थायी न हो सकी। फर्डिनेन्ड के बाद चार्ल्स स्पेन की गद्दी पर बैठा और वही सन् १५१९ में सम्राट् चुना गया। फ्रांसिस स्वयं सम्राट् बनना चाहता था, अतः इस चुनाव से वह बहुत जल गया। सोलहवीं शताब्दी में युद्ध के लिये इतना ही कारण काफी था।

पोप भी फ्रांसीसियों को इटली से निकालना चाहता था, अतः चार्ल्स (जो सम्राट् चार्ल्स पंचम कहलाता है) और पोप में सन्धि हो गई और उन लोगों ने इंगलैण्ड के राजा हेनरी सप्तम के पुत्र आठवें हेनरी को भी अपनी ओर मिला लिया। सब ने मिल कर फ्रान्सिस को भगा दिया, पर कुछ दिन बाद उसने तैयारी करके फिर मिलन पर अधिकार करना चाहा। सन् १५२५ में पेविया का घोर युद्ध हुआ जिसमें फ्रांस की फिर हार हुई। उसमें दस हज़ार मनुष्य मारे गये और फ्रान्सिस स्वयं क़ैद कर लिया गया। मेड्रिड में उससे एक सन्धिपत्र पर दस्तख़त करवा लिये गये जिसमें बरगंडी, फ़्लैन्डर्स और आर्टोइस चार्ल्स को देने की शर्त थी। इस पर वह छोड़ दिया गया, परन्तु क़ैद से छूट कर उसने इन शर्तों को अस्वीकार कर दिया क्योंकि उन पर उससे ज़बरदस्ती दस्तख़त करवाये गये थे।

चार्ल्स को इस भाँति विजयी देख कर दूसरे लोग डरे। यूरोप की सदा यही नीति रही है कि कोई राज्य अत्याधिक शक्तिमान् न होने पावे। पोप भी डरते थे कि चार्ल्स पूर्ण स्वतंत्र होकर उस पर भी हुक्म चलावेगा। इंगलैण्ड के हेनरी अष्टम ने चार्ल्स से यह प्रस्ताव किया था कि दोनों जने मिल कर फ्रान्स को ले लें और आपस में बाँट लें। पर चार्ल्स ने इसे अस्वीकार किया, इस पर नाराज़ होकर हेनरी और पोप ने उसका साथ छोड़ कर फ्रान्सिस से सुलह कर ली।

इस पर चार्ल्स की सेना ने सन् १५२७ में इटली में घुस कर रोम पर हमला किया और खूब लूट की और पुजारियों को बड़ी बेरहमी से मारा। अब पोप व फ्रांसिस दोनों ने चार्ल्स से सुलह

कर ली। चार्ल्स व फ्रांसिस की माताओं के बीच में सन् १५२९ की केम्ब्रे की यह सन्धि तै हुई, जिससे मिलन, आर्टोइस और फ्लैन्डर्स फिर चार्ल्स को मिले।

फिर भी फ्रान्सिस चुप न बैठा। सम्राट् की हैसियत से चार्ल्स को तुर्कों की ओर भी ध्यान देना पड़ता था जो इस समय यूरोप की ओर धीरे २ बढ़ रहे थे। दक्षिण में आष्ट्रिया के समुद्री डाकू भी उपद्रव कर रहे थे। चार्ल्स को इन झगड़ों में फँसा देख कर फ्रांसिस ने इंगलैण्ड और स्काटलैण्ड से घनिष्ठता बढ़ाई और तुर्की के सुलतान सुलेमान से भी सन्धि कर ली, पर कई छोटी लड़ाइयों के बाद अन्त में सन् १५४४ में क्रेस्वी स्थान पर फिर सन्धि हो गई, जिससे दोनों ने एक दूसरे के देश लौटा दिये। चार्ल्स ने बरगंडी के ऊपर से अपना अधिकार उठा लिया और फ्रांसिस ने इटली में अपने अधिकार का दावा छोड़ दिया।

सन् १५४७ में फ्रांसिस मर गया और उसका पुत्र हेनरी द्वितीय राजा हुआ। तीन वर्ष बाद फिर युद्ध हुआ जिसमें बूढ़ा चार्ल्स बुरी तरह हार गया। थक कर तथा निराश होकर उसने अवकाश ग्रहण किया और सन् १५५६ में मर गया। उसका पुत्र फिलिप द्वितीय स्पेन, नेदरलैण्डस् तथा नई दुनिया का राजा हुआ और उसका भाई फर्डिनेन्ड आस्ट्रिया का राजा हुआ तथा सम्राट् पद पर चुना गया।

हेनरी द्वितीय ने भी अपने पिता की नीति क़ायम रक्खी। उसने नेदरलैंड्स पर से फिलिप का अधिकार हटाना चाहा, परन्तु फ्रांसीसी सेन्ट क्विटन तथा ग्रेवलाइंस इन दो स्थानों पर हराये गये और उन्हें केटो केम्ब्रेसिस की सन्धि माननी पड़ी। मिलन और नेपिल्स स्पेन के ही पास रहे और लारेन फ्रांस के पास रहा।

इस भाँति फ्रांस और स्पेन के बीच का इटली के लिये झगड़ा जो बहुत दिनों से चल रहा था, समाप्त हुआ। यद्यपि धार्मिक झगड़े दोनों देशों में सौ वर्ष तक और चलते रहे, झगड़े के अन्त में स्पेन फ़ायदे में रहा और इस भाँति पोप जूलियस का यह कहना सत्य हो गया कि इटली में फ्रांसीसी लोग तो घास के समान हैं जो जब चाहें उखाड़ कर फेंके जा सकते हैं। परन्तु स्पेन-रूपी वृक्ष की जड़ें पृथ्वी में पैठ गई। इन झगड़ों ने युरोप में राष्ट्रीयता के भाव जागृत किये।

अध्याय समाप्त करने के पहले हमें चार्ल्स पंचम का थोड़ा हाल और जान लेना चाहिये। वह यूरोप के एक बहुत बड़े भाग का मालिक था। माता (एरेगान के राजा फर्डिनैन्ड की पुत्री जुआना) के द्वारा उसे केस्टाइल, एरेगान, नेपिल्स, सिसली तथा नई दुनियाँ के देश मिले। पिता फिलिप के द्वारा बरगंडी और नेदरलैन्ड्स मिले तथा सन् १५१९ में उसका बाबा सम्राट् मेग्ज़ीमिलियन मरा तो आस्ट्रिया और सम्राट् पद भी उसे मिला। इस भाँति उसके समय में हेप्सबर्ग वंश का राज्य बहुत बढ़ गया परन्तु वह सबका उचित प्रबंध न कर सका। उसका जीवन भिन्न २ प्रान्तों के विद्रोह दबाने में ही बीता। इतना बड़ा राज्य होने पर भी वह संसार के महान् शासकों में नहीं गिना जाता और न बड़े राज-नीतिकों अथवा सिपाहियों में ही। उसने फ्रांसिस, तुर्कों तथा अफ्रिका के समुद्री डाकुओं से युद्ध किये जिनमें सर्वत्र उसकी विजय रही। उसीके समय में धार्मिक विप्लव (रिफार्मेशन) भी आरंभ हुआ जिसे दबाने का उसने पूर्ण प्रयत्न किया, पर सफल न हुआ।

स्पेन में उसने निरंकुश राज्य किया। उसका जीवन केस्टाइल

तथा अन्य स्थानों पर विद्रोह दबाने में तथा चिन्ता में बीता। उच्चशिक्षित न होने पर भी वह विद्या तथा संगीत का प्रेमी था। निराश तथा थकित होकर वह सन् १५५६ में मरा।

चौथा अध्याय

धर्म-संशोधन (रिफार्मेशन)

सोलहवीं शताब्दी में यूरोप में एक ऐसी घटना हुई जिससे अनेक वर्षों तक वहाँ अशान्ति फैली रही तथा जिसके फलस्वरूप यूरोप दो बड़े धार्मिक दलों में बँट गया। यह घटना फ्रांस की राज्य-क्रान्ति को छोड़ कर शेष समस्त घटनाओं से अधिक प्रसिद्ध तथा महत्त्वपूर्ण है। यह घटना 'रिफार्मेशन' अथवा धर्म-संशोधन कहलाती है। यह रोम के कैथोलिक मत के विरुद्ध एक धार्मिक विप्लव था जिसका उद्देश्य धर्म में सुधार करना तथा उसके दोषों और अन्धविश्वासों को दूर करना था।

अब तक समस्त यूरोप का धार्मिक केन्द्र रोम का गिर्जा था। पोप के नेतृत्व में यूरोप एक साम्राज्य के समान मिला हुआ था परन्तु सोलहवीं शताब्दी तथा उससे पहले भी कुछ ऐसे कारण उपस्थित हो रहे थे जिन्होंने अन्त में आधे यूरोप को रोम और पोप का विरोधी बना दिया।

इन कारणों में सब से प्रधान कारण पोपों की विलासिताथी। उस समय के पोप भारत के अनेक महन्तों से भी बहुत बढ़े चढ़े थे। उनके पास रियासत थी, धन था, अधिकार था, हुकूमत थी, बस 'किमु यत्र चतुष्टयम्'। उनका काम केवल सांसारिक आनन्द उड़ाना

था, धर्म का सदाचार से कुछ भी सम्बन्ध न रहा था। इन्नोसेन्ट अष्टम, अलक्जंडर षष्ठ, जूलियस द्वितीय, लियो दशम, क्लेमेण्ट सप्तम आदि पोप, उस समय के सब दुराचारी मनुष्यों में बढ़ कर थे। पोप तथा अन्य बड़े पादरियों को विवाह करना मना था परन्तु गुप्त रूप से उनके एक नहीं, दर्जनों स्त्रियाँ होतीं थीं। पोप अलक्जंडर षष्ठ के एक पुत्र सीज़र बोर्ज़िया था तथा एक पुत्री लूक्रेशिया। कहते हैं कि ये दोनों भाई वहन भी गुप्त-रूप से स्त्री पुरुष थे। ऐसे ही भयंकर दुराचार देख कर रोम में एक यहूदी ईसाई वन गया। उससे धर्म-परिवर्तन का कारण जब पूछा गया तो उसने उत्तर दिया कि जिस धर्म में ऐसे दुराचार और अत्याचार होते हैं और फिर भी वह संसार में स्थिर रहे तो अवश्य ही उस धर्म पर परमेश्वर की विशेष दया है, इसी कारण मैं ईसाई हो गया।

अन्य रियासतों से कर-स्वरूप, भेंट-स्वरूप, तथा धार्मिक अधिकारियों की नियुक्ति के समय भेंट, इस भांति अनेक तरह से अन्य रियासतों से पोप के पास रुपया आता था। पादरी, लाट-पादरी (आर्कविशप) आदि चुनने का अधिकार पोपों को ही था। वे भारी रिश्वत देनेवाले को ही उस पद पर नियत करते थे। त्योहारों तथा अन्य उत्सवों पर पोप राजाओं से भेंट माँगते थे, इस भाँति रोम का कोष भरता जाता था और राजा ग़रीब होते जाते थे। पोप रियासतों के आन्तरिक झगड़ों में भी हस्तक्षेप करते थे, इन कारणों से अनेक राजा पोपों के विरुद्ध हो गये थे।

तीसरा कारण साहित्यिक और बौद्धिक पुनरुत्थान (रिनासेंस) था। मध्यकाल में लोगों ने यूनानी और लैटिन भाषाएँ पढ़ना छोड़ दिया था, वे पादरियों के उपदेशों पर पूर्ण विश्वास करने लगे

थे। भूत, प्रेत, शैतान आदि को मानते थे, धर्म को बड़ी श्रद्धा तथा भय की दृष्टि से देखते थे परन्तु साहित्य के प्रचार से उनकी आँखें खुलीं। उन्हें मालूम हुआ कि प्रचलित धर्म सच्चा नहीं है, बाइबिल के अनुसार नहीं है, अतः लोगों ने धार्मिक दोषों पर आक्रमण करना आरम्भ कर दिया।

इन कारणों से प्रत्यक्ष था कि किसी दिन बड़ा धार्मिक विप्लव होगा। इंगलैण्ड के वाइक्लिफ़ तथा बोहेमिया के जॉन हस तथा कई अन्य मनुष्यों ने सुधार के प्रयत्न किये थे, परन्तु वे उचित समय के पहले होने के कारण असफल रहे, परन्तु उनका कार्य और हस का बलिदान व्यर्थ न हुआ। आगे के लिये उनके प्रयत्नों से मार्ग बहुत साफ़ हो गया।

जर्मनी में रिफार्मेशन—इस आन्दोलन ने जर्मनी में नया रूप धारण किया, क्योंकि कैथोलिक मत से जर्मनी को बहुत अधिक हानि हुई थी। जर्मनी किसी ऐसे आन्दोलन के लिये उत्सुक था जो एक साथ ही धार्मिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय हो। पादरियों के दुर्गुणों से धार्मिक आन्दोलन हुआ, किसानों की दुर्दशा से सामाजिक असन्तोष बढ़ा, पोप के अन्य राज्यों में हस्त-क्षेप करने से राष्ट्रीय भावों का भी उदय हो गया। इस भाँति तीनों कारण मिल गये। समय ने मनुष्य उत्पन्न किया, वह मनुष्य मार्टिन लूथर था।

लूथर सन् १४८३ में एक किसान वंश में उत्पन्न हुआ था। उस का पिता चाहता था कि वह कानून पढ़कर वकील बने। परन्तु उसका चित्त धर्म की ओर अधिक लगता था। आरंभ से ही उसके मन में धार्मिक शङ्कायें उत्पन्न होने लगीं अतः वह आग-

स्टाइन नामक साधु के समाज में शामिल हो गया तथा कुछ दिन तक बाइबिल तथा सन्त आगस्टाइन के लेख पढ़े पर उसे सन्तोष न हुआ अतः वह अपने एक मित्र, सेक्सनी के एलेक्टर (राजा) के कहने पर विटनवर्ग विश्वविद्यालय में अध्यात्मविद्या का प्रोफ़ेसर हो गया। यहाँ साहित्य, धर्म, वेदान्त तथा कानून की शिक्षा दी जाती थी। इस समय कोई ऐसी घटना नहीं हुई थी जिससे यह प्रकट हो कि यह मनुष्य यूरोप में हलचल मचा देगा।

सन् १५१० में उसने रोम की यात्रा की और पोप की बुराइयों को अपनी आँखों से देखकर उसने उन पर आक्रमण करना आरंभ किया। भाषण-शक्ति के प्रभाव से वह शीघ्र ही प्रसिद्ध होगया।

उस समय पोप ने यूरोप में एक यह भी नियम चला रक्खा था कि यदि कोई मनुष्य पाप से छुटकारा पाना चाहे तो पोप को कुछ भेंट दे, वे उसे ईश्वर से क्षमा करा देंगे। वल्कि अधिक रुपया देने पर उनके मित्रों तथा सम्बन्धियों के भी पाप क्षमा करा दिये जाते थे। लोगों को इसमें विश्वास था, अतः पोप ने खूब रुपया जमा कर लिया। ऐसे क्षमापत्र बाज़ारों में सरासर बेचे जाने लगे थे। टिटज़िल नामक एक पादरी ऐसे क्षमापत्र (इंडलजैंसेस) बेचता हुआ विटनवर्ग भी पहुँचा। लूथर उसे देख कर बड़ा क्रुद्ध हुआ और उसने ९५ लेख इस प्रथा के विरुद्ध लिखकर विटनवर्ग के गिरजे के द्वार पर चिपकाये। उस समय की प्रथा के अनुसार यह एक प्रकार की ललकार थी कि यदि कोई उन्हें ग़लत समझता हो तो चिपकानेवाले से आकर बहस करे। यह सन् १५१७ इतिहास में प्रसिद्ध है क्योंकि वहीं से पोप तथा

लूथर का झगड़ा आरंभ होता है। पोप लियो दशम ने पहले तो कुछ परवाह न की। लूथर को धमकाया पर जब उसे दृढ़ देखा तो एक आज्ञापत्र (बुल) निकाल कर उसे धर्म से बहिष्कृत कर दिया। लूथर ने इसके जवाब में उस आज्ञापत्र को बीच बाज़ार में खड़े होकर जला दिया। यह घटना १५ जून सन् १५२० ई० में हुई।

वर्म्स की सभा में लूथर—झगड़ा अधिक बढ़ता देखकर सम्राट् चार्ल्स पंचम ने हस्तक्षेप किया। वर्म्स नामक स्थान पर सभा करके उसने लूथर को उसमें बुलवाया और रक्षा का वायदा किया। लूथर के साथियों ने उसे जॉन हस के दुर्भाग्य की याद दिलाई परन्तु उसने कहा—मैं कानून के अनुसार वहाँ बुलवाया गया हूँ, तोभी मैं नहीं डरता, यदि वहाँ इतने भूत भी हों जितनी कि उस छत में ईंटें हैं। उसकी दृढ़ता तथा वीरता उसकी सफलता में बहुत सहायक हुई। बहुत से मित्र भी उसके साथ गये। कुछ लोगों ने उसे समझाया भी कि अबतक जो कुछ उसने किया है उसके लिये सम्राट् से क्षमा माँगकर अब वह कार्य न करे। सम्राट् ने भी लूथर से यही कहा परन्तु उसने ऐसा करने से साफ़ इनकार कर दिया जब तक कि धर्मपुस्तक में उसे अपने विरुद्ध प्रमाण न मिलें अथवा कोई उसे उसकी गलती न समझादे। उसने अपनी आत्मा के विरुद्ध कार्य करने से इनकार कर दिया।

इस पर लूथर कानून की रक्षा से बाहर कर दिया गया जिसका अर्थ यह था कि चाहे कोई उसे ठोंक पीट सकता था, मार डाल सकता था पर कानून उसके लिये कुछ न करेगा। उसकी सब किताबें भी नष्ट कर दी गईं।

अब अधिकांश जर्मनी की उसके साथ सहानुभूति थी। उसके मित्रों को—जिनमें सेक्सनी का ड्यूक भी था—उसकी रक्षा के लिये चिन्ता हुई। एक दिन जब लूथर वर्म्स से लौट कर घोड़े पर अपने घर वापिस जा रहा था तो रात के अँधेरे में सौ नक़ाब-पोश सैनिक उसे उठा कर ले गये। जिन लोगों ने यह समाचार सुना उन्होंने समझा कि लूथर मरवा डाला गया। परन्तु वे सिपाही सेक्सनी के ड्यूक द्वारा भेजे गये थे, जिससे वह लूथर को अपने संरक्षण में रक्खे और शत्रुओं द्वारा उसकी जान जाने से बचावे। इस भाँति उसे छिपा कर वार्टवर्ग नामक किले में रक्खा गया जहाँ पर वह अपनी प्रान्तिक गँवारू भाषा में—जो सर्वसाधारण की भाषा थी—बाइबिल का अनुवाद करता रहा और वहाँ से छूटते ही उसने उसका खूब प्रचार किया।

सम्राट् चार्ल्स धर्म में कट्टर न था पर राजनीतिक कारणों से ही वह लूथर के विरुद्ध हुआ था। उसे डर था कि लूथर के उपदेश से कहीं जर्मनी आदि देश साम्राज्य से अलग न हो जायँ। फिर फ्रांसिस से युद्ध करने के लिये पोप की भी आवश्यकता थी, अतः पोप को प्रसन्न करने के लिये भी उसने लूथर के विरुद्ध कार्य किया। परन्तु फिर भी अन्य कई झगड़ों के कारण उसे इतना अवकाश न मिला जिससे वह लूथर की ओर पूरा ध्यान देता। लूथर का मत इस कारण जर्मनी में वेग से बढ़ता गया और थोड़े ही काल में यूरोप के कई भागों में भी उसकी लहर दौड़ गई।

इसके अतिरिक्त जर्मनी में इस मत के शीघ्र प्रचार के और भी कई कारण थे, पहले तो लूथर की सूरत शक्ल ही रोबीली

थी, फिर उसमें वक्तृत्त्व तथा अपने अनुयायियों को अपना मत स्वीकार कराने की अद्भुत शक्ति थी। वह बड़ा साहसी तथा दृढ़ था। जो उसे देखता अथवा उससे बात करता वही उसके मत को मान लेता था। उसके अनुयायी समझने लगे कि धर्म का सच्चा रास्ता, जो अब तक कैथोलिक धर्म के अन्ध-विश्वासों तथा दुर्गुणों के कारण छिपा हुआ था, अब लूथर द्वारा उन्हें मालूम हुआ है।

फिर जैसा कि हम देख चुके हैं कि पोपों के लोभ तथा दुर्गुणों के कारण उन पर से लोगों की श्रद्धा हटती जाती थी। अतः जब नया धर्म प्रकट हुआ और उसकी सचाई के प्रमाण के लिये बाइबिल सामने रक्खी गई तो लोगों ने उसे सहर्ष स्वीकार किया।

एक कारण और भी था। अब तक सब धार्मिक पुस्तकें लैटिन भाषा में थीं, जिसे अब सर्वसाधारण न समझते थे परन्तु लूथर ने अपने भजन, उपदेश व ग्रन्थ आदि सब प्रान्तीय भाषा में लिखे जो सर्वसाधारण में बोली जाती थी। इससे धार्मिक बातों का ज्ञान सबके लिये सुलभ हो गया। यह भी सफलता का एक गूढ़ रहस्य है। भारत में शंकराचार्य, कबीर, तुलसीदास तथा दयानन्द आदि ने संस्कृत को छोड़कर जनता की बोलचाल की भाषा में उपदेश दिये और वे सफल हुए।

एक अन्तिम कारण यह भी था कि बहुत लोगों ने इसे विदेशियों के विरुद्ध राष्ट्रीय आन्दोलन समझा क्योंकि वहाँ चार्ल्स स्पेन का होने के कारण विदेशी समझा जाता था तथा पोप इटली का होने के कारण नापसन्द किया जाता था। दूसरी ओर लूथर

उन्हीं की जाति का था तथा उसका कहना था 'जर्मनी जर्मन लोगों के लिये' होना चाहिये।

जर्मनी में अशान्ति—इसी समय एक और आन्दोलन खड़ा हुआ जिसने इसके प्रचार में सहायता दी। जर्मनी के छोटे सरदारों और रईसों ने अपने अधिकार बढ़वाने के लिये विद्रोह किया परन्तु वह दव गया। फिर किसान लोगों ने दूसरा विद्रोह खड़ा किया। इन लोगों की दशा बहुत खराब थी। वे जमींदारों के गुलामों के समान होते थे और उनसे कई-प्रकार के कर लिये जाते थे। इन्हीं को दूर करने के लिये उन्होंने विद्रोह किया। जोश में आकर इन्होंने वड़े २ क्रूर कर्म कर डाले। लूथर ने यह समझकर कि इन विद्रोहों से कहीं उसके धर्म में धव्वा न लगे, उन्हें दवाने के लिये राजाओं से प्रार्थना की जिस पर कड़ाई से यह विद्रोह भी दवा दिया गया। इससे उनकी दशा और भी बुरी हो गई। यद्यपि ये किसान लूथर के धर्म के जोश में आकर और उसी की ओर से लड़े थे और उन्होंने लूथर से सहायता भी माँगी थी तथापि लूथर ने राजाओं से उन्हें क्रूरता के साथ दबवा दिया। इसके लिये कुछ इतिहास-लेखक उसे दोप देते हैं परन्तु उसने यह कार्य अपने धर्म को पवित्र तथा शान्त वनाये रखने के लिये किया। उसे युद्ध प्रिय न था, तो भी इससे लूथर की सर्वप्रियता अवश्य कम हो गई।

स्पायर की सभा—जब तक चार्ल्स झगड़ों में लगा रहा तब तक तो उसने इधर ध्यान न दिया परन्तु जब उसने सन् १४२५ में फ्रांसिस को क़ैद करके मन चाही सन्धि कर ली तब उसने इधर ध्यान दिया। दूसरे वर्ष स्पायर स्थान पर फिर सभा

बुलाई गई जिसमें निश्चय हुआ कि प्रत्येक राजा को अधिकार है कि वह अपने राज्य में चाहे कोई धर्म माने । इस भाँति नये धर्म में भी सहनशीलता स्वीकार की गई ।

इसी समय तुर्क लोग सलीम के शासन में बहुत प्रबल हो गये थे । सलीम की क्रूरता देखकर स्वयं तुर्क लोग भी काँपते थे । उस शेर ने एक एक छलांग में सीरिया, अरब और मिश्र को दाब लिया था । ईरान को भी हराकर अब उसने सारी शक्ति ईसाइयों के विरुद्ध लगाने का विचार किया पर वह शीघ्र ही मर गया । उसके बाद सन् १५२१ में सुलेमान राजा हुआ । वह आष्ट्रिया की राजधानी वियाना में घेरा डालने गया परन्तु चार्ल्स पंचम ने उसे हरा दिया । इधर से निवृत्त होकर सन् १५२९ में स्पायर स्थान पर दूसरी सभा बुलाई गई । इसने पहली सभा के कार्य को रद्दी कर किया और लूथर के विरुद्ध कार्य किया । लूथर के अनुयायियों ने इस पर अपना एक अलग घोषणापत्र निकाला 'हम सभा के बहुमत का विरोध करते हैं, हम आप से सहमत नहीं हो सकते तथा इस सभा के कार्य को रद्द समझते हैं ।' इस प्रकार विरोध (प्रोटेस्ट) करने के कारण इस समय से लूथर के अनुयायी प्रोटेस्टैण्ट कहलाने लगे ।

आग्सवर्ग का स्वीकृति पत्र—(कन्फेशन आफ़ ऑग्सवर्ग) सन् १५३० में फिर कई दलों की एक सभा बुलाई गई और प्रोटेस्टैण्ट लोगों से कहा गया कि जो कुछ उन्हें कहना है ज़बानी सुनावें । वे चाहते थे कि हमारा दल और दलों से—काल्विन, ज़्विंगली आदि के—अलग समझा जावे । जो जो बातें वे चाहते थे चार्ल्स को उन्होंने लिख कर दीं परन्तु उसने उन्हें अस्वीकृत

कर दिया और उन लोगों को दण्ड देने की धमकी दी। इन लोगों में कुछ छोटे राजा व रईस भी शामिल थे। धमकी से दबने के बजाय उन्होंने हथियारों का सहारा लिया। मलकल्डी नामक स्थान पर इकट्ठे होकर उन्होंने एक संघ बनाया तथा युद्ध की तैयारी की! तुर्कों की बढ़ती से कुछ काल के लिये युद्ध रुक गया। चार्ल्स ने उन लोगों से ट्रेण्ट नामक स्थान पर एक सभा में आकर समझौता करने को कहा परन्तु उन्होंने इनकार कर दिया। इस पर चार्ल्स ने उनके विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। इसी साल लूथर की मृत्यु हो गई और इस भाँति वह अपने सामने धर्म के लिये युद्ध देखने से बच गया जिससे वह बहुत डरता था (सन् १५४५ ई०)।

मलकल्डी का युद्ध—सेक्सनी के प्रोटेस्टैण्ट राजा का भतीजा मारिस चार्ल्स की ओर मिल गया, क्योंकि वह स्वयं वहाँ का राजा होना चाहता था। प्रोटेस्टैण्ट लोग एल्ब नदी पर महलबर्ग स्थान पर हरा दिये गये। सेक्सनी का राजा क़ैद कर लिया गया और मारिस को वहाँ बिठाया गया।

अब लोगों को चार्ल्स से भय हुआ। पोप ने उसका साथ छोड़ दिया। चार्ल्स ने अब दोनों धर्मों को कुछ रियायतें दीं परंतु जर्मनी में अधिकांश उसका हुक्म स्वीकार नहीं किया गया। कैथोलिक रियासतें प्रोटेस्टैण्ट लोगों को धार्मिक स्वतन्त्रता नहीं दे सकती थीं और प्रोटेस्टैण्ट रियासतें अपने राज्य में फिर कैथोलिक गिर्जे नहीं बनने देना चाहती थीं जो एक दफा गिराये जा चुके थे। इससे दोनों दल अप्रसन्न रहे। चार्ल्स ने शांति के लिये स्पेन की सेना जर्मनी में रख दी थी इससे जर्मन लोग अप्रसन्न थे। इस भाँति सब लोगों को चार्ल्स के विरुद्ध देखकर मारिस ने भी

उसका साथ छोड़ दिया; क्योंकि उसे उतने देश नहीं मिले जितने की उसे उम्मीद थी तथा चार्ल्स की जर्मनी के प्रति नीति से भी उसे भय हुआ। अतः उसने प्रोटेस्टैण्ट लोगों से फिर मेल कर लिया।

यहाँ से चार्ल्स के लिये दूसरा युग आरंभ होता है। अब तक वह अनेक लड़ाइयों में विजय पा चुका था और बूढ़ा हो गया था। सन् १५५२ में मारिस ने फ्रांस के राजा हेनरी द्वितीय—जो फ्रांसिस प्रथम गद्दी पर बैठा—के साथ चार्ल्स पर चढ़ाई की। बूढ़े सम्राट् को आधी रात में बरसते हुए पानी में लड़ने को तैयार होना पड़ा परन्तु वह हरा दिया गया इससे उसे बड़ी निराशा हुई। उसने युद्धों की ओर से चित्त हटा लिया। उसके भाई फर्डिनेन्ड ने एक क्षणिक संधि कर ली जो सन् १५५५ में आग्सबर्ग की संधि के नाम से दुहराई गई। यह निश्चय हुआ कि जर्मनी की प्रत्येक रियासत का राजा अपनी रियासत का कोई धर्म निश्चित कर सकता है जिसको वह समझता है कि सम्राट् और परमेश्वर को जवाब देने में वह समर्थ होगा। यह भी निश्चित हुआ कि यदि अब कोई पुराना धर्म छोड़कर नया धर्म स्वीकार करेगा तो उसे पहले के सब अधिकार, पद, पृथ्वी आदि छोड़ देनी पड़ेगी तथा सन् १५५२ के पहले जो पृथ्वी प्रोटेस्टेण्ट लोगों के हाथ में थी वह उन्हीं के पास रहेगी।

परन्तु यह सन्धि भी स्थायी न हो सकी। उसमें कई दोष थे। पहले तो उसके प्रत्येक राजा को अपने राज्य का धर्म निश्चित करने की आज्ञा दी, प्रत्येक व्यक्ति को धार्मिक स्वतंत्रा न दी गई अतः कोई राजा अपनी प्रजा को उसकी इच्छा के विरुद्ध धर्म स्वीकार करने को बाध्य कर सकता था। दूसरी शर्त अर्थात्

नया धर्म स्वीकार करने वाले को पहली जायदाद छोड़ देनी पड़ेगी, कैथोलिक मत के अनुकूल थी अतः यही शर्त आगे चल कर जर्मनी में तीस वर्षीय युद्ध का कारण हुई। तीसरे उसने केवल लूथर के मत को स्वतंत्रता दी परन्तु काल्विन का मत जो इस समय कई जगह फैल रहा था, बिलकुल छोड़ दिया गया परन्तु फिर भी इस संधि ने थोड़े काल के लिये शांति स्थापित की।

पाँचवाँ अध्याय

यूरोप में संशोधन का प्रचार

स्केन्डीनेविया—यह प्रायःद्वीप यूरोप के उत्तर-पश्चिम में है तथा इसमें स्वीडन, नार्वे और डेनमार्क तीन देश शामिल हैं। बहुत समय से यह देश एक राजा के अधीन चले आ रहे थे। यहाँ पर रईसों की बढ़ी हुई शक्ति ने राजा की शक्ति को परिमित कर दिया था अतः वहाँ के राजा क्रिश्चियन द्वितीय ने जर्मनी के प्रोटैस्टेन्ट लोगों से मित्रता की। डेनमार्क में लूथर-धर्म के शिक्षक बुलवाये गये और वहाँ नया मत स्थापित हो गया। क्रिश्चियन ने धावा करके स्वीडन जीत लिया था जो गृह-कलह के कारण निर्बल हो रहा था, अब वहाँ भी उसने नया मत फैलाया पर वहाँ के कुछ लोगों ने ट्रौल के लाट पादरी को निकाल दिया। इस पर क्रुद्ध होकर क्रिश्चियन ने एक कमीशन द्वारा इन लोगों की जाँच करा के उन सब लोगों को फाँसी पर चढ़वा दिया जिन्होंने आर्कबिशप (लाट पादरी) को भगाने में भाग लिया था। यह 'स्टॉकहोम का रक्त स्नान' कहलाता है। इससे स्वीडन में राष्ट्री-

यता की लहर फैल गई। क्रिश्चियन डेनमार्क का था अतः वह स्वीडन में विदेशी समझा जाता था और गस्टेवसवासा के नेतृत्व में विदेशियों को निकालने के लिये एक दल स्थापित हुआ। इन्हें धन की आवश्यकता हुई। गिरजों में बहुत धन था अतः ये लोग भी गिरजेघरों का धन लूटने के लिये लूथर के अनुयायी बन गये। इस भाँति डेनमार्क और स्वीडन दोनों देशों में प्रोटेस्टेन्ट मत स्थापित हो गया।

इङ्गलैण्ड और स्काटलैण्ड—हम देख चुके हैं कि यहाँ बहुत दिनों से पोप के विरुद्ध विचार उठ रहे थे, इंगलैंड के सुधारक जान कॉलट और सर टामस मोर गिरजे की बुराइयाँ तो मिटाना चाहते थे, परन्तु पोप से बिलकुल सम्बन्ध तोड़ना न चाहते थे।

इंगलैण्ड में धर्म-परिवर्त्तन एक राजा द्वारा तथा व्यक्तिगत कारणों से किया गया। यहाँ प्रोटेस्टैन्ट मत स्वीकार नहीं किया गया था, पर केवल पोप का प्रभुत्व हटाने के लिये कैथोलिक धर्म छोड़ दिया गया, हमें देखना चाहिये कि यह किस प्रकार हुआ।

हेनरी सप्तम का पुत्र हेनरी अष्टम जो १५०९ में गद्दी पर बैठा पहले पोप से मित्रता रखता था। जब लूथर ने पोप पर आक्रमण किया तो हेनरी अष्टम ने एक पुस्तक प्रकाशित की, जिसमें नये मत का विरोध था तथा कैथोलिक धर्म तथा पोप की प्रशंसा थी। पोप ने प्रसन्न होकर झट हेनरी को 'धर्म-संरक्षक' की उपाधि दे दी, परन्तु थोड़े ही दिन बाद एक ऐसा कारण उपस्थित हुआ जिसने इन दोनों की मित्रता पर पानी फेर दिया।

बात यह थी कि हेनरी अष्टम को कैथोराइन (स्पेन के सम्राट्

मेग्जिमिलियन की पुत्री जो पहले उसके बड़े भाई आर्थर को व्याही गई थी और जो आर्थर की मृत्यु के वाद हेनरी की रानी हुई) से विवाह किये बीस वर्ष हो गये थे, अतः हेनरी उसके साथ से उकता गया, दूसरे उसके कोई पुत्र भी उत्पन्न नहीं हुआ। अतः अव उसने कैथेराइन को तलाक़ देने का कोई उपाय सोचा। इसका असली कारण यह था कि वह एनवुलाइन नामक एक सुन्दर स्त्री के प्रेम में फँस गया था, परन्तु उसे व्याहने के लिये यह आवश्यक था कि वह अपनी पहली स्त्री से छुटकारा पावे, अतः हेनरी ने पोप से उसे छोड़ने की आज्ञा माँगी; यह वही समय था जव चार्ल्स ने इटली में घुस कर रोम नगर पर घेरा डाल लिया था। कैथेराइन सम्राट् चार्ल्स की मौसी थी अतः पोप उसके विरुद्ध आज्ञा देने से डरता था, पर उसकी वड़ी आफ़त थी। यदि कैथराइन को तलाक़ किये जाने की आज्ञा देता है तो सम्राट् चार्ल्स सिर पर ही मौजूद था, वह खवर लेता और यदि उसके तलाक़ की आज्ञा नहीं देता तो उसका एक मात्र मित्र हेनरी भी उससे नाराज़ हुआ जाता है। अतः उसने इस मामले को टालना चाहा। हेनरी के ज़ोर देने पर पोप ने दो पुरोहित इसकी जाँच करने के लिये नियत किये जिनमें एक हेनरी का मंत्री वुलजी था। वुलजी को हेनरी ने ही इतना ऊँचा उठाया था, अतः उसे पूरा भरोसा था कि निर्णय उसी के पक्ष में होगा, परन्तु वहुत दिन टालने के वाद पोप ने दोनों की सलाह से तलाक के विरुद्ध निर्णय दिया। हेनरी ने अति क्रुद्ध होकर वुलजी को निकाल दिया और पार्लमेंट से पोप के विरुद्ध कई कानून वनवाये। हेनरी शक्तिमान् शासक था, अतः पार्लमेंट से जो चाहता था, करा

सकता था। अब तक धार्मिक झगड़ों की अपील अन्त में पोप के पास निर्णय के लिये जाती थी तथा इंगलैण्ड में जब कोई पादरी लाटपादरी नियत होता था तो पोप को नजराना भेजना पड़ता था। हेनरी के कानून द्वारा यह सब बन्द करा दिया और स्वयं धार्मिक प्रधान भी बन गया। उसने क्रेमर को इंगलैंड के सब से बड़े गिर्जे केंटरबरी का लाटपादरी बनाया और उसने सन् १५३३ में हेनरी को तलाक की आज्ञा दे दी।

फिर कानूनों द्वारा मूर्त्तियाँ तोड़ी गईं, मंदिरों की जायदाद ज़ब्त की गई, तीर्थ-यात्रा बन्द की गई और लेटिन के स्थान में सब कामों के लिये अंग्रेज़ी भाषा जारी की गई, फिर भी हेनरी बिलकुल प्रोटेस्टैंट न हुआ, उसने दोनों के बीच का स्वतंत्र मत इंगलैंड में चलाया था। उसने बहुत से प्रोटेस्टैण्ट लोगों को मरवा डाला क्योंकि उन्होंने उसकी आज्ञायें न मानी, और बहुत से कैथोलिक लोग इसलिये मारे गये कि उन्होंने पोप के स्थान में हेनरी को धार्मिक गुरु मानना अस्वीकार किया। इस भाँति इंगलैण्ड में दोनों मतों से भिन्न एक स्वतंत्र मतकी नींव, हेनरी अष्टम ने डाली।

हेनरी के बाद एडवर्ड चतुर्थ गद्दी पर बैठा; परन्तु वह बच्चा था। अतः शासन की बागडोर उसके संरक्षकों के हाथ में रही। उनके समय में इंगलैण्ड ने प्रोटेस्टैण्ट मत स्वीकार कर लिया। एडवर्ड, हेनरी की तीसरी स्त्री जेन सीमोर का पुत्र था।

एडवर्ड के बाद हेनरी के नियत किये हुए उत्तराधिकारक्रम के अनुसार, उसकी पहिली स्त्री कैथेराइन की पुत्री मेरी गद्दी पर बैठी। वह कैथोलिक मत की थी अतः उसने इंगलैण्ड में फिर

कैथोलिक मत स्थापित करना चाहा। पहले के कानून रद्दी करके नये कानून वनाये गये, जिनमें पोप की प्रभुता को स्वीकार किया गया। परन्तु अधिकांश लोग इस समय तक प्रोटेस्टैन्ट हो चुके थे। अतः उन्होंने फिर धर्म-परिवर्तन करने से इनकार किया। इस पर मेरी ने वड़ी क्रूरता से काम लिया। उसकी आज्ञा न मानने वाले लोग पकड़ पकड़ कर ज़िन्दा जलाये जाने लगे; परन्तु वे लोग धर्म में पक्के थे। धर्म त्यागने के वजाय उन्होंने प्राण दे देना अच्छा समझा। इस प्रकार असंख्य आत्मायें धर्म की वलिवेदी पर चढ़ाई गईं। उनका धर्म-प्रेम सराहनीय था। मेरी की माँ को तलाक की आज्ञा देनेवाले क्रेमरसाहव भी अभी ज़िन्दा थे। मेरी को उनकी याद भूली न थी। वे भी सामने बुलवाये गये और अग्निदेव के समर्पण कर दिये गये; परन्तु यह दमन भी सफल न हुआ। दमन से लोग दवने के वजाय और उभरते हैं— प्रोटेस्टैण्ट मत और ज़ोर से वढ़ा।

मेरी के वाद सन् १५५६ में प्रसिद्ध रानी एलिज़ावेथ जो हेनरी अष्टम् की दूसरी स्त्री एन वुलाइन की लड़की थी, गद्दी पर वैठी। धार्मिक मामले में उसने देखा कि न तो हेनरी के समय में प्रोटेस्टैन्ट मत ही सफल हुआ और न मेरी के समय कैथोलिक मत ही। अतः उसने वीच का रास्ता स्वीकार किया। इससे दोनों दलों के अधिकांश आदमी सन्तुष्ट रहे, यद्यपि दोनों दलों के कट्टर लोग गड़वड़ करते रहे। एलिज़ावेथ के राज्य में देश में शान्ति रही। इसका कारण यह था कि एडवर्ड और मेरी के समय के अत्याचारों से लोग घवड़ा गये। अतः उन्होंने एलिज़वेथ की नीति को अच्छा समझा। उसने धर्म के लिये किसी को प्राण-

दण्ड न दिया वल्कि उसके स्थान में गिरजे में उपस्थित न होने वाले लोगों पर कुछ जुर्माना नियत कर दिया। उसके स्वतंत्र मत का इंगलैण्ड में खूब प्रचार हुआ और इसी समय इंगलैण्ड के स्वतंत्र गिरजे की स्थापना हुई। इसके समय में देश की हर प्रकार की उन्नति हुई। स्पेन की एक वड़ी जलसेना को इसने हरा दिया। इसका राज्य इंगलैण्ड में वहुत प्रसिद्ध है। यह रानी अकवर के समकालीन थी। सन् १६०५ में इसकी मृत्यु हुई।

स्काटलैण्ड—यहाँ पर नये धर्म का प्रचार करने वाला जॉन नाक्स नामक एक निर्भय और साहसी नेता था। स्कॉटलैण्ड और फ्रांस में वहुत दिनों से मित्रता चली आती थी। इस समय यहाँ की रानी मेरी थी। फ्रांसवालों का वहाँ वहुत प्रभाव था। स्कॉटलैण्ड के सरदार इसे रोकना चाहते थे और गिरजों की सम्पत्ति पर अधिकार करना चाहते थे। रानी मेरी ने फ्रांसीसी लोगों की मदद चाही। इस पर सरदारों ने विद्रोह खड़ा कर दिया। अन्त में एलिजावेथ की सहायता भी सरदारों को मिली। फ्रांसीसियों को स्कॉटलैण्ड खाली करना पड़ा। स्कॉटलैण्ड के लोग अव फ्रांसीसियों को वुरा समझने लगे और इसी कारण उनके कैथोलिक धर्म को भी। इस भाँति फ्रांसीसी लोगों के कारण राष्ट्रीयता के विचारों ने स्काटलैण्ड में प्रोटेस्टैण्ट मत का प्रचार किया।

स्वीटज़रलैण्ड—यहाँ पर धर्म में परिवर्तन स्वतंत्र रीति से ज़्विंगली नामक एक पादरी के प्रयत्नों से हुआ। वह धार्मिक मामलों में पूर्ण स्वतंत्रता का पक्षपाती था। उसका मत भी लूथर से मिलता था परन्तु उसका धर्म विशेष प्रजासत्तात्मक था अर्थात् वह धर्म में सव वर्गों तथा वर्णों की समानता स्थापित करना चाहता था।

परन्तु स्वीटज़रलैण्ड के कुछ प्रान्तों ने उसका मत स्वीकार न किया और दोनों दलों में युद्ध हो गया, जिसमें ज़्विंगली मारा गया और उसका पक्ष हार गया। फिर भी प्रत्येक प्रान्त को जर्मनी के समान अपना मत निश्चय करने की स्वतंत्रता मिल गई। इस भांति यहाँ भी दो दल हो गये।

काल्विनमत—इसी समय साम्राज्य के एक अंधेरे कोने में एक और सुधारक का जन्म हो गया था। काल्विन फ्रांस का रहने वाला था। पहले वह पादरी रहा, फिर कानून पढ़ने गया। विद्यार्थी-जीवन में ही उसे लूथर के धर्म की शिक्षा मिली तथा वह इस नवीन मत का ज़ोरदार समर्थक हुआ, जिसके कारण वह फ्रांस से निकाल दिया गया और जर्मनी और स्वीज़रलैण्ड में रहने लगा। सन् १५३६ में उसने 'ईसाई धर्म के सिद्धान्त' नामक पुस्तक लिखी, जो प्रोटेस्टैण्ट मत के साहित्य में पहली पुस्तक थी। स्वीज़रलैण्ड में जेनेवा स्थान पर वह वहुत रहा तथा वहाँ उसका प्रभाव भी खूब पड़ा। वहाँ के लोग पहले से ही कैथोलिक-धर्म से असन्तुष्ट थे। अतः जेनेवा इस नये मत का धार्मिक केन्द्र वन गया। उसका मत लूथर के मत से कई वातों में भिन्न है। काल्विन का सिद्धान्त है कि प्रत्येक वस्तु परमात्मा की आज्ञानुसार होती है। मनुष्य को अधिकार नहीं है कि वह उसे मिटा सके तथा जन्म होते ही मनुष्य का भाग्य वन जाता है। वह धर्म को राज्य से स्वतंत्र रखना चाहता था, लूथर अथवा हेनरी के समान राज नीति में मिश्रित नहीं, क्योंकि इससे उसे हानि की आशंका थी। धार्मिक नियमों की पावन्दी की ओर उसने विशेष ध्यान दिया। लूथर के मत के विरोधियों का कहना था कि लूथर ने धार्मिक

बन्धनों को ढीला कर दिया परन्तु काल्विन-मत के लिये ऐसा नहीं कहा जा सकता था।

काल्विन ने बाइबिल का फ्रेञ्च भाषा में अनुवाद किया जिसका बहुत प्रचार हुआ। उसका मत प्रेस्बीटेरियन मत कहलाता है। इस धर्म के लोग बड़े साहसी, दृढ़ तथा भक्त हुए। उसका धर्म भी प्रजासत्तक सिद्धान्त पर था। इस धर्म से भी यूरोप में बहुत अशांति फैली। इसी धर्म ने नीदरलैण्ड में स्पेन के विरुद्ध विद्रोह कराके वहाँ स्वतंत्रता स्थापित की, इंगलैंड में प्योरिटन लोग उत्पन्न किये जिन्होंने एलिज़ाबेथ के बाद गद्दी पर बैठनेवाले स्टुअर्ट राजाओं की कड़ाइयों का वीरता से सामना किया और फ्रांस में ह्यूजीनोट लोगों को राजा के विरुद्ध करके बहुत दिनों तक युद्ध जारी रक्खा। इसके मत का प्रचार फ्रांस, नीदरलैण्ड, इंगलैण्ड और स्काटलैण्ड आदि अनेक देशों में हुआ।

काउन्टर रिफ़ार्मेशन—जिस समय प्रोटेस्टैंट मत इस प्रकार उन्नति कर रहा था, उसी समय कैथोलिक धर्म में भी बड़ा परिवर्तन हुआ जो काउन्टर-रिफ़ार्मेशन के नाम से प्रसिद्ध है। अब पोपों के आचरण बदलने लगे थे। सोलहवीं शताब्दी के पोपों ने रिनासेंस तथा युरोपीय राजनीति में बहुत भाग लिया। सम्राट् चार्ल्स पंचम से बिगाड़ हो जाने के कारण, पोप क्लेमेण्ट सप्तम, प्रोटेस्टैण्ट लोगों से सहानुभूति रखता था और उसे उनकी ओर से चिन्ता भी न थी। परन्तु जब धीरे धीरे उसीके सामने तीन-चौथाई जर्मनी रोम से अलग हो गया, फ्रांस और इंगलैण्ड में नये मत का प्रभाव दिखाई देने लगा, इंगलैण्ड ने भी रोम से सम्बन्ध तोड़ दिया, डेनमार्क, स्वीडन और नारवे ने भी लूथर का मत

स्वीकार कर लिया तथा पोलैण्ड, वोहेमिया और स्वयं इटली में भी जब नये मत का प्रचार होता मालूम पड़ा तो एक दम पोप की आँखें खुलीं, उसके आश्चर्य की सीमा न रही। यह सब देख कर पोप तथा कैथोलिक-धर्म के अनुयायियों को चिन्ता हुई कि हमारा मत तो अब जड़ मूल से ही नष्ट हुआ जाता है, शीघ्र कोई उपाय करना चाहिये। अतः उन्होंने अपने धर्म में जो बुराइयाँ मालूम पड़ीं, उन्हें दूर करने के लिये नियम बनाये, जिसका उद्देश्य यह था कि कैथोलिक-धर्म को सुधरा हुआ देख कर लोग नये धर्म में अब न जायँ तथा उसकी प्रगति रुक जाय।

पोपों का प्रयत्न अपने उद्देश्य को पूरा करने में बहुत कुछ सफल हुआ। इसका कारण यह था कि प्रोटेस्टैन्ट मत में कई ऐसे विभाग थे जो आपस में एक दूसरे से भिन्न तथा विरुद्ध थे। कुछ लोग लूथर का मत मानते थे, कुछ ज्विंगली का और कुछ काल्विन का। अतः कैथोलिक-धर्म में सुधार तथा ऐक्य होने से बहुत लोगों ने फिर उसी को पसन्द किया और दूसरा कारण यह था कि इस समय के पोप सदाचरणशील तथा सुधरे हुए थे। पाल चतुर्थ बहुत नेक, बुद्धिमान् तथा निर्लोभ पोप हुआ। अतः उसके समय में कैथोलिक धर्म ने अपनी गई हुई प्रतिष्ठा फिर बहुत कुछ प्राप्त कर ली।

काउन्टर-रिफार्मेशन के प्रचार के तीन मुख्य साधन थे। पहला साधन ट्रैन्ट की सभा थी जिसकी बैठकें सन् १५४५ से १५६३ तक होती रहीं। चार्ल्स पंचम, एक सर्वदेशीय सभा बुलाकर प्रोटेस्टैण्ट तथा कैथोलिक मतों में समझौता करा देना चाहता था। अतः उसने ट्रैन्ट स्थान पर सभा इकट्ठी की; परन्तु यह सभा समझौता न करा सकी क्योंकि पोप का प्रतिनिधि इस सभा का

सभापति बनाया गया था। उसने लैटिन बाइबिल को ही प्रमाण माना और धार्मिक मामलों में पोप का विशेष अधिकार स्वीकार कराया तथा लूथर का विरोध भी किया। फिर उसने समय २ पर कैथोलिक धर्म में बहुत से सुधार भी किये। धर्म की बुराइयों के कारण ही उसकी अवनति हुई थी। अतः जब उसकी बुराइयाँ दूर की जाने लगीं तब लोगों ने फिर उसे पसन्द किया। कैथोलिक धर्म फिर उन्नत होने लगा; परन्तु फिर भी पश्चिमी युरोप के कुछ भाग को छोड़ कर वह समस्त यूरोप पर प्रभाव न डाल सका।

कैथोलिक मत के प्रचार का दूसरा साधन इनक्विज़िशन नामक एक सभा थी। इसे सन् १५४२ में पोप पाल-तृतीय ने प्रोटेस्टैण्ट लोगों को दबाने तथा दण्ड देने के लिये स्थापित किया। उसका दण्ड, जायदाद की ज़ब्ती तथा प्राण-हरण था। उसने लोगों को ये दण्ड बड़ी क्रूरता से दिये। अतः लोगों का दिल इस सभा की ओर से फिर गया। इसने स्पेन, इटली तथा नीदरलैंड में कार्य किया; परन्तु इससे पोप को बहुत कम लाभ हुआ।

परन्तु इन सब में प्रधान तीसरा साधन था। यह जीसूट लोगों का दल था, जिसे सन् १५३४ में इगनीशस लायला नाम के एक सिपाही ने स्थापित किया था। पहले यह स्पेन की सेना में था; परन्तु एक युद्ध में उसके गहरी चोट आई जिससे वह युद्ध के योग्य न रहा। अब उसने सारी शक्ति धर्म की ओर लगा दी। उसने जरूसलेम की यात्रा की, जहाँ उसे मुसलमानों के विरुद्ध युद्ध करने तथा उनमें अपना धर्म प्रचलित करने की उत्कण्ठा हुई; परन्तु उसने सोचा कि शायद लोग मेरी बात न मानें क्योंकि मैं कुछ अधिक विद्वान् तो हूँ हा नहीं। ऐसा समझ कर वह पेरिस

में जाकर पढ़ने लगा। यहाँ उसे आइगो ज़ेवियर और लेनिज़ आदि मिले जिनसे उसने मित्रता कर ली। फिर उसने इन मित्रों के साथ एक नया दल संघठित किया तथा पोप ने इस दल को प्रोटेस्टैन्ट मत को दबाने की आज्ञा दे दी।

इस दल के प्रधान नियम पवित्रता, ब्रह्मचर्य, दरिद्र दशा में रहना तथा बड़ों की आज्ञा कभी न टालना आदि थे। इनकी वर्दी भी फ़ौजी थी क्योंकि एक सैनिक अफ़सर द्वारा यह दल बनाया गया था। आज्ञापालन के नियम इतने कड़े थे कि यदि उच्च पदाधिकारी आज्ञा दे तो बिना कुछ सवाल जवाब किये उन्हें पृथ्वी के छोर तक फौरन् जाने को तैयार रहना चाहिये। इन्होंने प्रधानतः उपदेशों द्वारा ही इटली, स्पेन, फ्रांस और पोलण्ड से नये धर्म को बिलकुल भगा दिया।

छठवाँ अध्याय

स्पेन की दशा तथा नीदरलैण्ड का विद्रोह

चार्ल्स पंचम के सिंहासन छोड़ने पर उसका पुत्र फ़िलिप द्वितीय सन् १५५६ में स्पेन की गद्दी पर बैठा तथा मिलन, नेपिल्स, नीदरलैण्ड और अमेरिका आदि भी उसी के अधिकार में रहे। इंगलैण्ड की रानी मेरी ने (कैथेराइन की पुत्री, जिसने नये मतवालों को ज़िन्दा जलवाया था) उसके साथ अपना विवाह कर लिया था। अतः इंगलैण्ड पर भी उसका कुछ प्रभाव था और बाद में सन् १५८० में उसके मामा की मृत्यु के बाद पुर्तगाल भी उसे मिल गया।

फ़िलिप अधिक बुद्धिमान् न था। वह घमण्डी, तेज मिजाज़ और धर्म में कट्टर था। वह अपने मंत्रियों पर भी विश्वास न करता था और बड़ा महनती तथा हरएक बात की देखभाल स्वयं करता था। वह कैथोलिक मत का हिमायती तथा नये मतवालों को विद्रोहियों का समाज समझता था। इसीलिये उसने स्पेन में उन्हें दण्ड देने के लिये इनक्विज़िशन बैठाई। वह चाल ढाल तथा व्यवहार में बिलकुल स्पेनिश था। अतः स्पेन से बाहर के देशों में वह विदेशी समझा जाता था।

उसने अपने राज्य में स्वेच्छाचार की नीति से काम लिया। सरदारों का अब वहाँ जोर न रहा तथा म्यूनिस्पैल्टी आदि संस्थायें भी वहाँ न थीं। अतः उसे पूर्ण अधिकार था। उसके मंत्री केवल क्लर्कों के समान थे। सरदारों से उसने सब अधिकार छीन लिये तथा प्रत्येक मामला वह स्वयं तै करता था। देश में धार्मिक एकता स्थापित करने के लिये उसने मूर लोगों को क्रूरता से भगा दिया। इस प्रकार उसके देश से एक उद्योगी तथा समृद्ध जाति चली गई। अमेरिका से सोना चांदी स्पेन में आता था; परन्तु वहाँवाले चतुर न होने से उसे ठीक ठीक काम में न ला सकते थे। अतः उसका एक बड़ा भाग डच लोग जो व्यापार में बड़े दक्ष थे, ले जाते थे। इन कारणों से उस के समय में स्पेन मरणोन्मुख हो गया।

उसकी धार्मिक असहानुभूति तथा उसके सैनिक अफ़सर अल्वा के ड्यूक की क्रूरताओं से नीदरलैंडस् में विद्रोह हुआ जो उसके मरने के बाद तक चलता रहा और उसमें उसके उत्तराधिकारी को वहाँ स्वतंत्रता देनी पड़ी।

विदेशी नीति—उसकी बाहरी नीति में भी उसे पूर्ण असफलता मिली। उसका प्रधान उद्देश्य इंगलैण्ड में नये धर्म की प्रगति को रोकना तथा अंग्रेज़ मल्लाहों द्वारा स्पेन के जहाज़ों को पहुँचाये हुए नुक्सान के लिये एलिज़बेथ को दण्ड देना तथा फ्रांस में प्रोटेस्टैण्ट मत को रोक कर वहाँ अपना प्रभाव स्थापित करना था।

इसके लिये उसने पहले इंगलैण्ड को एक भारी 'शस्त्र सुसज्जित' जलसेना (आरमाडा) भेजी, परंतु वह सेना अशिक्षित होने तथा वायु का वेग प्रतिकूल होने के कारण बुरी तरह हार गई। यह इंगलैण्ड के लिये एक बड़े गौरव की विजय हुई तथा इससे फिलिप को बड़ा धक्का लगा। वह इसी कारण नीदरलैंण्ड का विद्रोह दबाने में भी असफल हुआ। यहाँ से स्पेन का सैनिक महत्व जाता रहा तथा उसका स्थान इंगलैण्ड ने लिया।

उसे फ्रांस से भी युद्ध करना पड़ा। फ्रांस का राजा हेनरी द्वितीय, फिलिप को इटली तथा नीदरलैंण्ड से निकालना चाहता था। परंतु फिलिप ने फ्रांसवालों को हराकर मिलन और नेपिल्स ले लिये। इस भाँति दोनों का इटली के लिये युद्ध बन्द हो गया।

परंतु तीन वर्ष बाद सन् १५६२ में फ्रांस में धार्मिक गृह-कलह आरंभ हो गया। फिलिप ने कैथोलिक लोगों का साथ दिया। आरंभ में उसे सफलता मिली; पर अन्त में जब नेवार के हेनरी ने कैथोलिक मत स्वीकार कर लिया, तो सब लोगों ने उसे फ्रांस का राजा बनाया और फिलिप से किसी ने पूछा भी नहीं।

अमेरिका के व्यापार से स्पेन को इतना लाभ नहीं होता था, जितना लोग समझते थे। सन् १५४५ में पीरू में सोने की खानें मिलीं परंतु सोना स्पेन तक लाने में बड़ा खर्च पड़ता था। राजा को कर स्वरूप उसका पाँचवाँ भाग मिलता था। फिलिप की असफलता का एक कारण यह भी था कि उसके पास फ्रांस, इंगलैण्ड, और हालैंड आदि सब से लड़ने के लिये काफ़ी रुपया नहीं था।

एक ओर फिलिप को अवश्य अच्छी सफलता मिली। इस समय तुर्क लोग जर्मनी की ओर बढ़ रहे थे। उन्हें रोकने के लिये पोप, वेनिस तथा स्पेन ने मिलकर एक सेना फिलिप के अर्धभ्राता ऑष्ट्रिया के डॉन जॉन के नेतृत्व में भेजी। डॉन जॉन बड़ा वीर था और उसने वही जोश अपने सिपाहियों में भी भर दिया। तुर्कों के जहाज़ समुद्र के योग्य न थे। संख्या में कम होने पर भी ईसाइयों ने वीरता से लड़कर सन् १५७१ में यूनान के पास लीपाण्टो की खाड़ी में तुर्क लोगों को पहिली ही लड़ाई में हरा दिया। इससे भूमध्य सागर में तुर्कों की शक्ति सदा के लिये कम हो गई।

परिणाम—उसका विस्तृत राज्य तथा आमदनी के ज़रिये देखने से फिलिप बड़ा बलवान् मालूम पड़ता था परन्तु उसकी नीति ने अन्त में स्पेन की महत्ता का नाश कर दिया। उसने खर्चीले युद्धों में पड़ कर तथा इमारतें बनवाने में सब रुपया खर्च कर दिया और खजाने खाली हो गये। इस भाँति स्पेन की पैदल सेना चतुर तथा शिक्षित होने पर भी ठीक समय पर तनख्वाह न मिलने के कारण असन्तुष्ट रहती थी। इसलिये वह फ्रांस की

अविश्वासी सेना और इङ्गलैण्ड की नई भर्ती की हुई अशिक्षित सेना को भी न हरा सकी ।

इनक्विज़ीशन द्वारा उसने देश की धार्मिक जागृति दबा दी। इस सभा के नियम बड़े विचित्र थे। सभा की दृष्टि में विद्रोही तथा विधर्मी ग़रीब और अमीर समान थे। गिरफ़्तारी बड़ी जल्दी होती थी, जाँच गुप्त रूप से की जाती थी। क़ैदी को यह भी मालूम न पड़ता था कि उसके विरुद्ध क्या अपराध लगाया गया है तथा किस आधार पर। कड़ा कष्ट देकर उनसे अपराध स्वीकार करा लिया जाता था, नहीं तो फ़ौरन अग्नि के समर्पण कर दिया जाता था। यही उसका दण्ड था। इस प्रकार लोगों के विचार न बढ़े जिससे स्पेन सभ्यता में यूरोप से पीछे रह गया।

धार्मिक कट्टरता के कारण उसने मूर लोगों को निकालने का घृणित तथा अनुचित कार्य किया। ये लोग खेती तथा कलाकौशल में बड़े निपुण थे, ज़रा सी सहानुभूति दिखलाने से वे सदा के लिये राजभक्त हो सकते थे, परन्तु फिलिप ने उन पर स्पेन की भाषा तथा पोशाक का बंधन लगाया, ज़रा २ सी बातों के लिये कठोर दण्ड दिये, जिससे बहुत से लोग इधर उधर भाग गये, और स्पेन के कलाकौशल तथा कृषि को बड़ा धक्का पहुँचा।

नीदरलेण्ड्स का विद्रोह

नीदरलैण्ड अथवा लोलेण्ड उस भाग का नाम है जहाँ आज कल हालेण्ड और बेलजियम बसे हुए हैं। नीदरलेण्ड्स का अर्थ है नीची भूमि। यह भाग समुद्र की सतह से नीचे बसा हुआ है अतः इसे नीदरलेण्ड अथवा लोलेण्ड कहते हैं। पहले यह देश बरगंडी के ड्यूक के आधीन था, परन्तु चार्ल्स बहादुर के बाद

उसकी पुत्री मेरी का विवाह सम्राट् मेक्सीमिलियन के साथ होने से यह देश हेप्सवर्ग वंश के हाथ में आया, चार्ल्स पंचम मेक्सीमिलियन का नाती था और उसके बाद गद्दी पर बैठा अतः यह देश भी चार्ल्स को मिला।

यह देश सत्रह सूबों अथवा प्रान्तों में बटा था, जो कि एक दूसरे से स्वतंत्र राज्य थे, सब से सम्बन्ध रखनेवाली बातें एक सभा द्वारा तै की जाती थीं, जिसमें प्रत्येक राज्य के प्रतिनिधि आते थे। इसके अतिरिक्त शासनव्यवस्था, कानून, तथा विशेषाधिकार प्रत्येक राज्य के भिन्न २ थे, जाति तथा भाषा में भी वहाँ भेद था, उत्तरी भाग के लोग ट्यूटोनिक जाति के थे और जर्मन भाषा बोलते थे, दक्षिण के लोग केल्ट जाति के थे और फ्रेंच भाषा बोलते थे, फिर उनमें धार्मिक तथा सामाजिक भी भेद थे। उत्तर के राज्य प्रोटेस्टेण्ट मत के थे जो व्यापार करते थे और समुद्र में मछली पकड़ते थे, दक्षिण के राजों में सरदारों का प्रभुत्त्व था तथा ये लोग कारीगर थे, यहाँ का बन्दरगाह एन्टवर्प बहुत अच्छी जगह बसा था, अतः वह समस्त यूरोप से बड़े जोर से व्यापार करता था। वहाँ पर स्पेन से रत्न, शकर, मसाले, इटली से रेशम व कमख्वाब, इंगलैण्ड से ऊन और वस्त्र आदि आते थे। इंगलैण्ड से उसका बहुत व्यापार था।

चार्ल्स पंचम ने इन सब सूबों को संघठित करने का प्रयत्न किया। सब प्रदेशों के प्रतिनिधियों की एक बड़ी सभा स्थापित की गई, जिसमें सरदार, पादरी तथा साधारण जनता, तीनों के प्रतिनिधि सम्मिलित होते थे। यह सभा स्टेट्सजनरल कहलाती थी। सब प्रान्तों की अपील सुनने के लिये एक मुख्य न्यायालय

भी बनवाया गया। सब प्रान्तों में एक एक अधिकारी नियत किया गया, जो स्टेटहोल्डर कहलाता था और जो स्वयं सम्राट् द्वारा नियत किया जाता था। धार्मिक मामलों में सम्राट् ने अधिक कड़ाई से काम किया। उत्तरी प्रान्तों के लोग अधिकतर लूथर तथा काल्विन के अनुयायी हो गये थे। चार्ल्स ने इनक्विज़िशन द्वारा इन्हें कड़ा दण्ड दिलवाया; अनेकों को फाँसी भी दिलवायी। परन्तु इतने पर भी चार्ल्स वहाँ अप्रिय नहीं था। वह वहीं के एक सूबे में उत्पन्न हुआ था अतः लोग उसे अपने ही देश का समझते थे। उसके समय में यह देश खूब समृद्ध था। अतः लोगों ने चार्ल्स के पुत्र फिलिप की अधीनता भी स्वीकार कर ली।

परन्तु फ़िलिप के राजा होते ही वहाँ की स्थिति बदल गई। फिलिप धर्म तथा राजनीति दोनों में अपना प्राधान्य चाहता था। उसका विचार था कि धार्मिक एकता के बिना राजनैतिक एकता भी नहीं हो सकती अतः उसने प्रोटेस्टैन्ट मत को दबाना चाहा। फिर उसने अपना शासन निरंकुश बनाने के लिये वहाँ विदेशियों को बड़े २ पदों पर नियत करना आरम्भ किया। देशी रईस बड़े बड़े पदों से निकाले जाने लगे और उनकी जगह उसके स्पेनवाले मित्रों को मिलने लगी। इस नीति से वहाँ के रईस तथा दूसरे लोग बड़े अप्रसन्न हुए। फिर फिलिप ने यह समझ कर कि यहाँ विरोध तथा विद्रोह खड़ा होगा, स्पेन की सेना नीदरलैण्ड में रख दी जो लोगों को बहुत कष्ट देती थी। इससे लोग और भी बिगड़े तीसरे फिलिप ने धार्मिक मामलों में बहुत क्रूरता से काम लिया। इनक्विज़िशन के दण्ड और भी कड़े कर दिये गये, जिससे सहस्रों कारीगर इङ्गलैण्ड आदि देशों को भाग गये।

इस भांति राजनीतिक तथा धार्मिक दोनों कारण मिल गये। लोग विरोध के लिये तैयार होने लगे। उन्हें फिलिप के प्रति अश्रद्धा तथा घृणा हो गई। प्रोटेस्टेण्ट और कैथोलिक दोनों धर्म वाले इस सार्वजनिक संकट के समय में मिल गये जिनका नेता आरेंज का विलियम था। वह पहले कैथोलिक था; परन्तु अब प्रोटेस्टैण्ट हो गया था। वह घमण्डी तथा शराबी न था। फिर उन सबने सन् १५६३ में, फिलिप द्वारा नीदरलैण्ड्स में नियत किए हुए शासक ग्रेनवेला को वापस बुलाये जाने की प्रार्थना की क्योंकि वह निर्दयी तथा स्वेच्छाचारी था। फिर इस सम्मिलित दल ने इनक्विज़िशन को निंद्य ठहराया तथा अपनी कठिनाइयों और शिकायतों को लिख कर शासक के पास भेजा परन्तु उनकी प्रार्थना पर विचार न किया गया और उन्हें 'मँगता' ठहराया गया, जिस उपाधि को उन लोगों ने बड़े हर्ष से स्वीकार किया। इसी बीच में काल्विन मतवालों ने जो इनक्विज़िशन द्वारा चिढ़े हुए थे जोश में आकर उपद्रव आरंभ कर दिये। वे मूर्तियाँ तोड़ने लगे और केवल दो प्रान्तों में ही चार सौ से अधिक कैथोलिक गिरजे गिरा दिये गये। ऐसी स्थिति देख कर फिलिप घबड़ा गया परन्तु उसे एक लाभ यह हुआ कि प्रोटेस्टैण्ट धर्मवालों का ज़ोर देख कर कैथोलिक मत के लोग फिलिप की ओर मिल गये। विद्रोहियों को कड़ा दण्ड देने के लिये तथा विलियम द्वारा चलाये हुए राष्ट्रीय आन्दोलन को कुचल डालने के लिये फिलिप ने सन् १५६७ में एक होशियार तथा निर्दयी जनरल, अल्वा के ड्यूक को वहाँ गवर्नर बना कर भेजा।

अल्वा यह कहकर चला था कि मैंने लोहे के मनुष्यों तक को

पालतू बना लिया है, इन मक्खन के आदमियों को मैं देखूँगा ? उसके साथ स्पेन की चुनी हुई सेना भी थी। वहाँ पहुँचते ही उसने विद्रोहियों को दण्ड देने के लिये एक विशेष अदालत बनाई। जिसने उन सबको जिन्होंने प्रोटेस्टैंएट मत की प्रार्थनाएँ कही थीं तथा जिन्होंने उनसे सहानुभूति दिखलाई थी, बिना किसी वर्ण अथवा पद के विचार के क्रूरता से मृत्यु-दण्ड देना आरम्भ कर दिया। जिन्होंने ग्रेनवेला को बुलाये जाने की प्रार्थना की, वे भी ढूँढ़ ढूँढ़ कर दण्डित किये गये। प्रसिद्ध देशभक्त एगमण्ट जिसने सेण्ट क्विंटन तथा ग्रेवलाइन्स दो स्थानों पर अंग्रेजों को हराकर फिलिप की कीर्ति को उज्ज्वल किया था, जो जनता में देवतुल्य माना जाता था और जो फिलिप का भक्त था वह भी मृत्यु-दण्ड से न बचा। बुसेल्स स्थान पर (जहाँ अब उसकी मूर्ति खड़ी है) उसे एक रञ्ज करते हुए तथा आँसू बहाते हुए झुण्ड के सामने प्राण देने पड़े। अल्वा बड़े गर्व से कहा करता था कि उसने इस प्रकार अठारह सहस्र मनुष्यों के प्राण लिये। इस क्रूर अदालत का नाम नीदरलैंडस् वालों ने 'रक्त की सभा' (काउन्सिल ऑफ़ ब्लड) रखा।

वहाँ की स्थिति निराशाजनक देखकर विलियम ने जर्मनी को प्रस्थान कर दिया और एक लाख मनुष्यों ने उसका अनुकरण किया। फ्रान्स तथा जर्मनी के प्रोटेस्टेण्ट लोगों ने एक सेना भेजी पर अल्वा ने उसे हरा दिया। विलियम ने भी आक्रमण किया परन्तु वह भी हार गया। विजयोन्मत्त होकर अल्वा ने एन्टवर्प के किले में अपनी एक मूर्ति स्थापित कराई जो गुलाम बेल्जियनों (नीदरलैंड के प्रान्त बेल्जियम के निवासियों) को अपने पैरों तले

कुचल रही थी। फिर उसने वहाँ के सब व्यापारिक सामान पर बिक्री के समय दस प्रति सैकड़ा कर लगाया। इस भाँति कच्चे सामान से कोई वस्तु पूरी बनने तक उस पर कई बार कर लग जाता था, जिससे उसका मूल्य बहुत चढ़ जाता था। एक व्यापारी देश के लिये यह बड़ा हानिकर था और कई दूकानें इस प्रकार बन्द हो गईं। इससे लोगों का क्रोध बहुत ही बढ़ गया।

परन्तु सन् १५७२ में एक ऐसी घटना हुई जिसने नीदरलैंड का भाग्य एकदम पलट दिया। अल्वा की क्रूरता के डर से बहुत से लोग समुद्र के किनारों पर जाकर लूट-मार करने लगे थे। वे विशेष कर स्पेन के जहाज़ों को लूटते थे। अकस्मात् इनके नेता ने जिसने एगमरट की मृत्यु का बदला लेने की शपथ खा ली थी, अपने दल को लेकर ब्राइल नामक एक बन्दरगाह पर अधिकार कर लिया और वहाँ से स्पेन के सैनिक रक्षकों को भगा दिया। इस विजय ने लोगों के हृदय में उत्साह की एक लहर फिर उत्पन्न कर दी। फिर तो वह इतने वेग से बही कि गाँव पर गाँव, नगर के बाद नगर स्पेन के रक्षकों को भगा कर स्वतन्त्र होते गये। उत्तर के हालैंड तथा जीलैंड आदि प्रान्तों ने स्वतन्त्र होकर विलियम को अपना शासक बनाया। नीदरलैंडस् के विद्रोह के इतिहास में दूसरा युग आरम्भ हो गया।

अल्वा ने भी अब और अधिक दृढ़ता और क्रूरता से काम लिया तथा कई लड़ाइयाँ जीत कर कई स्थानों पर फिर अपना अधिकार कर लिया। इनमें हारलेम का घेरा सबसे प्रसिद्ध है जहाँ लोग सात मास तक डटे रहे परन्तु जब चूहे, चिड़ियाँ आदि सब निबट गये और खाने को कुछ न रहा तो वे हार गये और क़त्ल कर दिये गये।

अल्वा ने लोगों को दबाने का भरसक प्रयत्न किया परन्तु जब किसी देश में राष्ट्रीयता की लहर उठती है तो उसका दबाना सहज नहीं होता फिर दमन द्वारा स्वतन्त्रता-प्राप्ति की इच्छा को दबाना तो असम्भव सा ही है। दमन से लोग कुछ काल के लिये शान्त हो सकते हैं परन्तु उनके हृदय की अग्नि शान्त नहीं होती और अवसर पाकर और भी वेग से भड़क उठती है। इतिहास इन्हीं बातों के प्रमाण से भरा पड़ा है।

इस प्रकार लोगों को शान्त न होते देखकर निराश तथा थकित होकर अल्वा ने अपने वापिस बुलाये जाने की प्रार्थना की। उसके उत्तराधिकारी रिक्वेजेन्स ने 'रक्त की सभा' को तोड़ दिया तथा लोगों को शान्त करने के और भी प्रयत्न किये परन्तु असफल होकर उसे भी सेना का आश्रय लेना पड़ा। उसने लीडन स्थान पर घेरा डाला। अपने को हारते हुए देखकर विलियम ने समुद्र से सहायता ली। उसने कहा 'इस स्थान को शत्रुओं के हाथ जाने देने के बजाय डुबा देना अच्छा है', समुद्र के बँध काट दिये गये। प्रान्त की सतह समुद्र तल से नीची होने के कारण एक दम पानी की बाढ़ आ गई और इस स्थान से घेरा उठाना पड़ा।

सन् १५७६ में रिक्वेजेन्स की मृत्यु हो गई। स्पेन के सिपाहियों ने जो कई महीनों से तनख्वाह न मिलने के कारण क्रुद्ध थे, इस मृत्यु से नेता रहित होकर वहाँ विद्रोह आरम्भ कर दिया। एन्टवर्प तथा कई अन्य नगर लूट से नष्ट कर दिये गये और हज़ारों नागरिक कत्ल कर डाले गये। इस 'स्पेन के क्रोध' (स्पेनिश फ़्यूरी) से नीदरलैण्ड को एक लाभ हुआ। वहाँ वालों को एकता की आवश्यकता का अनुभव हुआ। वहाँ के सत्रहों प्रान्तों ने

धार्मिक भेदभाव छोड़कर 'घेएट की शान्ति' (१५७६) के अनुसार मेल कर लिया, दक्षिण के कैथोलिक लोगों ने भी स्पेन के सिपाहियों को निकालने में सहायता दी। संकट के समय एक हो जाना भी बड़ी बुद्धिमानी है। रिकेज़ेन्स की मृत्यु के बाद फ़िलिप का अधिभ्राता, लीपान्टो का विजयी डॉन जॉन गवर्नर नियत होकर नीदरलैण्डस् में आया। उसने लोगों को शान्त करने के लिये तथा इंगलैण्ड के विरुद्ध उनकी सहायता पाने के लिये उनकी मांगों को स्वीकार कर लिया परन्तु उसकी मृत्यु ने उसका कार्य अधूरा ही छुड़ा दिया।

इसके बाद सन् १५७८ में अलेकज़न्डर फर्नीस परमा का ड्यूक नीदरलैण्ड्स का गवर्नर नियत हुआ जो १४ वर्ष तक रहा। वह अनुभवी सैनिक तथा राजनीतिज्ञ था। उसने वहाँ के प्रान्तिक तथा धार्मिक भेद देखकर कूटनीति से काम लेने का अच्छा अवसर समझा। उसने कैथोलिक लोगों की प्रशंसा करके तथा आश्वासन देकर, उन्हें उत्तर के प्रोटेस्टेण्ट लोगों से अलग कर लिया। अब विलियम को उत्तर की सात रियासतों का ही सहारा रह गया। इन सात रियासतों को जिनमें हालैण्ड, जीलैण्ड तथा यूट्रेक्ट प्रधान थी उसने सन् १५७९ में 'यूट्रेक्ट की सन्धि' के अनुसार फिर एक किया जिसका नाम संयुक्त प्रदेश रखा, परन्तु इन प्रान्तों में हालैण्ड सब से बड़ा होने के कारण, कुल प्रदेश ही हालैण्ड के नाम से मशहूर है तथा वहाँ के निवासी डच कहलाते हैं। यह मेल ही डच प्रजातंत्र की जड़ है।

दो वर्ष बाद उत्तर के प्रान्तों ने अपनी पूर्ण स्वतंत्रता घोषित कर दी। परमा ने चाहा भी कि भारी रिश्वत देकर विलियम को

अपनी ओर मिला लें परन्तु वह देशभक्त जिसने देश की स्वतंत्रता के लिये इतना युद्ध किया था उसकी बातों में न आया। इस पर फिलिप ने विलियम का सिर लाने वाले को एक भारी इनाम और सरदारी का पद देने की घोषणा की। लालच में आकर एक दुष्ट ने सन् १५८४ में विलियम का सिर काट कर फिलिप को भेंट कर ही दिया। इस प्रकार वहाँ के एक सब से बड़े तथा प्रसिद्ध देशभक्त के जीवन का अन्त हुआ। देश की स्वतंत्रता के लिये यह भी एक बलि थी।

विलियम सोलहवीं शताब्दी का एक सब से बड़ा पुरुष था तथा अपनी निस्वार्थ देशभक्ति के कारण उसने 'डच प्रजातंत्र के जनक' की उच्च पदवी पाई। वह कैथोलिक से प्रोटेस्टैण्ट हो गया था, परन्तु उसने धर्म के लिये मृत्युदण्ड देना कभी पसन्द न किया। अमेरिका की स्वतंत्रता के संस्थापक प्रसिद्ध जार्ज वाशिंगटन से उसकी तुलना की जाती है। वह सैनिक के बजाय राजनीतिज्ञ अधिक था, परन्तु युद्धक्षेत्र में भी उसने अपनी चतुरता का परिचय दिया! राजनीतिज्ञ होते हुए भी वह बहुत सीधा था, लोगों ने कई बार उससे राजा बनने की प्रार्थना की परन्तु उसने अस्वीकार किया। देश की इसी निस्वार्थ सेवा ने उसे सर्वप्रिय बना दिया। प्रजा प्यार से उसे 'पिता विलियम' कह के पुकारती थी, जीवनकाल में वह इस वीर जाति का नेता रहा और मृत्यु के बाद बच्चे तक उसके लिये गलियों में रोते दिखाई दिये।

उसका बुद्धिमान् पुत्र मारिस उसके स्थान पर नेता तथा सैनिक कमान्डर चुना गया। अब इंगलैण्ड की रानी एलिज़ा-

बेथ ने उनसे सन्धि कर ली, जिसके अनुसार उनके कुछ स्थानों पर रानी ने अपना अस्थायी रूप से अधिकार कर लिया और इसके बदले में उन्हें कुछ सैनिक सहायता दी, परन्तु नीदरलैण्ड्स के भाग्य से उसके लिये एक दैवी सहायता भी इसी समय मिली। एलिज़ाबेथ की सेना ने स्पेन के आरमाडा को हरा दिया जिससे फ़िलिप बिलकुल निर्बल तथा हतोत्साह हो गया, अतः वह इस नये प्रजातंत्र को दबाने का कुछ उपाय न कर सका, दूसरे वह फ्रांस के घरू झगड़ों में भी भाग ले रहा था। अवसर पाकर डच लोगों ने सैनिक शिक्षण में सुधार कर लिया तथा नये शस्त्र काम में लाये। फ्रांस के घरू युद्ध के बाद स्पेन के नेवार प्रान्त का राजा हेनरी चतुर्थ के नाम से फ्रांस के सिंहासन पर बैठा। उसने इंगलैण्ड और हालैण्ड को भी स्पेन के विरुद्ध इकट्ठा कर लिया। इससे स्पेन की विजय की आशा जाती रही। इसी समय वीर योद्धा परमा भी एक युद्ध के लिये तैयारी करते करते ही बेहोश हो गया और मर गया। अन्त में फ़िलिप ने अपने दामाद आस्ट्रिया के आर्कड्यूक को नीदरलैण्ड्स भेजा, परन्तु जब वह भी डच लोगों को जीतने में असमर्थ हुआ तो फ़िलिप तृतीय ने जो फ़िलिप द्वितीय के बाद स्पेन का राजा हुआ, सन् १६०९ में नीदरलैंड्स की स्वतंत्रता स्वीकार कर ली। अन्त में सन् १६४८ में वेस्टफालिया की सन्धि से अन्तिम बार डच-स्वाधीनता स्वीकार कर ली गई।

इस भाँति पचास वर्ष तक निरन्तर परिश्रम करके तथा अनेक बलिदान करके देशभक्त डच लोगों ने स्वतंत्रता प्राप्त की। इन लोगों के विद्रोह ने फ्रान्स तथा इंगलैण्ड को फ़िलिप के डर

से बचा लिया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उन्होंने अपनी उन्नति की ओर ध्यान दिया। व्यापार बढ़ाया, साहित्य तथा विज्ञान की बहुत उन्नति की इसलिये देश धनवान् तथा शक्तिमान् हो गया। स्वतंत्र देश ही अपनी यथेच्छ उन्नति कर सकते हैं।

दक्षिण का कैथोलिक भाग जो स्पेन से मिल गया था, इस उत्तरी प्रजातंत्र से अलग रहा। परन्तु उसकी आबादी बहुत घट गई। सारा व्यापार तथा आबादी आदि उत्तरी भाग में आ गये।

सातवाँ अध्याय

फ्रांस में धार्मिक कलह

फ्रान्स में धर्म-संशोधन जर्मनी के प्रभाव से नहीं हुआ, यहाँ इसका स्वतंत्र इतिहास है। इटली में लगातार फ्रान्स तथा स्पेन के बीच में युद्ध होने से फ्रान्सवालों पर भी दक्षिण की जागृति तथा रिनासेंस का प्रभाव हुआ। सोलहवीं शताब्दी के आरम्भ में लिफेरी आदि कुछ लोगों ने ऐसे विचार प्रकट किये। लूथर तथा काल्विन के कैथोलिक धर्म पर आक्षेपों के कारण यहाँ भी ऐसे विचारों को उत्तेजना मिली। यहाँ काल्विन के मत का प्रचार अधिक हुआ क्योंकि काल्विन यहीं उत्पन्न हुआ और बहुत दिनों तक रहा और उसने अपनी पुस्तकें भी फ्रेंच भाषा में लिखीं। दूसरे यहाँ के सरदार भी अधिकांश नये मत के हो गये थे क्योंकि ऐसा करने से उन्हें राजा का सामना करने का अवसर मिलता था जिसे वे चाहते थे। नये धर्म के लोग यहाँ पर 'ह्यूजीनॉट' कहलाते थे।

संक्षेप में यहाँ के धार्मिक इतिहास के पांच भाग हैं जो सब सोलहवीं शताब्दी में ही हैं। सन् १५२० से नये धर्म की वृद्धि आरम्भ हुई तथा दूसरे भाग में सन् १५३६ में एक धार्मिक दल बन गया। तीसरे भाग में एक राजनीतिक दल उत्पन्न हुआ और चौथे भाग में धार्मिक दल पर राजनैतिक दल की विजय हुई और अन्त में हेनरी चतुर्थ गद्दी पर बैठा।

यहाँ का राजा फ्रांसिस प्रथम ह्यूजीनोट लोगों से सहानुभूति रखता था परन्तु जब वह पेविया के युद्ध में सम्राट् चार्ल्स से हार गया तो उसने पोप और अपनी कैथोलिक प्रजा को अपनी ओर मिलाने की आवश्यकता समझी क्योंकि कैथोलिक लोगों की संख्या अधिक थी अतः उसने नये धर्मवालों पर कड़ाई करना आरंभ किया। उसके पुत्र हेनरी द्वितीय ने भी बहुत से ह्यूजीनोटों को मरवा डाला परन्तु वे लोग और दृढ़ होते गये।

अचानक सन् १५६० में हेनरी की मृत्यु हो गई। यहीं से धार्मिक युद्ध का आरम्भ हो जाता है। देश में गड़बड़ मची थी। फ्रान्स की गद्दी पर सोलह वर्ष का एक दुर्बल बालक फ्रांसिस द्वितीय बैठा, अतः राज्य की सारी शक्ति, उसकी रानी (स्काटलैण्ड वाली) मेरी के चचा, गाइस के हाथों में चली गई। गाइस के ड्यूक, दो भाई थे। बड़ा फ्रांसिस था (फ्रांसिस द्वितीय से भिन्न) तथा छोटा हेनरी, लारेन का कार्डिनल (धार्मिक प्रधान अधिकारी) था ये दोनों कैथोलिक मत के पक्षपाती थे अतः उन्होंने प्रोटेस्टैण्ट मतवालों को बहुत कष्ट दिया। ये इंगलैंड से शत्रुता रखते थे। तथा फ्रांस में अपना कुटुम्ब बढ़ाना चाहते थे। गाइस ने अंग्रेजों से केले स्थान छीन लिया था अतः वह वहाँ

देवतातुल्य माना जाता था क्योंकि फ्रांस और इंगलैण्ड में परम्परा से वैर था।

राज्यवंश (बोर्बनवंश) की एक और शाखा नेवार में राज्य कर रही थी। वे लोग फ्रांस के राज्यकार्य में अपना हाथ चाहते थे परन्तु उन्हें कुछ शक्ति न मिली। अतः उन्होंने गाइस के विरोधी लोगों से मित्रता कर ली। ये लोग भी दो भाई थे। एन्टनी तथा कोन्डी का राजकुमार लुई। उन्होंने नया मत स्वीकार कर लिया था। फ्रान्स के प्रोटेस्टैण्ट लोगों ने जिनमें अधिकतर छोटे सरदार, व्यापारी तथा कारीगर थे, उनसे सहर्ष मित्रता कर ली। इस भाँति इस विभाग में धार्मिक भेद के कारण फ्रान्स में राजनैतिक दो बड़े दल हो गये।

इन दोनों दलों से भिन्न परन्तु दोनों को अपने वश में लाने की इच्छा करने वाली राजकुमार की माता मेडिसी की कैथेराइन थी। फ्रांसिस द्वितीय एक वर्ष राज्य करके मर गया और उसका छोटा तथा दुर्बल भाई चार्ल्स नवां राजा हुआ। इसके समय में कैथेराइन का पूरा प्रभाव रहा। यह रानी बड़ी कूटनीतिज्ञ तथा निडर थी और फ्रांस को अपने पुत्र द्वारा शासित देखना चाहती थी, अतः वह अपना मतलब बनाने के लिये कभी इस दल से मिल जाती थी, कभी उससे। देश में विपत्ति लाने के लिये यह सब से अधिक जिम्मेदार है, तथा इसी के कारण इस वंश का भी अन्त हो गया।

सन् १५६० में प्रोटेस्टैण्ट दल ने विचार किया कि राजकुमार को पकड़ लें और गाइस के हाथ से सब शक्ति छीन लें परन्तु इस बात का पता लग गया और इनमें से बहुत से लोग

बीच सड़क पर चलते चलते ही क़त्ल कर डाले गये, परन्तु इसके बाद गाइस ने उन्हें धार्मिक स्वतंत्रता दे दी।

चार्ल्स नवम् केवल दस वर्ष का था, राज्य में अशान्ति थी, अतः कैथेराइन ने प्रोटेस्टैण्ट लोगों को कुछ रियायतें देकर शान्त करना चाहा, परन्तु वे चाहते थे कि फ्रांस में प्रोटेस्टैण्ट मत का राष्ट्रीय गिरजा स्थापित किया जाय। कैथोलिक लोग इस बात से बहुत अप्रसन्न थे, अतः कोई समझौता न हो सका, वैमनस्य और अधिक बढ़ गया।

गाइस के अनुयायी कैथोलिकों ने अब अस्त्रों का सहारा लिया और वासी स्थान पर एक प्रोटेस्टैण्ट दल को जो नियमानुसार नगर के बाहर प्रार्थना कर रहा था, क़त्ल कर डाला। इस समाचार को सुनकर प्रोटेस्टैण्ट लोगों का क्रोध एकदम बढ़ गया और उन्होंने भी हथियार बाँधे। इनकी ओर सब से प्रसिद्ध तथा अनुभवी सैनिक जनरल कोलिनी था। युद्ध छिड़ गया। पहिली लड़ाई में प्रोटेस्टैन्ट दल का कौण्डी का राजकुमार क़ैद कर लिया गया तथा दूसरी ओर का गाइस मारा गया। इस भाँति दोनों दलों को नेता रहित देखकर रानी ने बीच में कूदकर झगड़ा निबटा दिया। प्रोटेस्टैण्ट लोगों को प्रार्थना के लिये कुछ स्थान दे दिये गये तथा कौण्डी को मुक्त कर दिया गया।

परन्तु ह्यूजीनोट (प्रोटेस्टैण्ट) लोगों को फिर भी अपनी कुशल न दिखाई दी और उन्होंने समान अधिकार पाने के लिये पैरिस नगर में घेरा डाल दिया और एक और लड़ाई होकर फिर सन्धि हो गई।

अब पोप और अल्वा के ड्यूक ने रानी को प्रोटेस्टैण्ट लोगों

के विरुद्ध बहकाया। उसने प्रोटेस्टैण्ट लोगों के विरुद्ध कई नये नियम बनाये जिससे फिर लड़ाई हुई और रानी जीती। प्रोटेस्टैण्ट दल टूटता जान पड़ा, परन्तु इसी समय कालिनी ने उनका नेतृत्व ग्रहण कर स्थिति सम्हाली। इंगलैण्ड और नीदरलैण्ड ने भी उन्हें कुछ सहायता दी, तथा सन् १५७० में सेन्ट जरमेन की सन्धि से इस युद्ध का अन्त हुआ। प्रोटेस्टैन्ट लोगों को धार्मिक स्वतंत्रता मिल गई, सरकारी पद भी उनके लिये खोल दिये गये और शर्तें स्थिर रखने के लिये अमानत के रूप में उन्हें चार गाँव भी दिये गये। यह सन्धि महत्त्वपूर्ण है। इससे प्रोटेस्टैण्ट लोगों को धार्मिक स्वतंत्रता मिली तथा इसके बाद फ्रान्स की नीति भी बदली।

चार्ल्स नवम् अब सयाना हो गया था। उसने देखा कि देश तो इन घरू युद्धों से निर्बल हुआ जाता है और उसका शत्रु स्पेन उन्नति कर रहा है। अतः उसने देशवासियों को विदेशियों से लड़ाना चाहा जिससे वे आपस का द्वेष भूल जायँ। वह नीदरलैण्ड्स का पक्ष लेकर स्पेन से लड़ना चाहता था, अतः उसने अपने देश के दोनों दलों को मिलाने के लिये अपनी बहन मारगरेट की शादी नेवार के हेनरी के साथ कर दी, जो इस समय ह्यूजीनोट-दल का नेता था।

चार्ल्स नवम् ने यह सब प्रोटेस्टैण्ट दल के नेता कालिनी के प्रभाव के कारण किया। यह देखकर रानी कैथेराइन तथा गाइस को बड़ी ईर्षा उत्पन्न हुई, क्योंकि उनकी शक्ति कम होती जाती थी और वे दोनों इस प्रकार अपने हाथों से शक्ति निकलने देना नहीं चाहते थे। अब रानी ने एक उपाय सोचा। नेवार

का हेनरी दलसमेत मारगरेट से शादी करने पेरिस आया हुआ था। पेरिस निवासी अधिकांश कैथोलिक थे अतः रानी ने उनमें धार्मिक उत्तेजना फैलाकर हेनरी के दल को कटवा डालने का अच्छा अवसर समझा। उसने अपने निर्बल पुत्र को धमकियों तथा विनतियों से इसके लिये तैयार कर लिया। २३ अगस्त सन् १५७२ ई० को रात के बारह बजे गिरजे की घण्टी बजी जिसे सुनते ही अनेकों सशस्त्र दल जमा हो गए जो पहले से ही तैयार कर रखे गये थे। इस दल ने फौरन ही बारात की ओर जाकर पह्चान पहचान कर एक एक प्रोटेस्टेण्ट को जो बिचारे विवाह की खुशी में थे, मारना आरम्भ कर दिया। फिर यह षड्यन्त्र दूसरी जगह भी फैल गया। पेरिस तथा फ्रान्स में सहस्रों लोग क़त्ल कर दिये गये जिनमें कालिनी भी न बचा। यह सन् १५७२ का **सेंट बारथोलोम्यू** का प्रसिद्ध क़त्ल है।

चार्ल्स ने दूसरे दिन मर्दों, बुड्ढों, स्त्री तथा बच्चों के क़त्ल की कथायें सुनकर अपने पुराने सर्जन पारे को एक ओर ले जाकर दुःख से कहा—'मास्टर एम्ब्रोस पारे! न जाने, दो तीन दिन से मुझे क्या सता रहा है परन्तु मेरे शरीर तथा मन को एक भारी धक्का पहुँचा मालूम होता है जैसे मैं ज्वर से उठा होऊँ। मुझे प्रतिपल यह मालूम पड़ता है—मुझे नहीं मालूम कि मैं सोता हूँ या जागता हूँ—कि क़त्ल किये गये लोग अपने लोहू से सने हुए मुँह उठा कर बार २ मेरी ओर देखते हैं।' मेरी इच्छा है कि निःसहाय तथा निरपराध लोगों को न मारा जाता, इस भाँति अपनी इच्छा के विरुद्ध इस भयंकर कृत्य से धक्का खाकर वह १८ मार्च को मर गया।

इस भयंकर समाचार को सुनकर स्पेन तथा रोम को छोड़कर शेष समस्त यूरोप को बड़ा क्रोध तथा आश्चर्य हुआ। नीदरलैंड्स वालों को भी बड़ा धक्का पहुँचा क्योंकि वे स्पेन के विरुद्ध फ्रांस से सहायता की आशा कर रहे थे। फ्रांस के शेष प्रोटेस्टैएट अत्यन्त क्रुद्ध होकर प्राणपण से भिड़ गये तथा फ्रान्स में एक नरम दल खड़ा हो गया जो धार्मिक सहानुभूति का पक्षपाती था। दूसरे वर्ष सन्धि हो गई जिससे प्रोटैस्टेएट लोगों को अनेक रियायतें मिलीं।

तीन हेनरियों का युद्ध—चार्ल्स नवम के बाद उसका छोटा भाई हेनरी तृतीय गद्दी पर बैठा। वह बड़ा आरामतलब राजा था। रानी की पोशाक बनाने और अपने बाल सम्हालने में ही इनका सब समय खर्च होता था। इस तरह बनकर रानी समेत आप बग्घी में बैठ कर बाजार में निकला करते थे। आप खर्चीले भी ऐसे थे कि अपने एक मित्र की शादी में बारह लाख फ्रैंक खर्च कर डाले जिससे खजाना खाली हो गया। दोनों बड़े भाई फ्रान्सिस तथा चार्ल्स नवम पहले ही मर चुके थे, हेनरी के भी कोई पुत्र न हुआ। सबसे छोटा भाई एलिन्कन का ड्यूक भी सन् १५८४ में मर गया। अब उत्तराधिकारी का प्रश्न सामने आया। सबसे निकट-तम उत्तराधिकारी नेवार का हेनरी था जो राजवंश की एक शाखा में से था परन्तु वह प्रोटेस्टैएट था अतः गद्दी पर उसके बैठने की सम्भावना देखकर फ्रान्स के कैथोलिक लोग बहुत घबड़ाये। उन्होंने गाइस हेनरी के नेतृत्व में एक पवित्र सङ्घ (होली लीग) की स्थापना की, इसी का दूसरा नाम कैथोलिक संघ है जिसे सन् १५७७ में, कैथोलिक धर्म की रक्षा तथा फ्रान्स की गद्दी को प्रोटेस्टेएट उत्तराधिकारी से बचाने के उद्देश्य से स्थापित किया

गया। राजा हेनरी तृतीय यह सोच कर कि इस संघ में शामिल होने से उसका बल बढ़ जायगा उसमें सम्मिलित हो गया।

अब हेनरी तृतीय ने प्रोटेस्टैएट लोगों के विरुद्ध फिर कानून बनाये और पहले के कानून जिनमें उन्हें धार्मिक स्वतंत्रता दी गई थी रद्द कर दिये। इससे प्रोटेस्टैएट लोग बड़े क्रुद्ध हो गये और युद्ध आरम्भ हो गया जो तीन हेनरियों का युद्ध कहलाता है, क्योंकि फ्रान्स का राजा हेनरी तृतीय था, कैथोलिक संघ का नेता हेनरी गाइस था तथा नेवार का राजा भी हेनरी था तथा प्रत्येक के पास एक एक अच्छी सेना थी जिसके वे कमाण्डर थे।

पहली लड़ाई में नेवार के हेनरी ने वीरता से शाही सेना को सन् १५८७ में कोट्रा स्थान पर हरा दिया। परन्तु हेनरी गाइस ने एक जर्मन सेना को जो ह्यूजीनाट लोगों की सहायता को आई थी, हरा दिया। इससे गाइस तथा कैथोलिक संघ की सर्वप्रियता बहुत बढ़ गई और सब सरदारों ने गाइस को अपना अफ़सर माना और जब वह पेरिस नगर में आया तो लोग उसकी जय बोलने लगे। राजा हेनरी तृतीय ने इस प्रकार कैथोलिक संघ की प्रतिष्ठा बढ़ती देख कर तथा अपने को बिलकुल निर्बल तथा संघ के हाथ का खिलौना देखकर हेनरी गाइस को मार डालने का विचार किया। सन् १५८८ की २३ वीं दिसंबर थी। हेनरी गाइस भोजन कर रहा था। जब वह उठ कर चलने लगा तो उसने फिर कर देखा कि एक मनुष्य उसके पीछे पीछे फिर रहा है। गाइस को देखते ही उसने झट आकर तलवार मार दी। एक दूसरे मनुष्य ने गाइस की टाँग पकड़ी, औरों ने कई तलवारें और मारीं, परन्तु फिर भी वह उन सब को घसीट

कर राजा के पास तक ले गया। वह उनकी शिकायत करने गया था परन्तु राजा ने उसके मुँह में लात मारी और फौरन उसे जलवा दिया। इस अमानुषिक कृत्य से—यूरोप का इतिहास ऐसे क्रूर कृत्यों से भरा है—राजा ने गाइस से छुटकारा पाया। इस समाचार से सब पेरिस नगर तथा गिर्जों में बड़ा शोक मनाया गया। कैथोलिक संघ का पूरा क्रोध हेनरी तृतीय के ऊपर आ गया और उसे नेवार के हेनरी के पास भागना पड़ा। हेनरी तृतीय, नेवार के हेनरी की सेना के साथ पेरिस पर घेरा डाले हुए था कि एक क्लेमेन्ट नामक पण्डे ने उसके पेट में चाकू घुसेड़ कर उसे भी परमधाम पहुँचा दिया। पण्डे की मूर्ति गिरजों में पूजा के लिये स्थापित की गई। इस भाँति हेनरी तृतीय के वंश का अन्त हो गया।

इसी वर्ष नीदरलैण्डस् में परमा के ड्यूक ने एन्टवर्प पर अधिकार किया, तथा इसी साल एलिजाबेथ ने स्काटलैण्ड की बहिष्कृत रानी मेरी स्टुअर्ट को मृत्युदण्ड दिया। एलिजाबेथ ने नीदरलेण्ड्स को सेना भेज कर सहायता दी थी तथा नेवार को रुपया भेजकर तथा इसी वर्ष स्पेन के आरमाडा को—जो मेरी स्टुअर्ट का बदला लेने आया था—इंगलैण्ड द्वारा पराजय प्राप्त हुई।

हेनरी तृतीय की मृत्यु के बाद, नेवार के हेनरी ने हेनरी चतुर्थ नाम धारण करके फ्रांस की गद्दी पर बैठना चाहा, परन्तु स्पेन तथा कैथोलिक संघ ने उसका विरोध किया। स्पेन का फिलिप स्वयं ही फ्रान्स का राजा बनना चाहता था, संघ की ओर से एक और उम्मेदवार था। हेनरी चतुर्थ ने आइवरी आदि स्थानों पर कई बार विरोधियों को हराया परन्तु संघ शान्त न हुआ क्योंकि फिलिप उसे सहायता दे रहा था। नेवार के हेनरी ने सोचा कि

यदि वह कैथोलिक हो जाय तो प्रायः समस्त फ्रान्स उसे राजा स्वीकार कर लेगा। अन्त में उसने सन् १५९६ में प्रोटेस्टैण्ट मत छोड़कर कैथोलिक मत स्वीकार कर लिया। अपनी वीरता से वह सर्वप्रिय हो चला था। अब धीरे २ सब प्रान्तों ने उसे अपना राजा माना और कैथोलिक संघ भी उसका काम पूरा होने के कारण टूट गया। इस भाँति फ्रान्स का धार्मिक ग्रह-कलह समाप्त हुआ। बोर्बनवंश का हेनरी नेवार हेनरी चतुर्थ के नाम से सन् १५९४ में फ्रांस का राजा हुआ।

हेनरी चतुर्थ ने १५ वर्ष तक फ्रान्स में निर्विवाद राज्य किया और देश की बहुत उन्नति की। चालीस वर्ष से देश में अशांति थी, धार्मिक द्वेष था, सरदारों में भी वैमनस्य था तथा कोष आदि की स्थिति भी बहुत बुरी थी। धार्मिक झगड़े दूर करने के लिये उसने 'नान्टेस का आज्ञापत्र' (एडिक्ट) निकाल कर प्रोटेस्टैण्ट लोगों को शान्त किया और कैथोलिक लोगों को भी बहुत सी सुविधायें दीं। इस एडिक्ट के अनुसार प्रोटेस्टैण्ट लोगों को पूर्ण धार्मिक स्वतंत्रता मिली, उनके स्कूलों और कालेजों को सहायता दी गई और उनके मत की पुस्तकें छपना भी ग़ैर क़ानूनी न रहा। क़ानून की दृष्टि में भी दोनों दल बराबर माने गये, सरकारी पद भी दोनों को दिये जाने लगे तथा उनकी पूजा के लिये कई शहर नियत कर दिये जहाँ वे स्वतंत्रता पूर्वक अपनी प्रार्थना व पूजा आदि कर सकते थे तथा इन शर्तों को स्थिर रखने की गारन्टी स्वरूप उन्हें किलों समेत दो सौ गाँव दिये गये जहाँ पर उनकी सेना रहती थी, जिसका खर्च सरकार देती थी। किलों के मिल जाने से प्रोटेस्टैण्ट लोगों की शक्ति बहुत बढ़ गई जो आगे चल कर फिर युद्ध का कारण हुई। यह एडिक्ट बहुत प्रसिद्ध

तथा महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे यूरोप की एक बड़ी शक्ति ने नये मतवालों के लिये धार्मिक सहानुभूति तथा बराबरी स्वीकार कर ली।

फिर उसने सरदारों की शक्ति कम करने के लिये सरकारी पद अधिकतर मध्यश्रेणी के लोगों को दिये। अनावश्यक सेना तोड़ दी गई तथा लूट पाट कड़ाई के साथ दबा दी गई, राज्य के सब ऋणों को धीरे २ उसने चुका दिया। उसके पहले देश की आर्थिक स्थिति बहुत बिगड़ी हुई थी, व्यय आय से अधिक था, इसके लिये उसने अपने एक अनुभवी मित्र सली को नियत किया। सली ने बहुत से अनावश्यक पद तोड़े, पार्लमेन्ट की जगहें अधिक रुपया देकर परम्परा के लिये खरीद ली गई, कर उगाहने की प्रथा में भी उसने सुधार किया। पुराने किलों, कारखानों तथा सड़कों की दुरुस्ती हुई। कृषि को प्रोत्साहन दिया गया। नये बन्दरगाह बनाये गये। उसी के समय में फ्रान्स में रेशम के कीड़ों का प्रचार हुआ जिससे वहाँ का रेशम का व्यापार भी बढ़ा, नई खोजों के लिये मनुष्य अमेरिका आदि की ओर भेजे गये। इन सुधारों से देश समृद्धिशाली हो गया। फ्रान्स इसके लिये सली तथा हेनरी चतुर्थ का बहुत कृतज्ञ है।

उसकी बाहरी नीति यही थी कि पहले अपने राज्य को सुदृढ़ बना के, विदेशियों पर अपना प्रभाव डाले। वह स्पेन तथा आस्ट्रिया के हेप्सबर्ग वंश को दबाना चाहता था, जर्मनी के एक झगड़े को लेकर हेनरी इटली, नीदरलैंण्डस् तथा उत्तर जर्मनी के राज्यों को हेप्सबर्गों के विरुद्ध अपनी ओर मिला रहा था कि एक घटना ने हेप्सबर्ग वंश को बचा लिया।

हेनरी चतुर्थ के क़त्ल के लिये सत्रह बार प्रयत्न किया गया

तथा अन्त में रेवेलास इस कार्य में सफल हुआ। शुक्रवार १४ मई सन् १६१० को जो फ्रांस के लिये बड़े दुर्भाग्य तथा शोक का दिन था सुबह दस बजे वह एक सभा में गया। वहां से लौट कर वह एक कमरे में आराम कर रहा था कि उसके पुत्र ने आकर कहा कि अपने ज्योतिषी जी ऐसा कह रहे हैं कि राजा के जन्म-दिन के मुहूर्त के हिसाब से आज के दिन उन्हें बड़ा खतरा है, अतः आप सावधान रहें। राजा ने हंस कर जवाब दिया "ज्योतिषी बुड्ढे हैं और बातें बनाकर तुम से रुपया लेना चाहते हैं, तुम मूर्ख हो जो उनकी बातों में आ गये। हमारे दिन तो परमात्मा के यहाँ से गिने हुए हैं।" पुत्र ने जाकर अपनी माता से यही बात कही और उसने राजा को उस दिन घर से बाहर न निकलने की सलाह दी परन्तु राजा ने उसे भी यही उत्तर दिया।

भोजन के बाद हेनरी चतुर्थ बिस्तर पर आराम करने लगा, परन्तु कुछ बुरे विचारों के कारण उदास होकर उठ बैठा और इधर उधर कुछ चल फिर कर फिर लेट गया, फिर उठा और नौकर से समय पूछा, नौकर ने उत्तर दिया 'हुजूर चार बजे हैं, आज मैं सरकार को बहुत उदास देख रहा हूँ, इसलिये कुछ हवा खा आइये' राजा ने कहा "बहुत अच्छा, मेरी गाड़ी तैयार कराओ, सली भी बीमार हैं, उन्हें भी देख आऊँगा।"

राजा ने कुछ सवार तथा कुछ पैदल लेकर प्रस्थान किया। रास्ते में एक तंग गली पड़ी जिसमें एक ओर एक शराब की गाड़ी खड़ी थी तथा दूसरी ओर घास की। अतः उसकी गाड़ी को ठहरना पड़ा, सवार लोग आगे का रास्ता साफ़ करने के लिये बढ़ गये। इसी समय एक राक्षस रेवेलाक नामी, बग्घी के पास

आया और झुक कर एक पैनी छुरी राजा की छाती में भोंक दी। राजा चिल्लाया 'मैं घायल कर दिया गया।' इतने ही में उसने दूसरी छुरी मारी जिससे राजा सदा के लिये शान्त हो गया फिर एक छुरी और मारी। किसी सिपाही ने न जान पाया कि मारने वाला कौन है, अगर वह राक्षस छुरी फेंक कर भाग जाता तो उसे कोई न पकड़ पाता परन्तु अपनी वीरता दिखाने के लिये वह छुरी लिये वहीं खड़ा रहा और पकड़ा गया।

हेनरी प्रसन्न-चित्त तथा सीधे स्वभाव का मनुष्य था। वह बहादुर सिपाही तथा चतुर जनरल था। वह प्रजा पर प्रेम रखता था तथा सदा उसकी भलाई का प्रयत्न करता था। उसने एक सभा में कहा था कि मैं एक वक्ता होना चाहता था, परन्तु मुझे एक और उच्च पद 'फ्रांस का पुनर्निर्माता' का दिया गया है। आप जानते हैं कि मैंने फ्रांस को बरबाद ही नहीं, परंतु फ्रांसीसियों के हाथों से जाता हुआ पाया; परंतु ईश्वर की दया, आप लोगों की सलाह तथा अपने सिपाहियों की वीरता से मैंने उसे बचा लिया। मैं आपको इसलिये नहीं बुलाता कि आप मेरा हाँ में हाँ मिलावें। मैं आपकी सच्ची राय चाहता हूँ।

आठवाँ अध्याय

तीस वर्षीय युद्ध

पुराने काल के बहुत से युद्ध आज कल हमें अनावश्यक मालूम होते हैं। अब युरोप के राष्ट्र युद्ध के लिये कितने भी तैयार होते हुए भी उससे डरते हैं परंतु उस समय ज़रा ज़रा सी बातों पर शासकों को हठ तथा स्वार्थ के कारण युद्ध हो जाते थे।

यद्यपि ईसाई धर्म में शांति की बहुत प्रशंसा की गई है तथा युद्ध की निंदा, फिर भी युरोप में बहुत से युद्ध केवल धर्म का ही बहाना लेकर हुए। तीस वर्षीय युद्ध भी ऐसे ही युद्धों में से एक है।

यह युद्ध आरम्भ होने से पहले जर्मनी में शान्ति थी। चार्ल्स पंचम के बाद फर्डिनेण्ड प्रथम तथा मेक्सीमिलियन द्वितीय सम्राट् हुए। उनके समय काल्विन-मत का बहुत प्रचार हुआ। इसी समय काउंटर रिफार्मेशन की लहर आई जिससे काल्विन-मत की उन्नति रुक गई। जीसूट लोगों ने प्रयत्न करके बहुत लोगों को फिर प्राचीन कैथोलिक धर्म में मिला लिया। सन् १५७६ में रुडल्फ द्वितीय सम्राट् हुआ जो कैथोलिक मत का पक्षपाती था। अतः कैथोलिकों का साहस और बढ़ा। निर्वाचित व्यवस्थापक सभाओं से भी उन्हीं का बहुमत था। उन्होंने डोननवर्ग नगर को, जहाँ प्रोटेस्टैण्ट लोगों की बस्ती बहुत अधिक थी, इसीलिये साम्राज्य की रक्षा से बहिष्कृत कर दिया कि वहाँ एक कैथोलिक जलूस का अपमान किया गया था। दोनों दलों में मनमुटाव फिर बढ़ा। दक्षिण के प्रोटेस्टैण्ट लोगों ने अपनी रक्षा के लिये 'ऐक्य' स्थापित कर लिया तथा इङ्गलैंड के राजा जेम्स प्रथम के दामाद फ्रेडरिक, (एलेक्टर पेलेटाइन) को अध्यक्ष बनाया। यह देख कैथोलिक लोगों ने भी बवेरिया के मेक्सीमिलियन के नेतृत्व में 'कैथोलिक सङ्घ' बनाया। इस प्रकार जर्मनी दो दलों में बँट गया।

दोनों दलों के मनमुटाव के अतितिक्त इस युद्ध के और भी कई कारण थे। यह देख चुके हैं कि आग्सबर्ग की सन्धि कई स्थानों में दोषयुक्त थी—(देखिये जर्मनी में धर्म-संशोधन, अध्याय चौथा) उसके अनुसार राजाओं को अपनी प्रजा के लिये यथेच्छ

धर्म चुनने की स्वतन्त्रता दी गई थी। फल यह हुआ कि राजा प्रजा पर उसकी इच्छा के विरुद्ध धर्म लादने लगे। दूसरे उन शर्तों में काल्विन-मत को, जिसका प्रचार बहुत बढ़ गया था, स्थान ही नहीं दिया गया था। सन् १५५२ की जो अवधि नियत की गई थी वह भी व्यावहारिक नहीं हुई। प्रोटेस्टैण्ट लोगों ने इसे स्वीकार नहीं किया। अतः स्थायी शान्ति न हो सकी। फिर जीसूट लोगों के प्रभाव और प्रचार से प्रोटेस्टैण्ट लोग भयभीत हुए और १६०७ में उन्होंने 'ऐक्य' स्थापित किया। केथोलिक सङ्घ भी बन गया। इस भाँति दोनों दल युद्ध का बहाना ढूँढ़ रहे थे। दो बार युद्ध होते २ बच गया अन्त में सन् १६१८ में वह आरम्भ हो ही गया।

बोहेमिया प्रान्त के अधिकांश निवासी प्रोटेस्टैण्ट हो गये थे। काउण्टर रिफार्मेशन का वहाँ जोर से प्रचार हुआ पर वे लोग नये धर्म पर दृढ़ बने रहे। सम्राट् फर्डिनेण्ड द्वितीय जो पूरा कैथोलिक था सन् १६१७ में सम्राट् हुआ। उसने प्रोटेस्टैण्ट लोगों के विरुद्ध दमन आरम्भ कर दिया। इसी बीच में फर्डिनेण्ड के इशारे से प्रेग नगर में प्रोटेस्टैण्ट लोगों का एक गिरजाघर तुड़वा दिया गया। इससे लोग विप्लव के लिये तैयार हो गये। सरदार लोगों ने सम्राट् से सम्बन्ध तोड़ दिया और फ्रेडरिक एलेक्टर पैलेटाइन को अपना राजा बनाकर फिर वे शस्त्र लेकर प्रेग के किले में घुस आये और सरकारी अधिकारियों को एक ऊँची खिड़की में से नीचे खाई में पटक दिया। इस प्रकार फ्रेडरिक के नेतृत्व स्वीकार करने पर युद्ध आरम्भ हो गया।

इस युद्ध का राजनैतिक कारण यह था कि जर्मनी के सम्राट्

सब शक्ति अपने हाथ में करना चाहते थे। इसके लिये जर्मनी की प्रोटेस्टेएट रियासतें शत्रु रूप थी अतः राजा ने कैथोलिकों की सहायता से उन्हें कुचलना चाहा। सम्राट् की शक्ति अधिक बढ़ने के डर से कैथोलिक रियासतों ने भी उसे पूरी मदद न दी।

युद्ध के विभाग—इस युद्ध के चार विभाग किये जाते हैं जिनमें क्रमशः पैलेटाइन, डेनमार्क, स्वीडन तथा फ्रांस का प्रभुत्व रहा। अतः ये इन्हीं चार देशों के नाम से प्रसिद्ध हैं। यह युद्ध बढ़ कर समस्त यूरोप में व्याप्त हो गया।

पैलेटाइन विभाग आरम्भ से पाँच वर्ष तक समझा जाता है। फ्रेडरिक को इङ्गलैंड, हालैंड आदि से सहायता की बहुत आशा थी परंतु वह व्यर्थ हुई। सम्राट् को खूब मदद मिली। उसने वेवरिया के राजा मेक्सीमीलियन तथा कैथोलिक सङ्घ की सहायता से प्रोटेस्टैएट दल पर आक्रमण किया। फ्रेडरिक अपनी लापरवाही व डर के कारण सन् १६२० में प्रेग के पास हार गया। जिस समय उसके सिपाही उसके लिये मैदान में गिर गिर कर जान दे रहे थे, वह क़िले में भोजन कर रहा था। फ्रेडरिक की सेना बिलकुल हार गई और वह देश से निकाल दिया गया तथा प्रोटेस्टेएट 'ऐक्य' भी टूट गया। उसका राज्य तथा पद मेक्सी-मीलियन को दिया गया, विद्रोही दल के अनेक नेता मारे गये और उनकी जायदाद ज़ब्त कर ली गई, इस प्रकार बोहेमियाँ में आफ़त आ गई।

परंतु यह हार तथा आपत्ति भी उनके पुनरुत्थान में सहायक हुई। कैथोलिक लोगों के, प्रोटेस्टैएट धर्मवालों के प्रति अत्याचार देखकर लूथर मत के प्रोटेस्टेएट भी काल्विन के मतवाले प्रोटेस्टेएटों

से मिल गये। फर्डिनेण्ड की विजय से आसपास के राजाओं को भय उत्पन्न हुआ, स्वीडन तथा फ्रांस ने भी भाग लेना चाहा परंतु आन्तरिक झगड़ों के कारण उन्हें कुछ काल तक रुकना पड़ा। प्रोटेस्टेण्टों की प्रार्थना पर डेनमार्क का राजा क्रिश्चियन चतुर्थ उनकी सहायता को आ गया। इंगलैंड ने भी मदद दी।

सन् १६२४ में डेनमार्क के रणक्षेत्र में आ जाने से डेनिश विभाग आरम्भ हुआ। सम्राट् फर्डिनेण्ड की इस विपत्ति के समय में एक नया वीर जनरल उसकी सहायता को आ गया। काउण्ट वेलेन्स्टाइन नामक एक सैनिक अफ़सर ने सम्राट् से प्रार्थना की कि यदि सम्राट् स्वीकार करें तो वह एक बड़ी सेना से सम्राट् की सहायता कर सकता है। फर्डिनेण्ड ने उसकी प्रार्थना सहर्ष स्वीकार की। आस पास के लुटेरे लोग फ़ौरन वेलेन्स्टाइन के दल में मिल गये और उसने उन्हें शीघ्र ही शिक्षित बना लिया। वे जहाँ जाते वहीं के लोगों को लूट कर अपनी गुज़र करते थे। कैथोलिक लीग का इस समय का सबसे प्रसिद्ध जनरल टिली था। टिली तथा वेलेन्स्टाइन ने मिलकर प्रोटेस्टैण्ट लोगों को कई स्थानों पर हराया। लटर के युद्ध में हारकर उनका दल तितर वितर हो गया तथा उत्तरी यूरोप कैथोलिकों के हाथ में आया। विजयी सेना डेनमार्क में आगे बढ़ती गई परन्तु १६२९ में स्ट्रालसेण्ड स्थान पर उसकी प्रगति रोक दी गई। इस नगर के वीर लोगों ने शत्रु को समर्पण करने के बजाय स्वीडन तथा डेनमार्क की सहायता लेना अधिक पसन्द किया और ५ मास तक वीरता से सामना किया। अन्त में वेलेन्स्टाइन को पीठ दिखानी पड़ी। उसकी इस पराजय से क्रिश्चियन का साहस बढ़ा, उसने

तैयारी करके फिर युद्ध किया पर हार गया और लुवेक की संधि पर हस्ताक्षर करने पड़े जिसके अनुसार भविष्य में युद्ध में भाग न लेने पर उसके खोये हुए स्थान मिल गये। वह अलग हो गया।

विजयोन्मत्त होकर फर्डिनेण्ड ने एक नया कानून बनाया। सन् १५५५ में आग्सवर्ग की संधि से जो देश प्रोटेस्टैण्टों को दिया गया था, वह उसने उनसे वापस माँगा, इस भाँति १२ विशपों के स्थान तथा सौ से अधिक आश्रम उनके हाथ से निकल जाते, अतः इससे क्रुद्ध होकर लूथर और काल्विन मतवाले फिर मिल गये।

प्रोटेस्टैण्ट लोगों के भाग्य ने सहारा दिया। वेलेन्स्टाइन की सेना ने जर्मनी में उत्पात आरंभ कर दिया। उसे धर्म की परवाह न थी। वह छोटे २ राजाओं को दबाकर अपने हाथ में शक्ति लेने के लिये युद्ध में शामिल हुआ था। उसकी क्रूरता ने सब दलों को असन्तुष्ट कर दिया। इस प्रकार फर्डिनेण्ड को अपने एक वीर और शक्तिशाली जनरल को अलग होने के लिये कहना पड़ा। लोगों को आश्चर्य में डालकर उसने यह आज्ञा मान ली और अलग हो गया।

वेलेन्स्टाइन के अलग होते ही बीस हज़ार शिक्षित सेना लेकर स्वीडन का राजा गस्टेवस अडॉल्फस युद्ध में आ गया और युद्ध का तीसरा विभाग आरंभ हुआ। गस्टेवस बाल्टिक किनारे को अपनाना चाहता था तथा वहाँ से जर्मन सम्राट् का प्रभाव हटाना चाहता था। इसके अतिरिक्त वह कट्टर प्रोटेस्टेण्ट था। जर्मनी के सहधर्मियों की कराह सुन कर उसका हृदय पिघल गया और उसने अपने धर्म को जर्मनी में डूबते समय सहारा

देना चाहा। अतः राजनीतिक तथा धार्मिक दोनों कारणों से वह इस युद्ध में सम्मिलित हुआ।

फर्डिनेण्ड को पहले तो इसकी कुछ चिन्ता न थी। उसने कहा कि वह 'बर्फ़ का राजा' (स्वीडन बड़ा ठंडा देश है) दक्षिण के गर्म मुल्क में आते ही पिघल जायगा। परन्तु ठण्डे मुल्कों के लोग बड़े वीर तथा साहसी होते हैं। जर्मनी के प्रोटेस्टैण्ट राजाओं ने उसके आने को राजनीतिक समझ कर साथ नहीं दिया अतः उसे कुछ दिन ठहरना पड़ा। इसी बीच में टिली के नेतृत्व में कैथोलिक लीग की सेना ने माग्देवर्ग नामक प्रोटेस्टैण्ट नगर पर अधिकार कर लिया और वहाँ के बीस सहस्र पुरुष, स्त्री तथा बच्चों को क्रूरता से कत्ल कर डाला और सारा नगर जला दिया। इस घटना से समस्त यूरोप विस्मित हो गया और प्रोटेस्टैण्ट लोग गस्टेवस से मिल गये। अपने देश पर आक्रमण के भय से सेक्सनी के एलेक्टर (जर्मनी के सम्राट् सात मनुष्यों द्वारा चुना जाता था जो 'एलेक्टर' कहलाते थे) ने भी उससे सन्धि कर ली। इस भाँति बलवान होकर गस्टेवस आगे बढ़ा और सन् १६३१ में टिली को ब्रीटनफ़ील्ड के रणक्षेत्र में करारी मात कर दी। अब सब प्रदेश का अधिपति वही था। फिर उसने कारेन के ड्यूक को हराकर अल्सेस प्रान्त पर अधिकार कर लिया तथा वियाना पर धावा करने की धमकी दी।

इस नाजुक समय में फर्डिनेण्ड को फिर वेलेन्स्टाइन से सहायता की याचना करनी पड़ी तथा वह भी कुछ शर्तों पर तैयार हो गया जिनके अनुसार उसे सेना के अफ़सर नियत करने तथा विजित भूमि को यथेच्छ बाँटने अथवा अपने पास रखने का

अधिकार था। इसी बीच में फ्रेडरिक आग्सवर्ग में आया जहाँ उसका खूब स्वागत किया गया। उसने टिली को हरा दिया तथा टिली भी उसी युद्ध में मारा गया। गस्टेवस ने नरमबर्ग स्थान पर अधिकार कर लिया था। अब वेलेन्स्टाइन उसकी प्रगति रोकने के लिये उस ओर बढ़ा। दोनों अजेय वीर सामने हुए और धावा करने के लिये उचित अवसर की बाट में तीन मास तक डेरा डाले रहे। दोनों के पास साठ तथा सत्तर हज़ार मनुष्यों की सेनायें थीं, अतः दोनों यह देखते रहे कि देखें शत्रु अपनी सेना को कितने दिनों तक खिला सकता है। समस्त यूरोप की आँखें इनकी ओर लगीं हुई थीं। अन्त में अन्न समाप्त हो जाने पर पहले गस्टेवस बढ़ा, परंतु पीछे हटा दिया गया। फिर वेलेन्स्टाइन सेक्सनी की ओर बढ़ा। दिन ठंडा तथा अँधेरा था। कुहरे से धोखा खाकर गस्टेवस शत्रु सेना के सन्मुख आ गया। अकस्मात् दो गोलियाँ उसके आकर लगीं जिनसे घायल होकर वह गिर पड़ा और मर गया। यह सन् १६३२ का लुटज़न का प्रसिद्ध युद्ध है। समस्त यूरोप ने उसके लिये आँसू बहाये और उसकी वीर सेना ने क्रुद्ध होकर अपने से अधिक वेलेन्स्टाइन की सेना को पीछे हटा दिया।

गस्टेवस के एक छोटी लड़की थी। उसके मंत्री आक्सनस्टर्न ने उसकी नीति जारी रखी परन्तु दो ही वर्ष बाद उसकी सेना नारडिंगन स्थान पर हराकर जर्मनी से भगा दी गई। यह युद्ध भी उतने ही महत्त्व का है जितना बीटन्सफील्ड का। उस युद्ध से प्रोटेस्टैण्ट धर्म की रक्षा हुई। इसने कैथोलिक धर्म को नष्ट होने से बचाया। दक्षिण जर्मनी कैथोलिक बना रहा।

अब वेलेन्स्टाइन ने—जो कभी हँसता न था तथा जो अपने

सिपाहियों को लूट के लिये अथवा कत्ल के लिये आज्ञा देने के लिये ही अपना मुँह खोलता था, समस्त यूरोप का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। उसकी बढ़ी हुई शक्ति से सम्राट् को भी भय था। अब उस पर यह सन्देह किया गया कि वह स्वयं सम्राट् बनने के लिये शत्रु दल से गुप्त परामर्श कर रहा है अतः सम्राट् फर्डिनेण्ट ने उसका बल नष्ट करना चाहा। उसके सिपाहियों को लालच देकर अलग किया गया। फिर उसके सब विश्वस्त अफ़सरों को एक दावत के लिये बुलाया गया और वहीं उन सब को परमधाम पहुँचा दिया गया। फिर १६३४ में सम्राट् के इशारे से वह भी मार डाला गया। सम्राट् ने उसके लिये गिरजों में बहुत सी प्रार्थनायें कहलाई।

गस्टेवस तथा वेलेन्स्टाइन के युद्धक्षेत्र से हट जाने के बाद से सन् १६३५ से फ्रेंच विभाग का आरम्भ हुआ जो युद्ध के अन्त तक चला। इन वर्षों में कोई मनोरंजक बात नहीं हुई।

नारडिंगन के युद्ध के बाद जर्मनी में सम्राट् का अधिकार दृढ़ हो गया। अब प्रोटेस्टैण्ट लोगों को भी कहीं से आशा न थी। पड़ोसी फ्रांस धर्म में कैथोलिक था परन्तु और कहीं से आशा न देख कर उन्होंने फ्रांस की ही शरण ली। सौभाग्य से फ्रांस में इस समय प्रसिद्ध तथा राजनीतिज्ञ मंत्री रिचलू का शासन था। यदि वह न आता तो दोनों दलों में संधि हो गई होती परन्तु जर्मनी के हेप्सबर्ग वंश को दमन करना, फ्रांस की परम्परा की नीति थी अतः रिचलू ने सन् १६३५ में प्रोटेस्टैण्ट लोगों का पक्ष ग्रहण करके सम्राट् के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। अब यह युद्ध जर्मनी का आन्तरिक तथा धार्मिक युद्ध न रहा, अब

यह जर्मनी के हेप्सवर्ग तथा फ्रांस के बोर्लोन वंशों में जर्मनी में प्रभुत्व के लिये युद्ध था। स्पेन जर्मनी के साथ था।

रिचलू ने सेवाय के ड्यूक तथा डच लोगों को भी अपनी ओर मिला लिया और स्वीडन भी उसके साथ था। स्वीडन के जनरल बरनार्ड तथा डच लोगों ने मिलकर सम्राट् तथा स्पेन की सेना को कई बार हराया, इसी समय वरनार्ड मर गया और रिचलू की नीति से ही पुर्तगाल तथा स्पेन में झगड़ा हो गया जिससे स्पेन को रणक्षेत्र से हटना पड़ा। फ्रांस अकेला समस्तभूमि का शासक हो गया और उसने नीदरलैण्डस् के कुछ स्थानों पर अपना अधिकार कर लिया। इसी समय रिचलू तथा फ्रांस का राजा लुई तेरहवाँ भी मर गया और उसका पुत्र लुई चौदहवाँ गद्दी पर बैठा। पुराने वीर सेनापति कोन्डी ने सम्राट् की सेना को फिर हरा दिया।

सन् १६३७ में फर्डिनेण्ड द्वितीय की भी मृत्यु हो गई और फर्डिनेण्ड तृतीय सम्राट् हुआ। संधि की चर्चा हुई पर सन्धि न हो सकी। अब फ्रांस के जनरल कोन्डी तथा ट्यूरेन की सेना ने सम्राट् की सेना को फ्रीवर्ग (१६४२), नारडिंगन (१६४५) और लेन्स (१६४८) आदि कई स्थानों पर हराया जिसमें सम्राट् की अक़ल ठिकाने आ गई और उसने फिर सन्धि की प्रार्थना की जिसके फलस्वरूप सन् १६४८ की वेस्टफालिया की प्रसिद्ध सन्धि हुई। इससे तीस वर्षीय युद्ध और जर्मनी के धार्मिक झगड़ों का अन्त हुआ, और यूरोप का नक्शा बिलकुल बदल गया। यूरोप के इतिहास में यह सन्धि बड़े महत्त्व की है। इस सन्धि से धर्म संशोधन (रिफार्मेशन) का काल समाप्त होता है।

इस सन्धि की प्रधान शर्तें इस प्रकार थीं। **धार्मिक**—आग्सबर्ग की सन्धि का अनुमोदन किया गया अर्थात् राजकुमारों के पास अपने अपने राज्य के लिये धर्म नियत करने का अधिकार रहने दिया। परन्तु व्यक्तिगत धार्मिक स्वतंत्रता नहीं दी गई। कैथोलिक, लूथर तथा काल्विन आदि सब मतों के लोगों को बराबरी का अधिकार दिया गया, सभाओं आदि में भी उनकी संख्या बराबर नियत की गई। भूमि-सम्बन्धी झगड़ा इस प्रकार निबटाया गया कि १६२४ का पहला दिन 'जांच का दिन' नियत किया गया। उस दिन जो भूमि प्रोटैस्टेएट लोगों के पास थी वह उन्हीं के पास रही तथा जो कैथोलिकों के अधिकार में थी वह उनकी ही रही।

देशीय परिवर्तन—कैथोलिक धर्म की अपेक्षा साम्राज्य को बहुत अधिक क्षति पहुँची। जर्मनी और भी अधिक विभागों में बँट गया। ब्रेडनबर्ग, बेवरिया, सेक्सनी तथा अन्य छोटी रियासतें जिनकी संख्या साढ़े तीन सौ के लगभग थी, पूर्ण स्वतंत्र हो गई; उन्हें आपस में मिलने, लड़ने झगड़ने तथा विदेशों से संधि अथवा युद्ध करने का पूरा अधिकार था। फलतः सम्राट् का अधिकार नाम मात्र को रह गया, जर्मनी स्वतंत्र रियासतों का एक ढीला गुट बन गया। जर्मन राष्ट्र का विचार धूल में मिल गया और राष्ट्र कहलाने के लिये दो सौ वर्ष तक बाट देखनी पड़ी।

अल्सेस प्रांत तथा मेज़, टोल और वर्डून (लारेन प्रांत में) फ्रांस के अधिकार में रहे। अल्सेस हाथ में आने से फ्रांस के लिये राइन प्रदेश और जर्मनी का दरवाज़ा खुल गया, परन्तु अल्सेस का झगड़ा फ्रांस तथा जर्मनी में रुक रुक कर अनेक वर्षों तक

चलता रहा; अब भी चल रहा है। स्वीडन को ब्रेमेन, वर्डेन के नगर तथा पोमरानिया प्रांत का पश्चिमी भाग—पूर्वी भाग ब्रेडन-वर्ग को दिया गया और पचास लाख क्राउन मिले, स्वीडन की विजय की यह चरमसीमा थी। इस समय से वह यूरोप की बड़ी शक्तियों में गिना जाने लगा और बाल्टिक पर भी उसका अधिकार हो गया परंतु रूस तथा ब्रेडनवर्ग ने उसकी उन्नति रोक दी।

ब्रेडनवर्ग को पश्चिमी पोमरानिया खोने के बदले मेग्डेवर्ग आदि कई स्थान मिले और यह जर्मनी में सब से बड़ा राज्य हो गया। यहीं से उसकी उन्नति आरम्भ हुई और शीघ्र ही आस्ट्रिया को हराकर जर्मनी में प्रधान हो गया।

उत्तरी पेलेटिनेट बेवरिया के मेक्सीमिलियन के पास रहा। एलेक्टर का पद भी उसी के पास रहा, परंतु फ्रेडरिक (एलेक्टर पेलेटाइन) के पुत्र चार्ल्स लुई को दक्षिणी पेलेटिनेट देकर आठवाँ एलेक्टर बना दिया गया।

स्वीज़रलैण्ड तथा नीदरलैण्डस् स्वतंत्र घोषित किये गये।

महत्व—इस संधि से यूरोपीय इतिहास का एक विभाग समाप्त हो जाता है, धार्मिक झगड़ों का अंत होकर युरोप में राजनीतिक विप्लवों का युग आरंभ हुआ। राष्ट्र अपना संगठन करने और विस्तार बढ़ाने में लगे। युरोप के नक्शे में महान् परिवर्त्तन हुआ। सम्राट् तथा स्पेन की शक्ति घटी और उनका स्थान फ्रांस तथा ब्रेडनवर्ग ने लिया तथा लोगों में धार्मिक सहानुभूति के विचार दृढ़ हुए।

इस प्रकार यह युद्ध धार्मिक झगड़ों के कारण आरंभ होकर राजनितिक रूप धारण कर समस्त यूरोप में फैल गया। जर्मनी

पर इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। युद्ध तथा अकालों के कारण आबादी तिहाई रह गई अर्थात् ३ करोड़ से घटकर केवल १ करोड़ २० लाख रही। बर्लिन में २४००० में से केवल चौथाई मनुष्य शेष बचे। कृषि, उद्योग, साहित्य, कला, विज्ञान, सदाचार आदि सब का ह्रास हुआ और सम्राट् की शक्ति भी जाती रही।

नवाँ अध्याय

पूर्वी तथा उत्तरी यूरोप

रूम [टर्की]—हम देख चुके हैं कि रूम के वर्त्तमान राज-वंश (जिसका अंतिम बादशाह अब्दुलमजीद कमालपाशा द्वारा अब राज्यच्युत कर दिया गया है) की नींव तेरहवीं शताब्दी में पड़ी थी। एरतोग़रल नामक एक सरदार ने अंगोरा के पास एक लड़ाई में वीरता दिखा कर, सलजक सुलतान से काले सागर के पास कुछ भूमि इनाम पाई और मंगोलों तथा यूनानियों को हराया। तेरहवीं शताब्दी के अंत में सलजक वंश का अंत होने पर (सलजक वंश में ही भयंकर चंगेज़खाँ का जन्म हुआ था जिसने भारत पर भी आक्रमण करने का विचार किया था) उसके देश पर एरतोग़रल के पुत्र उस्मान ने अपना अधिकार जमा लिया और बड़ी शीघ्रता से उसे बढ़ाया। तुर्क लोग उसी को पहला सुलतान मानते हैं, उसके बाप को नहीं।

चौदहवीं शताब्दी के मध्य में तुर्कों ने युरोप में अपना पैर जमाया तथा धीरे धीरे अपना अधिकार बढ़ाते गये, यहाँ तक कि पूर्वी साम्राज्य (पूर्वी रोमन साम्राज्य) का अधिकार केवल

कुस्तुन्तुनिया के ही आस पास कुछ स्थानों पर रह गया। अंत में १४५३ में मुहम्मद द्वितीय ने कुस्तुन्तुनिया को जीतकर पूर्वी साम्राज्य का अंत ही कर दिया। उसके नाती सलीम ने जो बड़ा भयानक तथा युद्ध-प्रिय था, फ़ारस, शाम (सीरिया) तथा मिश्र (इजिप्ट) को भी जीतकर तुर्क साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया। मिश्र की जीत से तुर्की के सुलतान खलीफ़ा पद के भी अधिकारी समझे जाने लगे और इस भाँति वे राज्य तथा धर्म दोनों ओर से इस्लाम के प्रधान हुए।

सलीम सन् १५२० में मरा तथा उसका पुत्र सुलेमान गद्दी पर बैठा। उसके समय में तुर्क साम्राज्य उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर पहुँच गया। १५२९ में वह ढाई लाख सेना लेकर वियाना में गया परन्तु खाने की कमी तथा प्रतिकूल ऋतु के कारण उसे लौटना पड़ा। फिर सम्राट् चार्ल्स पञ्चम ने उससे सन्धि कर ली। तुर्की में सुलेमान का राज्य बहुत उज्वल तथा महत्वपूर्ण समझा जाता है। उसने कई नियम बनाकर देश की आन्तरिक दशा को सुधारा तथा उसके समय में धार्मिक और साहित्यिक उन्नति हुई। वह स्वयं भी फ़ारसी और अरबी में कविता करता था।

उसके बाद सन् १५६६ में सलीम द्वितीय बादशाह हुआ। उसने साइप्रस द्वीप में अपना अधिकार कर लिया। परन्तु जब वह यूरोप की ओर बढ़ा तो आस्ट्रिया के डॉन जॉन के नेतृत्व में वेनिस तथा पोप की सम्मिलित सेना ने सन् १५७१ में लीपाण्टो की खाड़ी में उसे हरा दिया। इस बड़े युद्ध में उसकी बड़ी क्षति हुई। चौरानवे तुर्क जहाज़ डुबाये तथा जलाये गये। १३० जहाज़ ईसाइयों ने अपने अधिकार में कर लिये तथा पन्द्रह सहस्र तुर्क लोग

मारे गये। इसके बाद वे लोग कहने लगे कि खुदा ने उन्हें सिर्फ ज़मीन का राज्य दिया है और समुद्र का राज्य काफ़िरों के लिये छोड़ दिया है।

सत्रहवीं तथा अठारहवीं शताब्दी में इनकी अवनति जारी रही। तो भी सन् १६८२ में वज़ीर मुस्तफ़ा ने हेप्सवर्ग वंश को कुचलने का इरादा किया परन्तु पोलेण्ड के जॉन सोविस्की ने आकर उन्हें वियाना में कटारी मार दी। तुर्कों की बड़ी सेना तितर वितर होकर भाग खड़ी हुई। विजयी सेना ने उनका पीछा किया, इस पर वे अपनी स्त्रियों तथा बच्चों को क़त्ल करके यूरोप से भाग आये। सोविस्की ने धूमधाम से स्वागत के साथ वियाना में प्रवेश किया परन्तु कृतघ्न सम्राट् ने उसके सिपाहियों को खाना तक न दिया। इसके बाद रूस के विरोध के लिये फ्रांसीसियों तथा अंग्रेज़ों ने तुर्कों की मदद की जैसा कि हम आगे पढ़ेंगे।

स्वीडन और डेनमार्क—सोलहवीं शताब्दी में क्रिश्चियन द्वितीय डेनमार्क, स्वीडन तथा नारवे तीनों का राजा था परन्तु इन देशों में एकता अथवा राष्ट्रीयता के भाव न थे और उनके झगड़े आपस में सदा चलते रहे। कुछ दिन बाद स्वीडन स्वतन्त्र हो गया और सोलहवीं शताब्दी के मध्य में वहाँ गस्टेवसवासा को गद्दी मिली जिससे यूरोप में एक नये वीर तथा बुद्धिमान राज्यवंश का आरम्भ हुआ। गस्टेवस अडालफ़स भी इसी वंश में हुआ। वह सत्रह वर्ष की अवस्था में ही सैनिक शिक्षण भली-भाँति पा चुका था तथा राजनीति में भी चतुर था। वह प्रोटेस्टेंण्ट मत को चाहता था तथा काव्य और संगीत से भी प्रेम रखता था। वह लम्बा ऊँचा, सुन्दर तथा वीर था, जैसा कि हम तीस-

वर्षीय युद्ध में देख चुके हैं। उसके समय में स्वीडन एक शक्ति-मान राज्य हो गया और यूरोप के अन्य राजा उसकी सहायता चाहने लगे अतः उसने फ्रांस से सन्धि की। परन्तु स्वीडन की उन्नति आसपास के छोटे २ देशों डेनमार्क, जर्मनी, पोलेण्ड, रूस आदि को दबाकर हुई थी अतः ये देश बदला लेने का अवसर ताकते रहे। १६९७ में जब एक पन्द्रह वर्ष का बालक—चार्ल्स बारहवाँ राजा हुआ तो डेनमार्क, पोलैंड और रूस ने मिलकर उससे देश छीनना चाहा। परन्तु चार्ल्स बचपन से ही बड़ा लड़ाका था। इस संगठन का समाचार सुनकर उसने डेनमार्क पहुँच कर वहाँ के राजा को संधि के लिये विवश किया फिर झपट कर रूस के पीटर पर धावा मारा और हराकर उसे भी भगा दिया, फिर पोलैण्ड के राजा आगस्टस को भी हराकर उसने यूरोप को चकित कर दिया।

दसवाँ अध्याय

नई दुनिया की खोज

पश्चिमी यूरोप की पाँच जातियों के परिश्रम के फल से ही आज हमारा भौतिक ज्ञान इतना अधिक बढ़ गया है। इसका प्रथम कारण उनका वीर तथा साहसी होना है। भारतवासी लोगों ने समुद्र पार करने का कभी प्रयत्न न किया। वे सागर तथा पर्वतों को अगम्य समझ कर हाथ पर हाथ रखे बैठे रहे परन्तु पश्चिम के लोग प्रकृति के रहस्य जानने के लिये सदा बड़े उत्सुक रहे हैं तथा अपनी जान की परवाह न कर, ऐसे २ कामों

में हाथ डाला है, जो असंभव समझे जाते थे। भारतवासी अपने ही घर में हिमालय की ऊँचाई का पता न लगा सके और उसे भी अगम्य समझ कर बैठे रहे परन्तु पश्चिमी लोग आज सहस्रों कोसों से उसका पता लगाने आ रहे हैं। दो बार असफल होकर भी उन्होंने हिम्मत नहीं हारी और कौन कह सकता है कि उन्हें सफलता नहीं मिलेगी। वास्तव में दृढ़ता तथा वीरता आदि गुणों के कारण ही यूरोप की जातियाँ आज संसार भर में अपना अधिकार जमाये हुए हैं—अस्तु।

यूरोपीय लोगों के बाहर निकलने का दूसरा कारण जैसा कि हम देख चुके हैं व्यापारिक था। उन्हें अपना व्यापार बढ़ाने के लिये नये देशों तथा नये मार्गों की आवश्यकता थी। तीसरा कारण धार्मिक भी इन्हीं में सम्मिलित हो गया। जब यूरोप में धार्मिक लड़ाई तथा असहिष्णुता फैली तो नये धर्मवालों को ऐसे स्थान की आवश्यकता हुई जहाँ वे अपना धर्म शांतिपूर्वक रक्षण कर सकें, तथा स्वतंत्रतापूर्वक अपनी पूजा तथा प्रार्थना आदि कर सकें। इन्हीं कारणों से नये २ देशों की खोज हुई तथा यूरोप में ज्यों २ धार्मिक अत्याचार बढ़ते गये त्यों २ इन नये प्रदेशों की जनसंख्या बढ़ती गई।

यूरोप के समुद्रों पर क्रमशः इन्हीं पाँच जातियों का प्राधान्य रहा। स्पेन तथा पुर्तगालवालों का पन्द्रहवीं तथा सोलहवीं शताब्दी में, हालैण्ड तथा फ्रान्सवालों का सत्रहवीं और अठारहवीं से लगा कर अबतक भी है। स्पेन वाले नये देशों का पता लग जाने पर पहले पहल उनसे खनिज द्रव्य—सोना और चाँदी निकालने के लिये गये थे तथा फिर पुर्तगालवाले व्यापार के

लिये गये। डच (हालैण्डवाले) लोगों का भी उद्देश्य व्यापारिक था तथा अँगरेज़ों का व्यापार तथा कृषि करना था।

इन खोजों से भौगोलिक ज्ञान बहुत बढ़ा। इस समय से पहले एक बड़े से बड़े विद्वान् को जितना भौगोलिक ज्ञान था उसे सुनकर आज एक मिडिल क्लास का बच्चा भी हँसेगा। इन देशों से व्यापार के साथ २ यूरोपीय देशों की समुद्री सेना भी बढ़ी। इससे पहले यूनानी लोग मिश्र और कास्पियन सागर के रास्ते तथा इटलीवाले फ़ारस की खाड़ी के रास्ते से भारत के साथ व्यापार करते थे परन्तु अब पश्चिमी सागर व्यापार के प्रधान केन्द्र हुए।

इन खोजों का आरम्भ पुर्तगाल के लोगों ने किया। हेनरी नेवीगेटर (समुद्र का शौक़ अत्याधिक होने के कारण यह राजकुमार नेवीगेटर अर्थात् मल्लाह कहलाता था) के समय में इन लोगों का ध्यान अफ्रीका की ओर गया और पन्द्रहवीं शताब्दी में उस देश के किनारों का बहुत कुछ भाग ढूँढ़ लिया गया। सन् १४८६ में बारथोलोम्यू डिआज़ अफ्रीका के अन्तिम दक्षिणी अन्तरीप पर पहुँच गया। परन्तु वहाँ तूफ़ान अधिक होने के कारण उसने उस स्थान का नाम ही 'तूफ़ानों का अन्तरीप' (केप ऑफ़ स्टोर्म्स) रक्खा। परन्तु कुछ लोगों को यह आशा हुई कि कदाचित् भारत के रास्ते का पता यहाँ से लग जाय। अतः उसका नाम बदल कर 'आशा का अन्तरीप' (केप ऑफ़ गुडहोप) रक्खा गया। डिआज़ को अपने भ्रमण के शुभ परिणाम का पता न था तथा भारत का रास्ता खोज निकालने का श्रेय वास्को डिगामा नामक एक मल्लाह को मिला जो १४८७ में कालीकट में पहुँच गया। कुछ मल्लाहों के साथ जहाँ से वह रवाना हुआ

था वहाँ आज भी एक मठ बना है। उसे मार्ग में अनेक कठिनाइयाँ उठानी पड़ीं और भारत आने में पूरा एक वर्ष लगा। इसी समय एक दूसरी जलसेना ने दक्षिणी अमेरिका में ब्राज़िल का पता लगाया। अब पुर्तगाल एक समृद्ध राज्य होगया परन्तु थोड़े ही दिन बाद स्पेन ने उसे दबा दिया।

भारत में पुर्तगाल राज्य का संस्थापक अलबुकर्क समझा जाता है। उसने १५०७ में फारस की खाड़ी में उर्मुज़ नामक स्थान पर अधिकार कर लिया। फ़ारस के राजा के कर माँगने पर उसने तोप की ओर इशारा करके कहा कि हमारा राजा ऐसे सिक्कों से कर अदा करता है। फिर वह भारत में आया और गोआ को अपना केन्द्र बनाकर लंका, मलाया आदि द्वीपों में व्यापार बढ़ाया।

अमेरिका—अमेरिका की खोज इतिहास में एक बड़ी घटना है। सब से पहले यह बात कोलम्बस के ध्यान में आई कि हमारी पृथ्वी के उस ओर एक दूसरा बड़ा भाग है और एक ही ओर लगातार चल कर हम वहाँ पहुँच सकते हैं। उसका विचार था कि शायद उसी देश को भारत कहते हैं। वह स्वीजरलैण्ड के पास जिनोवा का रहने वाला था परन्तु वहाँ के लोगों ने उसके विचार सुन कर उसे पागल समझा और उसकी बातों पर ध्यान न दिया। परन्तु वह अपने विचार पर दृढ़ था। उसने पुर्तगाल, इंगलैण्ड, फ्रांस, जिनोवा आदि कई देशों के राजाओं से सहायता माँगी परन्तु उसे सफलता न हुई। आठ वर्ष बाद स्पेन की रानी आइज़ाबेला ने उसे जहाज़ तथा धन-जन देकर सहायता दी।

अक्तूबर सन् १४९२ में वह जहाज़ लेकर पश्चिम की ओर लगातार चलता गया। जब चलते २ बहुत दिन हो गये और चारों ओर समुद्र के अतिरिक्त कुछ और दिखाई न दिया तो उसके साथियों ने उसे गालियाँ दीं और कहा कि अब भी लौट चलो नहीं तो हम तुम्हें समुद्र में फेंकते हैं। परन्तु कोलम्बस का आत्मविश्वास बड़ा प्रबल था। अतः उसने उनसे कुछ दिन और शान्त रहने की प्रार्थना की। अन्त में तेंतीस दिन लगातार आगे बढ़ने के बाद उसे सामने पृथ्वी फैली हुई दिखाई दी। सब मल्लाहों के जान में जान आई। वे लोग वहाँ उतर पड़े और इधर उधर चक्कर लगाने लगे। यहाँ की प्रत्येक बात विचित्र थी। फिर उसने क्यूबा आदि और द्वीपों का पता लगाया और इन्हें ही भारत के पास के द्वीप समझ कर उनका नाम 'भारती द्वीप' रखा। सात महीने बाद बहुत सा सोना तथा वहाँ के कुछ आदमियों को साथ लेकर वह स्पेन वापिस आया तो रानी ने उसका बड़ा आदर किया और उसके कार्यों पर आश्चर्य प्रकट किया, और उसे नई दुनिया का वाइसराय बना दिया। दूसरे वर्ष जाकर उसने जमैका द्वीप का पता लगाया। इन खोजों से लोगों का उत्साह बहुत बढ़ा।

१४९८ में वह तीसरी बार भ्रमण के लिये चला और इस बार महाद्वीप की भूमि पर पहुँच गया। परन्तु जब वह १५०४ में चौथी बार वहाँ गया तो वहाँ वालों ने उसे आश्रय न दिया। वह अपने जहाज में साल भर तक जमैका के आसपास चक्कर लगाता रहा। अन्त को दुखी होकर उसने आइज़ाबेला को एक करुणापूर्ण पत्र लिखा और अधिक सहायता माँगी। उस

ने यह भी लिखा 'बीस वर्ष तक निरन्तर श्रम करने और अपनी जान जोखिम में डालने से मुझे क्या लाभ हुआ? इस समय केस्टाइल (स्पेन का एक प्रान्त) में मेरा एक मकान भी नहीं है। यदि मैं खाना, पीना अथवा सोना चाहता हूँ तो वहाँ मुझे सराय का ही आश्रय लेना पड़ता है। खर्च देने को प्रायः मेरे पास कुछ नहीं होता......। परन्तु उसने जितना संसार का उपकार किया, स्पेन ने उसके साथ उतनी ही कृतघ्नता की। जब वह सफ़र से लौट कर आया तो सहस्रों लोग उसके दर्शनों को आये परन्तु उन्होंने उसे लोहे की बेड़ियों से बँधा पाया। उसके द्वारा खोजा हुआ महाद्वीप भी उसके नाम से प्रसिद्ध न हुआ। फ्लोरेन्स का एक सौदागर अमेरिगो, जिसकी वहाँ पर एक इञ्च भी भूमि न थी, केवल जिसने वहाँ जाकर कुछ आन्तरिक स्थानों में भ्रमण करके अपने को सबसे पहला पता लगाने वाला प्रकट किया, उसी के नाम से महाद्वीप का नाम भी अमेरिका पड़ा। कोलम्बस को उपकार का यह बदला मिला; परन्तु संसार उसका ऋणी है और उसके नाम को कभी भूल नहीं सकता।

इसी समय पुर्तगाल वालों तथा अंग्रेजों ने उत्तरी अमेरिका का भी पता लगा लिया। वहाँ से सोना लाने के लोभ से बहुत लोग वहाँ पहुँचे, परन्तु उन्हें वहाँ घर बसा कर रहना पसन्द न था। इनमें से बहुत से अधिक श्रम, भिन्न जलवायु तथा वहाँ के निवासियों की क्रूरता के कारण मर गये। धीरे २ फ़्लोरिडा, यूकेटन तथा मेक्सिको आदि भी छान डाले गये।

ये देश बिलकुल ऊजड़ न थे। वहाँ बड़ी २ बस्तियाँ थीं तथा छोटी २ अनेक रियासतें थीं। उनके ऊपर सम्राट् भी थे। ये

लोग लड़ना खूब जानते थे। स्पेन के सेनापति कोर्टीज़ को इनके साथ कई लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं। उसने इन राजाओं को हरा दिया; सम्राट् को क़ैद कर लिया और एक राजा को उसके पुरोहित सहित जलवा दिया।

इसके बाद मेगेलन नामी मल्लाह दक्षिण अमेरिका के छोर पर पहुँचा और उसने सब से पहले पृथ्वी की परिक्रमा की।

डच लोगों ने भी खोज में बहुत सहायता दी। धार्मिक तथा व्यापारिक ईर्षा के कारण स्पेनवालों ने उन्हें अपने स्थानों से भगा दिया, परन्तु इससे भी लाभ ही हुआ। उन लोगों ने पूर्व में खोज की और अपनी जल-सेना बढ़ाई जिससे कुछ काल तक हालैंड बहुत बलवान् रहा। एक फ्रांसीसी जेक कार्टियर ने सेन्ट लारेन्स नदी की घाटी का पता लगाया तथा अफ्रिका के पूर्व में मैडागास्कर नामक एक बड़ा टापू बसाया। अंग्रेज लोग सबके पीछे गये परन्तु सब से मीर बन गये।

इतने पर भी अमेरिका का सबसे बड़ा प्रान्त छिपा था। एक दिन स्पेनवाले जब कुछ सोना तौल रहे थे तो वहाँ के एक निवासी ने उनसे कहा कि यहाँ से दक्षिण में दो दिन के रास्ते पर ऐसा देश है जहाँ ऐसा सोना ज़रा २ से कामों में खर्च किया जाता है। दो सिपाही पिज़ारो और अल्मेगो वहाँ चल दिये और पता लगाकर पहुँच गये। वास्तव में यहाँ सोना बेहद था। उन्होंने इसका नाम पीरू रखा।

यह भी उस समय एक रियासत थी और यहाँ इंका वंश का राजा राज्य करता था। उस वंश का सबसे प्रथम पुरुष, जिसने वहाँ के नियम तथा नीतिशास्त्र आदि बनाये, सूर्य का पुत्र बत-

लाया जाता था (कदाचित् भारत के वैवस्वत मनु से ही आशय हो क्योंकि भारतवासी इसी लोक को पाताल लोक कहते थे)। ये लोग शिक्षित तथा सभ्य थे। इमारतें बनाने में चतुर थे। सड़कें भी थीं। उनका राजा सोने के सिंहासन पर बैठ कर निकला करता था। उनका वर्ष भी ३६५ दिन का होता था। उस समय के राजा का नाम अताहुअल्प था।

पिज़ारो ने कुछ घुड़सवार, पैदल तथा बन्दूकें लेकर उन पर आक्रमण किया। पिज़ारो ने पहले एक पादरी को बाइबिल की पुस्तक देकर राजा अताहुअल्प के पास भेजा। पादरी ने जाकर राजा से कहा कि इस पुस्तक में जो कुछ लिखा है उसे मानो। राजा ने पुस्तक को लेकर अपने कान से लगाया और जब उसमें से कुछ आवाज़ न आई तो उसे पृथ्वी पर फेंक दिया। इसी बहाने को लेकर पिज़ारो ने उन पर आक्रमण कर दिया। वे लोग युद्ध जानते थे परन्तु तोप, बन्दूक, घुड़सवार आदि को देखकर और तोपों की आवाज़ सुनकर वे डर कर भाग गये। राजा क़ैद कर लिया गया परन्तु उसने छुटकारे की प्रार्थना की और हाथ ऊपर को उठा कर बताया कि मैं इसके बदले इतना सोना दूँगा। प्रत्येक सवार ने २६०, प्रत्येक पैदल ने १६० सोने के तथा इससे दस-गुने चाँदी के सिक्के लिये। अफ़सरों ने भरपूर धन लिया तथा उस में से कुछ सम्राट् चार्ल्स पंचम के पास भी भेजा। परन्तु इतने पर भी बाइबिल की क़सम खाकर दयावान बननेवाले ईसाइयों ने राजा को जीवित न छोड़ा। उससे सब रुपया लेकर उसे भी मार डाला।

फिर ये लोग गिनी देश की ओर बढ़े, परन्तु बीच ही में

मुखिया सिपाहियों में तकरार हो गई। पिज़ारो ने अलमेगो को हरा कर क़ैद कर लिया परन्तु पीछे से वह भी मार डाला गया। फिर धीरे २ इन प्रदेशों में मिशनरियों द्वारा ईसाई मत का प्रचार किया गया और यूरोपीय देशों ने उन्हें आपस में बाँट लिया।

—*:❀:*—

ग्यारहवां अध्याय

इङ्गलैण्ड का स्टुअर्ट वंश

हेनरी सप्तम ने इंगलैण्ड में ट्यूडर वंश स्थापित किया था परन्तु एलिज़ाबेथ के वाद उस वंश का कोई समीपी उत्तराधिकारी न रहा। अव तक स्काटलैण्ड को इंग्लैंड में मिलाने का कई बार प्रयत्न किया गया था, परन्तु स्काटलैण्ड वाले मेल के लिये तैयार नहीं थे। इस पर एक राजा ने कहा कि यदि ऐसा है तो इंगलैण्ड को ही स्काटलैण्ड से मिल जाना चाहिये। वास्तव में अन्त में वैसा ही हुआ। हेनरी सप्तम ने अपनी एक पुत्री मारगरेट का व्याह स्काटलैण्ड के राजकुमार जेम्स चतुर्थ से कर दिया था। इस समय वहाँ जेम्स चतुर्थ की पोती मेरी का पुत्र जेम्स छठवें के नाम से राज्य कर रहा था और कोई उत्तराधिकारी न पाकर इंगलैण्ड वालों ने भी उसे अपना राजा माना और वह इंगलैण्ड में जेम्स प्रथम के नाम से गद्दी पर वैठा क्योंकि यहाँ उस नाम का कोई राजा अव तक नहीं हुआ था। दोनों राज्य एक होते हुए भी उनके नियम, पार्लमेण्ट, शासन-व्यवस्था आदि भिन्न २ ही रहे।

जेम्स राजनीतिज्ञ नहीं था और तलवार की सूरत देखकर तो वह पीला पड़ जाता था। वह अपने स्काटलैण्ड के साथियों से

घिरा रहता था। अतः अँग्रेज़ उससे अप्रसन्न रहे। उसके अतिरिक्त जेम्स राजाओं के 'ईश्वर-प्रदत्त अधिकार' (डिवाइन राइट ऑफ़ किंग्स) का बड़ा पक्षपाती था। जिसका मतलब था कि राजा ईश्वर का प्रतिनिधि है, उसे इच्छानुसार राज्य करने का पूरा अधिकार है और प्रजा को उसके कार्यों में हस्तक्षेप करने का कोई हक़ नहीं है। परन्तु इंगलैण्ड की प्रजा आरम्भ से ही स्वतंत्रताप्रिय रही है। वह राजाओं की शक्ति इतनी कभी नहीं बढ़ने देना चाहती जिससे वे अत्याचारी हो सकें। आरंभ से ही उसे राजाओं से अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिये कई लड़ाइयाँ लड़नी पड़ी हैं। अतः वह जेम्स से भी इसी बात पर अप्रसन्न हो गई। इसके अतिरिक्त राजा का पार्लमेण्ट के बिना पूछे कर उगाहना, कैथोलिक-लोगों के प्रति सहानुभूति रखना आदि बातें भी लोगों को पसन्द न आईं और इन बातों पर राजा तथा पार्लिमेण्ट में प्रायः झगड़ा ही होता रहा।

जेम्स में सब से बड़ा दोष यह था कि प्रजा की इच्छा के विरुद्ध भी इंगलैण्ड में कैथोलिक धर्म को फिर स्थापित करने का सदा प्रयत्न करता रहा। उसने कैथोलिक लोगों को कुछ रियायतें दीं परन्तु वे भी इतने से सन्तुष्ट न हुए और उन्होंने पार्लियामेण्ट भवन के नीचे के हिस्से में बारूद भर कर राजा तथा पार्लमेण्ट-दोनों को नष्ट करना चाहा परन्तु उसका पता लग गया और विद्रोहियों को मृत्युदण्ड दिया गया।

उसकी विदेशी नीति से भी लोग अप्रसन्न थे। वे चाहते थे कि जेम्स तीस वर्षीय युद्ध में अपने दामाद फ्रेडरिक को सहायता देकर प्रोटेस्टेण्ट दल की शक्ति बढ़ावे, परन्तु वह चुपचाप रहा।

१६२५ में उसका पुत्र चार्ल्स गद्दी पर बैठा। उसने अपने पिता

की नीति जारी रक्खी। उसके समय में राजा और पार्लमेण्ट का झगड़ा बहुत बढ़ गया। राजा कैथोलिकों का पक्षपाती था और उसने बकिंघम के ड्यूक को अपना मंत्री बनाया; परंतु प्रजा बकिंघम के कार्यों से बहुत नाराज़ थी और उसे निकलवाना चाहती थी। उसकी रक्षा के लिये चार्ल्स ने पार्लमेण्ट को ही भंग कर दिया। फिर उसने यह समझकर कि युद्ध करने से लोगों का ध्यान बट जायगा, बकिंघम के नेतृत्व में एक सेना स्पेन को भेजी और एक फ्रांस के प्रोटेस्टैण्ट लोगों की मदद को। परन्तु दोनों जगह की सेनाएँ हारीं जिससे कोष खाली हो गया और प्रजा का असन्तोष और भी अधिक बढ़ गया। अब राजा को धन के लिये कर लगाने की आवश्यकता हुई; परन्तु कर लगाना पार्लमेन्ट के अधिकार में था और विना पार्लमेन्ट के राजा को कोई कर न देता था। अतः उसने पार्लमेन्ट को फिर बुलाया। पार्लमेन्ट ने कर स्वीकार करने के पहले कुछ अधिकार माँगे। राजा ने उस समय तो उन्हें स्वीकार कर लिया परन्तु फिर उनका पालन न किया। अतः दोनों में पुनः झगड़ा हो गया और पार्लमेण्ट फिर भंग कर दी गई।

इस प्रकार उसने सन् १६२९ में पार्लमेण्ट को दूसरी वार भंग करके दस वर्ष तक बिना पार्लमेन्ट के राज्य किया। इस बीच में उसके सलाहकार स्ट्रैफर्ड का ड्यूक तथा केन्टरबरी का लाट पादरी लॉड—ये दो रहे। राजा ने कई कर लगाये परन्तु शीघ्र ही कई लोग कर देने से साफ़ इनकार करने लगे। इसी बीच में चार्ल्स ने लॉड की बनाई हुई एक पुस्तक का स्काटलैण्ड के गिरजों में प्रचार करना चाहा जिससे वहाँ के पादरियों से

झगड़ा हो गया। द्रव्य की आवश्यकता हुई। एक पार्लमेन्ट बुला कर भंग कर दी गई परन्तु अन्त में फिर तंग आकर राजा को नवम्बर १६४० में फिर पार्लमेन्ट बुलाने की आज्ञा देनी पड़ी। यह दीर्घ पार्लमेन्ट कहलाती है क्योंकि यह बहुत दिनों तक रही। इसमें ऐसे ही लोगों का बहुमत था जिन्होंने राजा पर आक्षेप किये थे अथवा जिन्होंने कर देने से इनकार किया था। इससे ज्ञात होता है कि राजा कितना अप्रिय हो गया था! इसके नेता जान पिम, जान हेम्पडन तथा ओलिवर क्राम्वेल थे। इन्होंने राजा के क्रूर मंत्रियों—स्ट्रैफर्ड तथा लॉड—का वध कराया, और नियमों में भी परिवर्तन किया। यह प्रजापक्ष की भारी विजय थी। स्ट्रैफर्ड के प्राण-दण्ड के बाद लोगों ने हर्ष के मारे अपनी टोपियाँ उठा लीं और गिर्जों में घंटे बजे। इस प्रकार अन्त में राजा की शक्ति टूट गई।

परन्तु दुर्भाग्यवश एक धार्मिक झगड़े पर पार्लमेन्ट में स्वयं ही दो दल हो गये। राजा ने विरोधी दल के पाँच नेताओं को सभा-भवन में जाकर गिरफ्तार करना चाहा परन्तु 'चिड़ियाँ उड़ गईं।' प्रायः समस्त सभासदों ने विद्रोहियों का साथ दिया। इंगलैण्ड दो दलों में बट गया। एक राजा का दल तथा दूसरा पार्लमेन्ट का दल। विश्वविद्यालय तथा छात्र राजा की ही ओर रहे और अधिकांश सरदार भी उसी की ओर थे। परन्तु सेना का एक बड़ा भाग दूसरी हो गया। १६४२ में युद्ध आरम्भ हो गया। पहले राजा की जीत रही। उसके भतीजे रूपर्ट ने बड़ी वीरता दिखाई, परन्तु पार्लमेन्ट को इस समय एक सुयोग्य नेता और सेनापति मिल गया। यह सुप्रसिद्ध ओलिवर क्राम्वेल

था। उसने एक नया दल तुरंत तयार कर लिया और राजा की सेना को मार्स्टन मूर (१६४५) और नेसबी (१६४६) में करारी मात दी। चार्ल्स ने भागकर स्काटलैण्ड में शरण ली परंतु वहाँ वाले भी उससे बहुत अप्रसन्न थे। अतः उन्होंने एक बड़ी रक़म लेकर चार्ल्स को पार्लमेण्ट दल के हाथ में सौंप दिया। चार्ल्स को क़ैद में भी प्रजा की बात मानने को समझाया गया परन्तु वह अपनी ज़िद पर अडा रहा। एक विशेष अदालत उसका विचार करने को बैठाई गई और वह वहाँ बुलवाया गया। वह चुपचाप आकर एक कुर्सी पर बैठ गया। कोई उसके लिये उठ कर खड़ा तक न हुआ। वहाँ प्रजा पर अत्याचार तथा धोखेबाज़ी करने का अभियोग उस पर लगाया गया और १६४९ में उसे मृत्युदण्ड दे दिया गया। इस प्रकार एक राजा को मृत्युदण्ड देकर इंगलैण्ड की प्रजा ने अपनी पूरी शक्ति का परिचय दिया।

कामनवेल्थ—इस भाँति राजा का अन्त होकर इंगलैण्ड में सैनिक प्रजातंत्र राज्य स्थापित हुआ। लार्ड सभा भी भंग कर दी गई तथा इंगलैण्ड में पूर्ण प्रजातन्त्र की घोषणा कर दी गई। उस समय स्काटलैण्ड और आयर्लैण्ड ने मृत चार्ल्स के पुत्र का पक्ष लेकर युद्ध किया परन्तु क्राम्वेल की सेना ने उन्हें हरा दिया। क्राम्वेल ने पहले तो पार्लमेन्ट की सलाह से राज्य किया परन्तु दोनों में मतभेद होने के कारण उसने समस्त राजकाज अपने ऊपर ले लिया।

क्राम्वेल अपनी विदेशी नीति के लिये बहुत प्रसिद्ध है। उसके समय में समस्त युरोप में इंगलैण्ड की धाक जम गई। उसके समय में समुद्री व्यापार प्रायः हालैण्ड वालों के हाथ में था।

हालैण्ड वालों ने इस समय अपना सब ध्यान व्यापार की ओर लगा दिया था। विलियम के आरेंज वंश के समय के युद्ध-प्रियता के दिन जाते हुए दिखाई दे रहे थे। सन् १६५० में वहाँ विलियम द्वितीय के मरने पर डी लिट के नेतृत्व में प्रजातंत्र-वादियों ने राज्य-प्रथा का अन्त घोषित कर दिया था। बच्चा विलियम तृतीय का शत्रुओं के हाथ में पोषण हुआ। हालैण्ड ने व्यापार में खूब वृद्धि कर ली थी। क्राम्वेल ने समुद्र पर से उनका एकाधिपत्य हटाने के लिये एक नया नियम बनाया जिसके अनुसार अंग्रेज लोग उनके जहाजों को बीच में रोक कर तलाशी ले सकते थे। इसपर उन्होंने युद्ध की घोषणा कर दी। परन्तु उनकी सेना प्रायः प्रत्येक जगह हारी। अंग्रेजों ने उनके न्यू-एम्सटर्डम (अमेरिका में) नामक स्थान पर अधिकार कर लिया और उसका नाम न्यूयार्क रखा। अन्त में डच लोगों ने पराजय स्वीकार करली और हरजाना देकर १६६७ में संधि कर ली। अब उसने यह सोचा कि फ्रांस तथा स्पेन में से किसको मित्र बनाना चाहिये। इस समय इन दोनों देशों में झगड़ा चल रहा था। पहले उसने स्पेन से संधि करनी चाही परन्तु वहाँ वालों ने अपने उपनिवेशों में अंगरेजों को व्यापार करने की आज्ञा नहीं दी। अतः उसने फ्रांस से मिलकर डंकर्क और जमैका द्वीप स्पेन वालों के हाथ से छीन लिये और सेवाय में प्रोटेस्टैण्ट लोगों का सताया जाना भी बन्द कराया।

राजत्व का पुनरुत्थान—१६५८ में क्राम्वेल की मृत्यु हुई और उसका पुत्र रिचार्ड क्राम्वेल संरक्षक बनाया गया परन्तु वह पिता के समान चतुर तथा शासन-कार्य में योग्य न था। अतः

राज्य में अव्यवस्था फैल गई। पार्लमेन्ट तथा सेना में झगड़ा हो गया और सेना ने पार्लमेन्ट को भंग कर दिया परन्तु लोगों ने सेना के अधीन रहना पसन्द न किया। सर्वत्र अराजकता फैलने लगी। इस समय जनरल मौंक ने, जो क्राम्वेल के साथ का था तथा स्काटलैण्ड की सेना का अफ़सर था, एक नई पार्लमेन्ट बुलाने की घोषणा की जो सेना के अधीन न हो। १६६० में यह पार्लमेन्ट इकट्ठी हुई। देश की अव्यवस्था दूर करने का उसे एक ही उपाय सूझा कि राजा को फिर बुलाया जाय। चार्ल्स प्रथम के मृत्युदण्ड से लोगों की उसके प्रति घृणा जाती रही थी और वे समझने लगे थे कि राजा को उचित से अधिक दण्ड मिला। अतः पार्लमेन्ट के नये संगठन के अनुसार राजत्व की पुनः स्थापना की गई और चार्ल्स प्रथम के पुत्र चार्ल्स द्वितीय को फिर राज्य करने के लिये बुलाया। लोगों की उसके प्रति सहानुभूति थी। अतः उसका खूब धूमधाम से स्वागत किया गया।

चार्ल्स द्वितीय राजा हो गया परन्तु उसने अपनी परम्परा की नीति न छोड़ी। उसने पिता के राज्य से शिक्षा ग्रहण नहीं की। फिर बुलाये जाने का अर्थ उसने यह लगाया कि अंगरेज़ लोग उसके बिना राज्य नहीं कर सकते। अतः उसने अपने वंश की पुरानी नीति से काम लिया, जिसका परिणाम यह हुआ कि असन्तोष फिर बढ़ गया और उसका भाई फिर राज्य से निकाल दिया गया। चार्ल्स द्वितीय व्यसनी तथा आरामतलब राजा था। उसका मुख्य उद्देश्य इंगलैण्ड में कैथोलिक धर्म तथा राजकीय सत्ता को फिर स्थापित करना था।

पार्लमेण्ट ने इंगलिश गिरजे के धर्म की फिर स्थापना की

और अन्य धर्मावलम्बियों के विरुद्ध नियम बनाये। चार्ल्स कैथोलिक लोगों के लिये पूर्ण धार्मिक स्वतन्त्रता चाहता था, परन्तु पहले २ वह पार्लमेंट का विरोध करने में कुछ डरा और उसने एक उपाय सोचा। उसने एक नियम बनाकर सभी भिन्न २ धर्मावलम्बियों को धार्मिक स्वतन्त्रता दे दी तथा जो कर उनसे लिया जाता था वह भी बन्द कर दिया। परंतु देश कैथोलिक धर्म के विरुद्ध हो रहा था। वह इस नीति को समझ गया और चारों ओर से इस नियम के विरुद्ध ऐसी आवाज़ उठाई कि राजा को वह नियम रद्द करना पड़ा। अब लोगों को यह सन्देह होने लगा कि राजा पोप से मिलकर एक षड्यन्त्र रच रहा है। चार्ल्स के कोई पुत्र न था। अतः अपने पीछे वह अपने भाई जेम्स को गद्दी पर बिठाना चाहता था, परंतु वह कैथोलिक था। अतः प्रजा उसके विरुद्ध थी। उसे उत्तराधिकार से रोकने के लिये पार्लमेंट ने एक नियम बनाया। इस पर राजा ने पार्लमेंट को तोड़कर स्वतन्त्र राज्य आरम्भ कर दिया।

व्यसनी होने के कारण उसे धन की आवश्यकता रहती थी और फ्रांस का राजा लुई चौदहवाँ उसे धन दिया करता था। अतः वह विदेशी नीति में चार्ल्स लुई के अधीन रहता था। लुई ने अपने पड़ोसी राज्यों को हड़पने के लिए ही चार्ल्स को मित्र बनाया था जिससे इंगलैण्ड उन देशों को सहायता न दे सके। इस समय अंग्रेज़ लोग हालैण्ड से तो प्रसन्न थे, परन्तु फ्रान्स से अप्रसन्न थे। अतः लुई ने चार्ल्स से डोवर स्थान में एक गुप्त संधि की जिसका मतलब यह था कि चार्ल्स डच लोगों के विरुद्ध फ्रांस की सहायता करेगा और यदि इससे चिढ़ कर

अंग्रेज लोग चार्ल्स को निकाल दें तो लुई सेना से चार्ल्स की सहा-यता करे। लुई ने हालैण्ड पर आक्रमण किया और चार्ल्स के कारण इंगलैण्ड को भी उसमें सम्मिलित होना पड़ा। डच लोगों की वीरता के कारण लोगों ने उनकी बड़ी प्रशंसा की और चार्ल्स को उनसे संधि करनी पड़ी। अकेले रह जाने के कारण अन्त में १६७८ में लुई ने भी उनसे नीम्बेगन स्थान पर संधि कर ली।

चार्ल्स द्वितीय १६८५ में मरा और उसका भाई जेम्स द्वितीय राजा हुआ। वह कट्टर कैथोलिक तथा राजाओं के ईश्वर-प्रदत्त अधिकार का बड़ा पक्षपाती था। वह भी इंगलैण्ड में कैथोलिक धर्म का प्रचार चाहता था। अतः उससे और पार्लमेण्ट से कई वार झगड़ा हुआ। जेम्स ने कैथोलिक लोगों के विरुद्ध विधानों (कानूनों) को रोक दिया और उन्हें बड़ी २ जगहों पर नियत किया। उसने पार्लमेण्ट से लड़ने के लिये एक सेना भी तैयार कर ली परन्तु लोग यह समझ कर शान्त रहे कि जेम्स के कोई पुत्र तो है ही नहीं, उसी की ज़िन्दगी तक यह झगड़ा है। उसकी एक पुत्री मेरी थी जो प्रोटेस्टैण्ट थी और हालैण्ड के विलियम तृतीय को व्याही गई थी। परन्तु इसी समय लोग इस समाचार को सुन कर बड़े आश्चर्य में पड़े कि जेम्स के पुत्र हुआ है। अब उन्होंने विलियम को इंगलैड में राज्य करने के लिये निमंत्रण भेजा।

निमंत्रण पाकर विलियम १६८८ में इंगलैण्ड में उतरा। सब प्रजा ने सहर्ष उसका साथ दिया। निराश होकर जेम्स फ्रांस में भाग गया। एक पार्लमेण्ट जुड़ी जिसने रिक्त सिंहासन पर विलि-यम और मेरी दोनों को बैठाया। इस भाँति पार्लमेण्ट और राजा

के लंबे झगड़े का अन्त हुआ। पार्लमेण्ट की विजय रही। पार्लमेण्ट ने अपने अधिकार और बढ़ा लिये।

यह प्रसिद्ध घटना रक्त-रहित क्रान्ति कहलाती है और बहुत महत्वपूर्ण है। विलियम के समय में अंग्रेजों को तीसरा बड़ा अधिकार-पत्र मिला जिससे प्रजा के अधिकार बहुत बढ़े।

बारहवाँ अध्याय

फ्रान्स की उन्नति

फ्रान्स का इतिहास बड़ा आश्चर्यजनक है। एक समय वह यूरोप का सब से प्रबल राष्ट्र रह चुका है। उस समय सम्राट् शार्लमैन का ज़माना याद आता था। यह उन्नति, जैसा कि हम आगे देखेंगे, लुई चौदहवें के समय में दो प्रसिद्ध राजनीतिज्ञों की नीति के कारण हुई।

चार्ल्स सप्तम तथा लुई ग्यारहवें ने फ्रांस की उन्नति के लिये प्रयत्न किये थे और अपने देश का प्रभाव बढ़ाने के लिये स्पेन से लड़ाई भी की परन्तु असल में फ्रांस की उन्नति का आरम्भ हेनरी चतुर्थ के समय से समझा जाता है। हेनरी की मृत्यु के बाद सन् १६१० में उसका पुत्र लुई तेरहवाँ गद्दी पर बैठा। परन्तु वह अभी बालक था। अतः उसकी माता मेडिसी की मेरी संरक्षिका नियत हुई। उसने अपने पति की नीति को बदल दिया। उसने प्रोटेस्टैण्ट लोगों का साथ छोड़ दिया और अपने परम्परा के शत्रु स्पेन से सन्धि की। उसका विचार फ्रांस तथा स्पेन में वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करके दोनों को एक में मिलाना

था। अतः उसने लुई तेरहवें का विवाह स्पेन के फ़िलिप तृतीय की पुत्री ऐँन से करा दिया।

सन् १६२४ में लुई ने राजकाज अपने हाथ में लेकर रिचलू नामक गिर्जे के एक प्रधान अधिकारी को अपना प्रधान मंत्री नियत किया। इसी समय से फ्रांस में एक नया युग उपस्थित हो गया।

रिचलू फ्रांस का सब से बड़ा राजनीतिज्ञ समझा जाता है। सैनिक ज्ञान भी वह अच्छा रखता था और अपने सिपाहियों को सदा समय पर तनख्वाह, गरम कपड़े, अच्छा भोजन और ठहरने के लिये स्थान देकर सन्तुष्ट तथा प्रसन्न रखता था। अधिकार प्राप्त करते ही उसने अपने आप को फ्रांस की उन्नति में लगा दिया तथा १८ वर्ष तक वह एक प्रकार से फ्रांस का राजा रहा।

रिचलू की नीति के प्रधान उद्देश्य दो थे—पहले वह राजा की शक्ति को बढ़ाकर निरंकुश शासन करके फ्रांस में एकता स्थापित करना चाहता था तथा दूसरे फ्रांस को यूरोप में सर्व प्रधान बनाना चाहता था।

पहले उद्देश को सफल करने में कई बाधाएँ थी। प्रोटेस्टैण्ट लोगों के पास कई स्वतंत्र किले तथा सेना होने के कारण वे बलवान हो गये थे। सरदार लोग भी प्रबल तथा निडर थे, फिर प्रतिनिधि सभाओं को भी थोड़े बहुत राजनीतिक अधिकार थे। इन सब के होते हुए रिचलू अपनी नीति को कार्यान्वित नहीं कर सकता था। अतः उसने पहले इन्हीं से निपट लेना चाहा।

प्रोटेस्टैण्ट लोगों के धर्म से तो रिचलू को कोई चिढ़ न थी। वह उनसे केवल वह शक्ति छीनना चाहता था जो 'नान्टीस की एडिक्ट' के अनुसार उन्हें मिली थी। उसने इसी उद्देश्य से उनके

किलों पर कई वार आक्रमण किया और अन्त में सन् १६२८ में उनके मुख्य केन्द्र 'ला रशेल' के दुर्ग पर भी आक्रमण कर दिया। प्रोटेस्टैण्ट लोग वड़ी वीरता से लड़े परन्तु हार गये। अंग्रेजों की सेना भी सहायता को आई परन्तु वह भी भगा दी गई। इस प्रकार उसने उनके सव दुर्ग तथा राजनैतिक अधिकार छीन लिये परन्तु उन्हें धार्मिक स्वतंत्रता दी और क़ानून में भी समानता प्रदान की। उसका उद्देश्य केवल इतना ही था जिसे उसने पूरा कर लिया।

अव उसने सरदारों की ओर ध्यान दिया। यह देख सरदारों ने षड्यंत्र रचना आरंभ किया परन्तु रिचलू ने उन सव का पता लगा लिया और इस वहाने से उन्हें कड़े दण्ड दिये। वहुतों को फ़ाँसी भी दी गई।

अव तक गाँवों में भी सरदारों को वहुत से अधिकार रहते थे परन्तु रिचलू ने अव फ्रांस को कई भागों में वांट कर सरकारी हाकिम—जो इण्टेण्डेण्ट कहलाते थे—नियत किये। इन्हें अपने ज़िले के वैसे ही अधिकार थे जैसे आजकल कलक्टरों को होते हैं। इस प्रकार सरदारों की शक्ति विलकुल कम हो गई क्योंकि ये नये हाकिम प्रायः मध्यश्रेणी के लोगों में से चुने जाते थे और राजा से सीधा सम्वन्ध रहने के कारण उसके अधीन रहते थे। इस भाँति शक्ति केन्द्रित हो गई। फिर उसने वड़ी प्रतिनिधि सभा—स्टेट्स जनरल—को भी वुलाना वन्द कर दिया और इस भाँति सारी शक्ति अपने हाथों में कर ली।

वाहरी नीति में उसने हेनरी चतुर्थ का अनुकरण किया अर्थात् वह हेप्सवर्ग वंश से यूरोप की प्रधानता छीन कर अपने

हाथ में करना चाहता था तथा फ्रांस की सीमा बढ़ाना चाहता था। तीस वर्षीय युद्ध ने इसके लिये अवसर भी अच्छा उपस्थित कर दिया था। यहाँ उसकी नीति देखने योग्य है। उसने फ्रांस में प्रोटेस्टैएट लोगों को दबाया और उनसे सारी शक्ति छीन ली परन्तु तीस वर्षीय युद्ध में उसने जर्मनी के प्रोटेस्टैएट लोगों की सहायता की। इसका कारण यह था कि वह जर्मनी को बिखरा हुआ तथा गृहकलह से निर्बल बनाना चाहता था। तीस वर्षीय युद्ध जर्मनी के कैथोलिक तथा प्रोटेस्टैएट लोगों का धार्मिक झगड़ा था परन्तु जर्मनी की शक्ति कम करने के लिये उसने प्रोटेस्टैएट लोगों को धन तथा सेना भेज कर सहायता दी। यद्यपि वह अपनी नीति को अपने जीवनकाल में सफल होते न देख पाया तथापि उसके उत्तराधिकारियों के समय में उसका उद्देश पूर्ण सफल हुआ। हेप्सवर्ग वंश की दोनों शाखायें आस्ट्रिया तथा स्पेन (देखो सम्राट् चार्ल्स पंचम तथा उसके बाद का इतिहास) दब गईं तथा फ्रांस को प्रधानता प्राप्त हुई।

रिचलू ने फ्रांस में राजा की शक्ति दृढ़ कर दी तथा यूरोप में फ्रांस को प्रधान बना दिया। परन्तु वह निरंकुश शासन का संस्थापक नहीं है। फ्रांस के राजा सैकड़ों वर्षों से वही प्रयत्न करते रहे थे। यद्यपि रिचलू ने उसे पूरा किया परन्तु उसके उत्तराधिकारियों ने उस शक्ति का उचित उपयोग न किया और अन्त में यही राज्यक्रान्ति का कारण हुआ।

सत्रहवीं शताब्दी के लोग फ्रांस में वैध शासन स्थापित करना नहीं चाहते थे। अतः रिचलू ने राजा की शक्ति दृढ़ करने में ही अपनी सब शक्ति लगा दी। उसने फ्रांस में राष्ट्रीय एकता तथा

शांति स्थापित की। उसने फ्रांस की जलसेना की भी नींव डाली तथा उपनिवेश वसाने का भी प्रयत्न किया तथा सभायें स्थापित करके साहित्य को उत्तेजना दी। उसने धार्मिक प्रधान की हैसियत से मंत्रित्व ग्रहण किया परन्तु उसके कामों से प्रत्यक्ष है कि धर्म के वजाय राजनीति में ही वह अधिक चतुर था। सन् १६४२ में उसकी मृत्यु से यूरोप को स्वतंत्रता की हवा मिली।

मेजरीन—दूसरे वर्ष लुई तेरहवाँ भी मर गया। उसका पुत्र लुई चौदहवाँ भी वालक था अतः उसकी माता एक संरक्षिका नियत हुई और उसने इटली के एक धार्मिक प्रधान (कार्डिनल) मेज़रीन को मंत्री नियत किया। उसने रिचलू की अधीनता में काम किया था और रिचलू उसकी सिफ़ारिश भी कर गया था। उसने रिचलू की नीति को जारी रखा और उसकी वुद्धि के कारण उसे अन्त में पूर्ण सफलता मिली। उसका आन्तरिक प्रवन्ध अच्छा न था तथा विदेशी होने के कारण सरदार लोग उससे घृणा करते थे जिसका परिणाम फ्रोन्डी नामक विद्रोह हुआ।

यह विद्रोह पेरिस की पार्लमेन्ट द्वारा आरम्भ किया गया परन्तु अन्त में यह सरदारों तथा राजा के वीच का झगड़ा रह गया जिसका उद्देश्य सरदारों का फिर वल प्राप्त करने का प्रयत्न था। एक नया कर लगाने के कारण पार्लमेन्ट मेज़रीन से विगड़ गई थी तथा और भी वहुत लोग असन्तुष्ट हो गये थे। सरदारों ने अवसर पाकर पार्लमेन्ट का पक्ष लिया और इस प्रकार लड़ाई आरम्भ हो गई। इस पेरिस की पार्लमेण्ट का संगठन विचित्र था। इसके मेम्वर न जनता द्वारा चुने जाते थे, न राजा द्वारा नियत किये जाते थे, किन्तु कुछ लोगों

ने रुपया देकर जगहें खरीद ली थीं और कुछ अपने बाप की जगह बैठे थे। इसका काम न्याय करना था परन्तु यह नियम बनाने का काम भी अपने हाथ में लेना चाहती थी। इसी लिये उसने झगड़ा आरंभ किया। परन्तु इन लोगों में फूट होने के कारण मेज़रीन की विजय हुई। और राजा की शक्ति अब और अधिक बढ़ गई। फ्रोंन्डी फ्रेंच भाषा में बच्चों के खेलने की गुलेल को कहते हैं। यह लड़ाई भी बच्चों की सी थी अतः उसे यह नाम मिला। इसका नेता फ्रोण्डी का राजकुमार था जिसने स्पेन की सेना को हराया था। फ्रोण्डी के गिरफ़्तार किये जाने पर जनता ने बहुत विरोध किया। अतः राजा को उसे छोड़ देना पड़ा और मेज़रीन को देश से बाहर निकाल देना पड़ा। फ्रोण्डी राजा की शक्ति को कम करने का अन्तिम प्रयत्न था परन्तु पार्लमेन्ट में सङ्गठन न होने से, तथा उसे प्रजा के नेतृत्व का अधिकार न होने से (क्योंकि वह प्रतिनिधि सभा नहीं थी) और द्वेषी सरदारों तथा कुछ दुश्चरित्र युवक और युवतियों के अतिरिक्त किसी का बल न होने से यह विद्रोह असफल हुआ। तथा एक शताब्दी तक पार्लमेण्ट को सरकारी कार्यों में हस्तक्षेप करने का कुछ भी अधिकार न रहा। उसका काम केवल राजा की आज्ञाओं को रजिस्टर में दर्ज करना रह गया।

मेज़रीन ने सब से अधिक चतुरता विदेशी नीति में दिखाई। तीस वर्षीय युद्ध के अन्तिम दिनों में उसने फ्रांस को सफलता पूर्वक जिताया तथा वेस्टफ़ालिया की संधि से आस्ट्रिया को बिलकुल निर्बल बना दिया।

सन् १६५१ में उसने स्पेन के विरुद्ध इंगलैण्ड के क्राम्वेल से

शांति स्थापित की। उसने फ्रांस की जलसेना की भी नींव डाली तथा उपनिवेश वसाने का भी प्रयत्न किया तथा सभायें स्थापित करके साहित्य को उत्तेजना दी। उसने धार्मिक प्रधान की हैसियत से मंत्रित्व ग्रहण किया परन्तु उसके कामों से प्रत्यक्ष है कि धर्म के वजाय राजनीति में ही वह अधिक चतुर था। सन् १६४२ में उसकी मृत्यु से यूरोप को स्वतंत्रता की हवा मिली।

मेजरीन—दूसरे वर्ष लुई तेरहवाँ भी मर गया। उसका पुत्र लुई चौदहवाँ भी बालक था अतः उसकी माता एक संरक्षिका नियत हुई और उसने इटली के एक धार्मिक प्रधान (कार्डिनल) मेज़रीन को मंत्री नियत किया। उसने रिचल्यू की अधीनता में काम किया था और रिचल्यू उसकी सिफ़ारिश भी कर गया था। उसने रिचल्यू की नीति को जारी रखा और उसकी वुद्धि के कारण उसे अन्त में पूर्ण सफलता मिली। उसका आन्तरिक प्रवन्ध अच्छा न था तथा विदेशी होने के कारण सरदार लोग उससे घृणा करते थे जिसका परिणाम फ्रोन्डी नामक विद्रोह हुआ।

यह विद्रोह पेरिस की पार्लमेन्ट द्वारा आरम्भ किया गया परन्तु अन्त में यह सरदारों तथा राजा के वीच का झगड़ा रह गया जिसका उद्देश्य सरदारों का फिर वल प्राप्त करने का प्रयत्न था। एक नया कर लगाने के कारण पार्लमेन्ट मेज़रीन से विगड़ गई थी तथा और भी वहुत लोग असन्तुष्ट हो गये थे। सरदारों ने अवसर पाकर पार्लमेन्ट का पक्ष लिया और इस प्रकार लड़ाई आरम्भ हो गई। इस पेरिस की पार्लमेण्ट का संगठन विचित्र था। इसके मेम्बर न जनता द्वारा चुने जाते थे, न राजा द्वारा नियत किये जाते थे, किन्तु कुछ लोगों

ने रुपया देकर जगहें खरीद ली थीं और कुछ अपने बाप की जगह बैठे थे। इसका काम न्याय करना था परन्तु यह नियम बनाने का काम भी अपने हाथ में लेना चाहती थी। इसी लिये उसने झगड़ा आरंभ किया। परन्तु इन लोगों में फूट होने के कारण मेज़रीन की विजय हुई। और राजा की शक्ति अब और अधिक बढ़ गई। फ्रोंन्डी फ्रेंच भाषा में बच्चों के खेलने की गुलेल को कहते हैं। यह लड़ाई भी बच्चों की सी थी अतः उसे यह नाम मिला। इसका नेता फ्रोण्डी का राजकुमार था जिसने स्पेन की सेना को हराया था। फ्रोण्डी के गिरफ़्तार किये जाने पर जनता ने बहुत विरोध किया। अतः राजा को उसे छोड़ देना पड़ा और मेज़रीन को देश से बाहर निकाल देना पड़ा। फ्रोण्डी राजा की शक्ति को कम करने का अन्तिम प्रयत्न था परन्तु पार्लमेन्ट में सङ्गठन न होने से, तथा उसे प्रजा के नेतृत्व का अधिकार न होने से (क्योंकि वह प्रतिनिधि सभा नहीं थी) और द्वेषी सरदारों तथा कुछ दुश्चरित्र युवक और युवतियों के अतिरिक्त किसी का बल न होने से यह विद्रोह असफल हुआ। तथा एक शताब्दी तक पार्लमेण्ट को सरकारी कार्यों में हस्तक्षेप करने का कुछ भी अधिकार न रहा। उसका काम केवल राजा की आज्ञाओं को रजिस्टर में दर्ज करना रह गया।

मेज़रीन ने सब से अधिक चतुरता विदेशी नीति में दिखाई। तीस वर्षीय युद्ध के अन्तिम दिनों में उसने फ्रांस को सफलता पूर्वक जिताया तथा वेस्टफ़ालिया की संधि से आस्ट्रिया को बिलकुल निर्बल बना दिया।

सन् १६५१ में उसने स्पेन के विरुद्ध इंगलैण्ड के क्राम्वेल से

मेल किया और सन् १६५९ में पेरेनीज़ की सन्धि हुई जिससे आर्टोय, फ्लेएडर्स आदि कई देश फ्रांस को मिले। इस भाँति हेप्स-वर्ग वंश की दोनों शाखायें निर्वल हो गईं और उनका स्थान फ्रांस को मिला।

इस भाँति आस्ट्रिया, स्पेन तथा फ्रांस के सरदारों को दवाकर तथा वहुतसा धन संग्रह करके सन् १६६१ में मेज़रीन मर गया।

लुई चौदहवाँ—वाप की मृत्यु के समय चौदहवाँ लुई छ: वर्ष का था अत: मेज़रीन सव प्रवन्ध करता रहा। मेज़रीन की मृत्यु के वाद चौवीस वर्ष की आयु में उसने राज्य-भार स्वयं ग्रहण किया और सन् १७१५ ई० तक राज्य किया और फ्रांस को यूरोप में सवसे अधिक शक्तिमान तथा यूरोप के राजाओं के लिये आदर्श वना दिया। अव तक वहुत दिनों से फ्रांस में मंत्रियों का हाथ ही प्रधान था परंतु वह सव शक्ति अपने हाथ में रखने का पक्षपाती था। वह न वीर था और न वड़ा राजनीतिज्ञ परंतु इतिहास में उसका एक विशेष स्थान है क्योंकि वह निरंकुश राजा था और यूरोप के राजा उसे आदर्श समझते थे कि राजा ऐसा ही होना चाहिये।

वह वड़ा परिश्रमी था। प्राय: आठ घंटे तक प्रतिदिन दरवार में वैठा करता था। सव मंत्रियों की भिन्न २ रायों को सुनता था परंतु करता अपने मन की था। वह मंत्रियों को केवल अपना क्लर्क समझता था और अपनी नीति पर उनके आक्षेप सहन नहीं कर सकता था। मंत्रियों का काम केवल उसकी आज्ञा का पालन करना था। उसका दरवार वड़ा शानदार था तथा उसे चित्रकला, साहित्य, शिल्प आदि का शौक था।

लुई चौदहवें ने पहले आन्तरिक सुधारों की ओर ध्यान दिया। इस कार्य में उसे कोलवर्ट नामक मंत्री ने बड़ी सहायता दी। कोलवर्ट के समान चतुर तथा राजभक्त मंत्री फ्रांस को कभी नहीं मिला। वह बड़ा परिश्रमी था। वह बाईस वर्ष तक फ्रांस का अर्थमंत्री (फाइनेन्स मिनिस्टर) रहा तथा अपने परिश्रम से आश्चर्यजनक आर्थिक उन्नति करके दिखा दी। उसके पहले कर आदि का प्रबन्ध बहुत विगड़ रहा था। कर अधिक था परन्तु फिर भी उसका बहुत थोड़ा हिस्सा राजकीय कोष में पहुँच पाता था। अर्थात् साढ़े आठ करोड़ में से पाँच करोड़ से अधिक द्रव्य मंत्रियों की जेबों में पहुँचता था। कोलवर्ट ने इसकी पूरी जाँच करके प्रबन्ध ठीक किया और बेईमानों को कड़ा दण्ड दिया जिससे शीघ्र ही राज्य को भारी बचत हो निकली।

वह इतने से ही संतुष्ट नहीं हुआ। अब उसने देश की सम्पत्ति को बढ़ाने के और भी उपाय किये। अब तक फ्रांस में बाहर से तैयार किया हुआ माल बहुत आता था परन्तु उसने देश के धन्धों को चेताने के लिये संरक्षणनीति का आश्रय लिया अर्थात् बाहर से आनेवाली चीजों पर भारी कर लगाया। उसने इंगलैण्ड, हालैण्ड, इटली आदि देशों से कारीगर बुलवाकर स्वदेश में कई नये उद्योग आरम्भ किये जैसे मोज़े बुनना, कांच का सामान व शीशे आदि बनाना। सड़कें और नहरें बनवाकर आंतरिक व्यापार बढ़ाने में बहुत सहायता दी। समुद्री डाकुओं को कड़े दण्ड देकर दबाया और उपनिवेशों में बसने वालों तथा उनसे व्यापार करने वाली कम्पनियों को प्रोत्साहन दिया। उस समय समुद्र-व्यापार प्रायः इंगलैण्ड और हालैण्ड के हाथ में था परन्तु उसने यह

फ्रांस के हाथ में करना चाहा। भारत की फ्रेंच ईस्ट इंडिया कम्पनी इसी समय में बनी। उसने पहले के कई अनुचित कर बन्द कर दिये और सब सरकारी पद अस्थायी घोषित कर दिये जिससे उनमें समय पर घटा बढ़ी हो सके। अनाज का बाहर जाना रोककर उसे सस्ता किया और जहाज़ बनाने का काम भी आरम्भ किया। कृषि के स्थान पर उसने व्यापार की वृद्धि की ओर अधिक ध्यान दिया। क्योंकि वह जानता था कि ज़मीन अधिकांश सरदारों के हाथ में है, अतः कृषि को उत्तेजना देने से किसानों के बजाय सरदारों को अधिक लाभ होगा और वे फिर बलवान हो जायँगे। व्यापार मध्य-श्रेणी के लोगों के हाथ में था। अतः उनकी वृद्धि से उसे कुछ भय न था इसी कारण उसने व्यापार तथा उद्योग धन्धों को खूब उत्तेजना दी। इससे शीघ्र ही फ्रांस, शक्कर, कागज़, टोप, मोज़े, जूते, इसपात की चीज़ें आदि सभी बातों के लिये प्रसिद्ध हो गया।

फ्रांस के कई सुन्दर महल तथा अन्य इमारतें भी उसी के समय की बनी हुई हैं।

उसका एक बड़ा काम यह है कि उसने फ्रांस की जल-सेना को अच्छी तरह तैयार किया जो कि आगे चलकर बहुत काम में आई। फिर उसने सेना, न्याय-विभाग आदि सभी में सुधार किया अर्थात् कदाचित् ही कोई महकमा ऐसा रहा होगा जिसमें उसने हाथ न लगाया हो। फ्रांसीसी सिपाही जो अबतक किसी काम के नहीं समझे जाते थे, उसने उन्हें ही सुशिक्षित करके डेढ़ लाख की एक राष्ट्रीय सेना तैयार कर दी जिससे आगे चलकर मार्शल ट्यूरेन तथा वावान ने लाभ उठाया। इन सब सुधारों से फ्रांस

की कायापलट हो गई, आर्थिक तथा व्यापारिक दशा बहुत सुधर गई परंतु ये सुधार इतने अल्प समय में तथा इतनी शीघ्रता पूर्वक किये गये कि लोगों की समझ में उनका पूरा लाभ न आया और इसीलिये ये सुधार चिरस्थायी न हो सके।

तेरहवाँ अध्याय

चौदहवें लुई के समय के युद्ध

लुई का उद्देश्य फ्रांस में अपनी शक्ति बढ़ाना तथा आस पास के देशों को दबाकर अपनी सीमा बढ़ाना ही था। इस उद्देश्य के लिये उसे बहुत रुपया खर्च करना पड़ा जिससे कोलबर्ट के बहुत से आर्थिक सुधारों का फल कुछ भी न हुआ क्योंकि जो रुपया उधर बचा वह इसने खर्च कर दिया। लुई की नीति के कारण ही यूरोप के शेष राजाओं ने उसके विरुद्ध संगठन बना लिये जिससे अन्त में लुई की सारी आशाओं पर पानी ही नहीं बल्कि मिट्टी का तेल फिर गया और फ्रांस की कीर्ति भी गिर गई। इस प्रकार फ्रांस लुई चौदहवें के समय में ही सब से बलवान हुआ परन्तु वहीं से इसकी अवनति भी आरम्भ होगई।

लुई को अपनी राज्यविस्तार की नीति के कारण चार बड़े युद्धों में भाग लेना पड़ा। दल-परिवर्तन युद्ध, (वार ऑफ़ डिवोल्यूशन) हालण्ड के साथ युद्ध, आग्सबर्ग संघ के साथ युद्ध तथा स्पेनकी गद्दी का युद्ध।

दल-परिवर्तन युद्ध—सबसे पहले लुई का यह विचार हुआ कि नीदरलैण्डस का जो भाग स्पेन के हाथ में है, वह अपने राज्य

में मिलाना चाहिये। उसकी शादी स्पेन के राजा फिलिप चतुर्थ की लड़की मेरिया थेरेसा से हुई थी। मेरिया थेरेसा ने विवाह के समय स्पेन की गद्दी के अपने सब अधिकार छोड़ दिये थे और लुई ने इस बात को इस शर्त पर स्वीकार कर लिया कि मेरिया के साथ दहेज स्वरूप में उसे एक बड़ी रकम मिले। १६६७ में फिलिप चतुर्थ मर गया। उस समय वहाँ यह नियम प्रचलित था कि यदि किसी राजा के एक से अधिक रानियाँ हों तो सब से पहली रानी की सन्तान ही पहले राज्य की उत्तराधिकारी होगी। मेरिया थेरेसा फिलिप की पहिली स्त्री की लड़की थी तथा दूसरी स्त्री के चार्ल्स नाम का एक पुत्र था। लुई को विवाह के समय ठहराया हुआ दहेज कभी नहीं मिला अतः उसने मेरिया का स्पेन की गद्दी पर अधिकार बताया। चार्ल्स ने इसे न माना और युद्ध आरम्भ हो गया।

फ्रेंच सेना ने फ्लेन्डर्स तथा बरगंडी के कई स्थानों पर अधिकार कर लिया और फ्रेंच कोम्टी पर आक्रमण किया।

फ्रांस की विजय से हालैण्ड वालों को भय हुआ। उनकी स्थिति इस समय बड़ी नाजुक थी, अब तक फ्रांस उनका मित्र था और इंगलैण्ड शत्रु। परन्तु अब क्या उन्हें अपने व्यापारिक प्रतिद्वन्दी इंगलैंड से मेल करना पड़ेगा? परन्तु शीघ्र ही हालैण्ड, इंगलैण्ड और स्वीडन ने मिल कर फ्रांस के विरुद्ध त्रिगुट्ट बना लिया। हालैण्ड तथा स्पेन में भी सन्धि हो गई। इस प्रकार तीन प्रोटेस्टैण्ट राष्ट्रों ने कैथोलिक फ्रांस के हाथों से कैथोलिक स्पेन को बचाने का प्रयत्न किया। स्पेन के चार्ल्स ने भी अवसर समझ कर उनकी सहायता को स्वीकार

किया। अब लुई को कोई उपाय न था, अतः उसने चुपचाप नीदरलैण्डस खाली करके सन्धि करली जिससे फ्रेंच कोम्टी को छोड़ कर कुछ सरहद्दी किले उसके पास रहे।

हालैण्ड के साथ युद्ध—पहले युद्ध के कारण लुई को सब से अधिक क्रोध हालैण्ड पर आया कि वह शत्रुओं से क्यों मिला? अतः उसने हालैण्ड के राजा चार्ल्स द्वितीय से तो एक गुप्तसंधि करली (डोवर की गुप्तसंधि सन् १६६७) और इस प्रकार डच लोगों को निःसहाय करके युद्ध पुकार दिया। इस समय फ्रांस के पास कोलबी के प्रयत्न से १,८०,००० सेना तथा कुछ जलसेना भी थी। समुद्र पर डच लोग प्रबल थे। अतः वहाँ उन्होंने इंगलैण्ड और फ्रांस की सम्मिलित सेना का वीरतापूर्वक सामना किया परन्तु पृथ्वी पर मार्शल ट्यूरेन तथा कोन्डी के नेतृत्व में फ्रेंच सेना सर्वत्र विजयी रही तथा फ्रेंच सेना ने कई स्थानों पर अधिकार कर लिया। इसी समय हालैण्ड में आश्चर्यजनक परिवर्तन हुआ। इस हार के कारण वहाँ के लोग प्रजातंत्र के नेता डि विट्स से बड़े क्रुद्ध हो गये और उसे मारकर आरेंज वंश के विलियम (स्पेन से स्वतंत्रता दिलाने वाले विलियम का प्रपौत्र) को फिर राजा (स्टेट होल्डर) बनाया। विलियम ने समुद्र के बंध काट कर देश को बचा लिया। विलियम कृप तथा निर्बल होने पर भी बड़ा साहसी, वीर तथा बुद्धिमान था। इस समय इंगलैण्ड में भी लोकमत लुई के विरुद्ध हो रहा था। अतः सन् १६७४ में चार्ल्स द्वितीय की पार्लमेण्ट ने हालैण्ड से संधि करके अपनी सेना हटा ली। शीघ्र ही बेडनबर्ग के एलेक्टर, डेनमार्क के राजा, आस्ट्रिया के सम्राट् लीयोपोल्ड तथा प्रायः समस्त

यूरोप ने लुई के विरुद्ध होने की घोषणा कर दी। इसमें फ्रांस को बहुत धक्का पहुँचा परंतु उसकी सुशिक्षित सेना तथा अनुभवी सेनापतियों ने डच लोगों को कई स्थानों पर हराया तथा फ्रेंच काम्टी आदि कई किले ले लिये। फ्रेंच जल-सेना ने भी हालैण्ड तथा स्पेन की सम्मिलित जल-सेना का सफलतापूर्वक सामना किया और डच लोगों को १२ जहाज़, सात हज़ार सैनिक, सात सौ तोपों तथा एक सेनापति की क्षति उठानी पड़ी।

सब देश युद्ध से उकता गये थे। अतः संधि की बातचीत होने लगी। सन् १६७८ में नीमवेगन की संधि हुई जिसके अनुसार फ्रेंच काम्टी तथा बारह अन्य स्थान फ्रांस के पास रहे, परंतु फ्रांस के साथी स्वीडन को डेनमार्क और ब्रेडनबर्ग से जीते हुए स्थान उन देशों को वापिस करने पड़े।

इस विजय के कारण लुई का गर्व बढ़ गया। यही उसकी शक्ति की चरम सीमा थी। उसने फ्रांस की जनता की स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करना आरंभ किया जिससे उसे हानि उठानी पड़ी। उसकी नीति विचित्र थी। वह धर्म-गुरु भी होना चाहता था। अतः उसने पोप से झगड़ा कर लिया। दूसरी ओर प्रोटेस्टैण्टों से उसने कट्टरता छोड़ने को कहा तथा एक युवती (जो पीछे से उसकी स्त्री हो गई थी) के कहने से उसने नाण्टीस की एडिक्ट को भंग किया। प्रोटेस्टेण्ट लोग मारे भी जाने लगे, जिसका परिणाम यह हुआ कि अनेक प्रोटेस्टेण्ट कुटुंब जो बड़े उद्योगी तथा कारीगर थे, फ्रांस छोड़ कर, अपने धन तथा कला कौशल को साथ लेकर अन्य देशों को भाग गये। इससे फ्रांस में औद्योगिक अवनती हुई और उसके पड़ोसी देशों—हालैंड और इंगलैंड में उद्योग बढ़े।

३. आग्सबर्ग संघ से युद्ध—(१६८९-९८) सन् १६८९ में लुई के समय का तीसरा युद्ध आरंभ हुआ जिसकी विशेषता यह है कि इस युद्ध में अकेला फ्रांस समस्त यूरोप के विरुद्ध लड़ा तथा दूसरे, कोलबर्ट की तैयार की गई जलसेना को आज़माने का अवसर मिला, यद्यपि इस समय कोलबर्ट मर चुका था।

अब लुई ने अपनी पदवी 'लुई महान' धारण कर ली थी तथा समस्त यूरोप उससे अप्रसन्न था। उसने स्ट्रैसबर्ग नामक प्रसिद्ध जर्मन नगर के किले पर अधिकार कर लिया तथा उसे दृढ़ सैनिक दुर्ग बना दिया।

उसने रिश्वत तथा धमकी देकर बहुत से प्रोटेस्टेण्ट लोगों को कैथोलिक बना लिया, तथा बहुत से उसका देश छोड़ कर भाग गये। इस भाँति १६८५ में उसने यह घोषणा कर दी कि उसके राज्य के आधे से अधिक प्रोटेस्टैण्ट लोग कैथोलिक हो गये हैं। अतः वह नाण्टीस की एडिक्ट को मानने के लिये अब बाध्य नहीं है। इस घोषणा से प्रोटेस्टेण्ट लोग उससे बड़े अप्रसन्न हो गये तथा दूसरी ओर उसका पोप से भी झगड़ा था जिससे कैथोलिक लोग भी असन्तुष्ट थे।

हालैण्ड का विलियम, लुई का सदा का शत्रु था। उसने अब हालैण्ड, स्पेन, स्वीडन तथा आस्ट्रिया के सम्राट् को मिलाकर एक गुट बनाया जिसका नाम 'आग्सबर्ग संघ' रक्खा। इंगलैण्ड का राजा जेम्स द्वितीय लुई का मित्र था परन्तु १६८८ में रक्त-रहित क्रान्ति के बाद जब विलियम इंगलैंड का राजा हो गया तो उसने इंगलैंड को भी इस संघ में शामिल कर लिया। लुई ने नान्टीस की एडिक्ट तोड़कर, तुर्कों से मित्रता कर ली थी,

जिससे वे आस्ट्रिया में घुस आये। अब संघ ने लुई पर यह दोष लगाया कि उसने तुर्कों के लिये रास्ता खोल दिया, परन्तु लुई दूसरी ओर इंगलैण्ड से भागे हुए जेम्स द्वितीय का स्वागत करके तथा पक्ष लेकर समस्त यूरोप को युद्ध के लिये ललकार रहा था। युद्ध आरम्भ हुआ और दस वर्ष तक चला। फ्रांसीसी सेना ने युद्ध के केन्द्र नेदरलैण्डस् में स्टेन्किर्क स्थान पर विलियम की सम्मिलित सेना को हरा दिया, परंतु १६९५ में फ्रांसीसी जल-सेना अंग्रेजों की जलसेना से ला हेग स्थान पर बुरी तरह परास्त हुई। जलसेना के हार जाने पर लुई ने स्थलसेना को सुधारा। अब तक फ्रांस ने दोनों सेनाओं को बलवान रखने का प्रयत्न किया था परन्तु इसमें वह असफल हुआ। फ्रेंच सेना के बहुत दृढ़ होते हुए भी उसी वर्ष विलियम ने नामूर स्थान पर विजय प्राप्त की। इस महत्त्वपूर्ण विजय से यूरोप को बड़ा आश्चर्य हुआ क्योंकि उस स्थान को लेने के लिये पहले भी फ्रांस आदि ने प्रयत्न किये थे, परन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली थी। अन्त में सन् १६९७ में राइस्विग की संधि हुई जिसके अनुसार लुई ने नीमवेगन की संधि के अनुसार जितने स्थान लिये थे सब लौटा दिये। नेदरलैण्डस् के कुछ स्थानों पर डच सेना रखने की अनु-मति दी और विलियम को इंगलैण्ड का राजा मान लिया। इस संधि से लुई की बढ़ती हुई शक्ति को बड़ा धक्का लगा। उसका कोष खाली हो गया। उसकी जल-सेना हार गई तथा उसका आजन्म शत्रु विलियम इंगलैण्ड के सिंहासन पर बैठ गया, जिस के फल स्वरूप इंगलैण्ड और फ्रांस का झगड़ा राष्ट्रीय रूप में परिणत हो गया। यह पहला ही युद्ध था जिसमें लुई को कुछ

लाभ न हुआ। अतः यह युद्ध इस बात का प्रमाण है कि फ्रांस की अवनति शुरू हो गई थी तथा उसका बल और प्रभाव घट चला था।

४. स्पेन की गद्दी के उत्तराधिकार का युद्ध—स्पेन का राजा चार्ल्स द्वितीय बहुत बूढ़ा हो गया था। उसके कोई सन्तान न थी परन्तु उसका राज्य स्पेन, नेपिल्स, मिलन तथा नेदरलैण्डस् आदि को मिला कर बहुत विस्तृत था। सब यूरोप जानता था कि उसके मरते ही कई राजा उन स्थानों पर अपना २ अधिकार बताने के लिये लड़ेंगे। अतः चार्ल्स की मृत्यु के पहले ही यह एक महत्वपूर्ण सामयिक प्रश्न हो गया।

स्पेन के राज-वंश से, फ्रांस के बोर्बन वंश, तथा सम्राट् के हेप्सबर्ग वंश का वैवाहिक सम्बन्ध था।
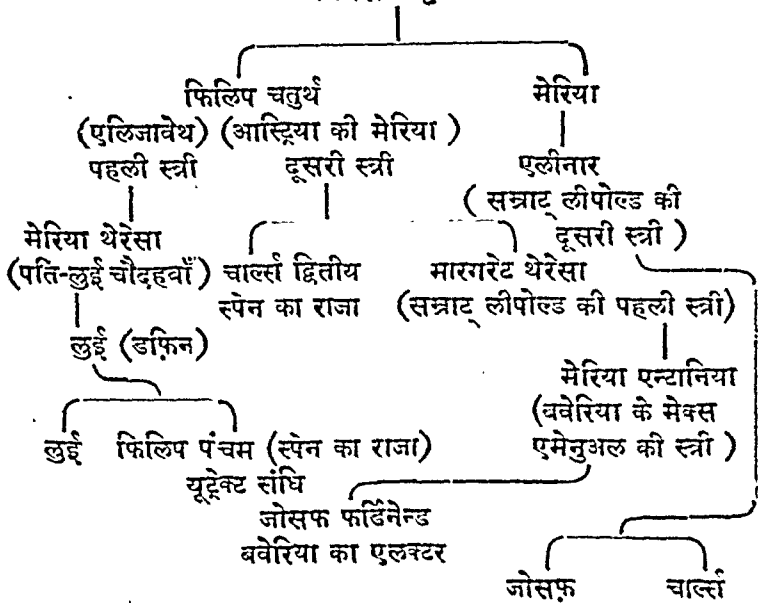
चार्ल्स द्वितीय की बड़ी बहन मेरिया थेरेसा फ्रांस के लुई चौदहवें को व्याही गई थी परन्तु व्याह के समय दहेज़ के बदले उसने स्पेन की गद्दी से अपना संबंध छोड़ दिया था। अतः उसके पुत्र डाफिन का स्पेन की गद्दी पर अधिकार न था। परन्तु लुई ने कहा कि उसे स्पेन से दहेज़ नहीं मिला। अतः उसका पुत्र स्पेन की गद्दी का पूर्ण अधिकारी है।

चार्ल्स द्वितीय की दूसरी बहन मारगरेट जर्मनी के सम्राट् लीयोपोल्ड को व्याही गई थी। उसने स्पेन से अपना संबंध न तोड़ा था। अतः उसकी पुत्री मेरिया एन्टानिया का स्पेन की गद्दी पर अधिकार था। अतः एन्टानिया ने अपने पुत्र जोसफ फर्डिनेन्ड के लिये गद्दी चाही परन्तु उसके पिता लीयोपोल्ड ने अपना अलग अधिकार बताया और अपने पुत्र चार्ल्स को स्पेन की गद्दी पर बैठाना चाहा। इस भाँति स्पेन की गद्दी के तीन प्रधान अधिकारी थे—मेरिया थेरेसा का पुत्र डाफिन, (यह फ्रांस में बड़े राजकुमार का पद है, जैसा इंगलैण्ड में प्रिन्स आफ़ वेल्स का), मारगरेट की पुत्री का पुत्र जोसफ़ फर्डिनेण्ड, तथा सम्राट् लीयोपोल्ड अथवा उसका पुत्र चार्ल्स।

परन्तु अब शक्तियों की समता (बेलेन्स ऑफ पावर्स) का प्रश्न सामने आया। आस्ट्रिया के साथ स्पेन का मेल होने से सम्राट् की शक्ति बहुत बढ़ जाती; फ्रांस को स्पेन मिलने से लुई यूरोप में सर्वशक्तिमान बन जाता, साथ ही यूरोप में लड़ाई झगड़े होने का बड़ा भय था।

यूरोप को इन झगड़ों से बचाने के लिये लुई तथा इंगलैण्ड के विलियम तृतीय ने (क्योंकि ये दोनों अपना २ व्यापार बढ़ाने

में भी लगे थे और युद्ध में इन्हें अपने व्यापार को धक्का पहुँचने का डर था) मिल कर एक सन्धि की। लुई स्पेन को आस्ट्रिया से मिलाना न चाहता था, क्योंकि हेप्सवर्ग वंश की उन्नति वह कभी न देख सकता था। इंगलैण्ड, फ्रांस और स्पेन को न मिलने देना चाहता था। अतः दोनों ने शत्रुता छोड़कर स्पेन को भिन्न २ अधिकारियों में बाँटने की सन् १६९८ में योजना थी। इसके अनुसार स्पेन, नेदरलैण्डस तथा नई दुनिया, ववेरिया के जोसफ़ फर्डिनेण्ड को दिये गये और शेष भाग डाफिन और चार्ल्स (लीयोपोल्ड का पुत्र आर्कड्यूक चार्ल्स) में बाँट दिया गया।

चार्ल्स द्वितीय इस विचित्र संधि का हाल सुन कर बहुत नाराज़ हुआ। इसे यह पसन्द न आया कि बाहरी लोग उसके जीवित रहते, उसी के राज्य का विना उसकी आज्ञा अथवा सम्मति के इस प्रकार निबटारा करें। वह चाहता था कि उसका राज्य टुकड़े २ न हो। अतः उसने अपना सब राज्य ववेरिया के जोसफ़ फर्डिनेण्ड को दे दिया, परन्तु अचानक जोसफ़ फर्डिनेण्ड मर गया और सब किये कराये पर पानी फिर गया। अब दूसरा समझौता किया गया जिसके अनुसार स्पेन, नेदरलैण्डस, सार्डिनिया तथा नई दुनिया आर्कड्यूक चार्ल्स को दी गई और इटली का शेष राज्य डाफिन को। परन्तु चार्ल्स द्वितीय ने फिर इसकी खबर सुनकर इस बार सब राज्य डाफिन के पुत्र फिलिप को दे दिया। उसका उद्देश्य यह था कि फ्रांस एक शक्तिमान राज्य है, अतः उसे अपना राज्य देने से उसके राज्य के टुकड़े २ न होंगे।

ग्राण्ड एलायन्स—(१७०१) लुई चौदहवें ने अपने पौत्र फिलिप को स्पेन का सब राज्य मिला देखकर विलियम आदि के

साथ की हुई सब सन्धियाँ तोड़ दीं। इस एकाएक विश्वासघात से यूरोप के सब देश विस्मित हो गये। लुई यह भी कहने लगा कि फ़िलिप (अब स्पेन का फिलिप पंचम) को फ्रांस की गद्दी पर बैठने का भी पूरा अधिकार है। स्पेन के अधीन नेदरलैण्ड्स से डच सेना को हटाकर उसने अपनी सेना रक्खी और हालैण्ड और इंगलैण्ड को भी स्पेन के आधीन देशों से व्यापार करने से रोका और अन्त में राइस्विग की संधि के प्रतिकूल (जिसमें लुई ने विलियम तृतीय को इंगलैण्ड का राजा मान लिया था) जेम्स द्वितीय के पुत्र को इंगलैण्ड का राजा घोषित किया। जेम्स द्वितीय की स्त्री ने अपील की थी कि यदि राज्य गया तो गया परन्तु उसके पुत्र के लिये राजा की पदवी तो कायम रहे। अतः लुई ने उसे इंगलैण्ड का राजा कह कर उसकी सलामी कराई। अब इंगलैण्ड की पार्लमेन्ट, जो अबतक युद्ध के लिये विलियम का साथ देने को तैयार नहीं थी, लुई की ऐसी जिद देखकर युद्ध के लिये तैयार हो गई।

लुई के आचरणों से समस्त यूरोप में भय तथा क्रोध उत्पन्न हो गया था। विलियम ने अब एक मित्र-मण्डल स्थापित किया जिसमें सम्राट् इंगलैण्ड, हालैण्ड, तथा हैनोवर, ब्रेडनबर्ग आदि मुख्य २ जर्मन राज्य शामिल थे। इनका उद्देश्य था फ्रान्स तथा स्पेन का मेल रोकना तथा हालैण्ड और इंगलैण्ड को व्यापारिक स्वतंत्रता दिलाना। बवेरिया, कोलोन और स्पेन के अधीन सूबे लुई की ओर रहे।

सन् १७०१ में इटली में युद्ध आरम्भ हो गया। मित्र-दल की ओर दो चतुर सैनिक मार्लबरो तथा राजकुमार यूजीन थे।

यूजीन इटली में सेवाय के राजवंश का था, तथा बड़ा वीर लड़का था। पहली लड़ाई सन् १७०४ में ब्लेनहेम में हुई जिसमें मार्लबरो तथा यूजीन ने एक बड़ी फ्रांसीसी सेना को, जो वियाना पर आक्रमण करने जा रही थी, बुरी तरह परास्त कर दिया। दो वर्ष बाद चतुरता से मार्लबरो ने फ्रेंच सेना को दो भागों में बाँट कर नीदरलैण्ड में रेमिलीज स्थान पर हराया, उधर यूजीन ने फ्रेंच सेना को ट्यूरिन स्थान पर हराकर इटली से बाहर निकाल दिया तथा और भी कई स्थानों पर शिकिस्त दी।

परन्तु स्पेन में अल्मेंज़ा आदि दो तीन स्थानों पर फ्रांस की सेना ने १७०७ में अच्छी विजय पाई। इसी समय इङ्गलैण्ड में अकस्मात् मंत्रिमण्डल में परिवर्तन हो गया। अब तक शक्ति व्हिग लोगों के हाथ में थी, परन्तु सन् १७१० के चुनाव में टोरी दल की भारी विजय हुई। व्हिग दल में अधिकांश लोग व्यापारी थे जो युद्ध के पक्षपाती थे क्योंकि युद्ध के समय में उनके रुपये पर अच्छा सूद मिलता था, परन्तु टोरी दल में प्रायः जमींदार और सरदार थे। ये युद्ध के विरोधी थे क्योंकि युद्ध के दिनों में बढ़े हुए खर्च का हिसाब उनसे अधिक कर लेकर पूरा किया जाता था। टोरी दल ने आते ही मार्लबरो को वापिस बुला लिया और युद्ध बन्द कर दिया।

इसी समय सम्राट् जोसफ़ की मृत्यु हुई और आर्क ड्यूक चार्ल्स उसकी जगह चार्ल्स छठवें के नाम से सम्राट् हुआ। अब मित्रदल ने विचार किया कि यदि स्पेन को फ्रांस से छीन कर आस्ट्रिया के साथ मिलाया जायगा तो सम्राट् की शक्ति बहुत बढ़ जायगी अतः इसे ठीक न समझ कर इंगलैण्ड और हालैण्ड

युद्ध से अलग हो गये और लुई भी जो कई बार हारने के कारण पस्त-हिम्मत हो रहा था, संधि के लिये तैयार हो गया। इस भांति सन् १७१३ में यूट्रेक्ट की प्रसिद्ध तथा महत्वपूर्ण सन्धि हुई जिसके अनुसार फ्रान्स के चारों ओर बड़ी २ रियासतें स्थापित करके फ्रान्स की शक्ति कम की गई और इङ्गलैण्ड को स्वतंत्रता मिली। इस सन्धि के साथ सत्रहवीं शताब्दी का अन्त हुआ और यूरोप में एक नये युग का आरंभ हुआ। जिस प्रकार वेस्टफालिया की सन्धि से हेप्सवर्ग वंश की अवनति तथा फ्रान्स के वोर्वन वंश की उन्नति आरम्भ हुई थी, उसी प्रकार इस संधि से फ्रान्स की अवनति तथा इंगलैण्ड की उन्नति आरम्भ हुई। इस सन्धि की प्रधान शर्तें इस प्रकार थी।

लुई का पौत्र फिलिप पंचम स्पेन तथा उसके उपनिवेशों का राजा मान लिया गया परन्तु शर्त यह रही कि फ्रान्स और स्पेन के राज्य कभी एक में न मिलने पावें। इस भांति स्पेन के हैप्सवर्ग तथा फ्रांस के वोर्वन वंशों की लगभग दो सौ वर्ष की पुरानी शत्रुता दूर हुई क्योंकि स्पेन और फ्रान्स दोनों राज्यों पर एक ही वंश का अधिकार हुआ।

सम्राट् चार्ल्स छठवें को मिलन, नेपिल्स और स्पेनिश नीदर-लैण्डस् मिले। इससे अंग्रेज़ तथा डच दोनों सन्तुष्ट हुए क्योंकि ये लोग नीदरलैण्डस् को फ्रान्स के हाथों से वचाना चाहते थे।

सेवाय के ड्यूक को सिसली का द्वीप तथा राजा का पद मिला।

अल्सेस प्रदेश तथा स्ट्रेसवर्ग नगर फ्रांस के अधीन रहे परन्तु राइन के दक्षिण किनारे के वहुत से स्थान जो उसने ले लिये थे, उससे वापस ले लिये गये।

प्रशिया एक स्वतंत्र रियासत मानी गई और उसके ड्यूक को राजा की पदवी मिली।

इंगलैण्ड को बहुत लाभ हुआ क्योंकि उसे जिब्राल्टर मिनार्को, न्यूफाउन्डलैण्ड, नोवा स्कोशिया आदि स्थान मिले और अमेरिका से व्यापार की भी स्वतंत्रता मिली।

सम्राट् ने पहले तो इस सन्धि को अस्वीकार किया और युद्ध जारी रखा परन्तु कई स्थानों पर हारकर दूसरे वर्ष रास्टाड स्थानपर सन्धि करके उसने भी वे शर्तें मान लीं।

इस सन्धि के बाद लुई भी थोड़े ही दिन जीवित रहा। उसका बुढ़ापा बड़े दुःख में गुजरा। जीवन-काल में ही उसने अपने बड़े पुत्र डाफिन तथा दूसरे पुत्र बरगंडी के ड्यूक, और एक नाती को भी परलोकवासी होते देख लिया। युद्धों में हार के कारण वह निरुत्साही हो गया था। युद्ध तथा दरबारी शान ने कोष खाली कर दिया था। सुनसान महल में केवल एक अस्सी बरस का बुड्ढा अपने पाँच वर्ष के एकमात्र परपोते को लिये, अपने जीवन की घटनाओं को याद कर आँसू बहाया करता था। उसके समय के सब प्रसिद्ध तथा विद्वान आदमी मर चुके थे। नई सन्तान सामने दिखाई देती थी। जमाना बदल गया था। इस भाँति देश को ऋण से लदा छोड़ कर वह सन् १७१५ में परलोक सिधारा।

लुई नम्र, बहादुर, दृढ़ तथा सच्चरित्र मनुष्य था। राज-काज में वह बड़ा परिश्रमी तथा दिल से काम करने वाला था। वह अपनी जिम्मेदारी केवल परमेश्वर के प्रति समझता था न कि राष्ट्र के प्रति। अतः उसने स्वच्छन्द शासन किया। एक शताब्दी तक यूरोप उसे सभ्यता, राज्य-प्रथा, आदि में आदर्श मानता

रहा। महल को सजाकर रखना भी वह एक कर्तव्य समझता था। महल की सजावट और शान देखकर लोग चौंक जाते थे। वह यूरोप का शाहजहाँ था। फ्रान्स की पोशाक, कलाओं तथा वहाँ के साहित्य तथा आचार विचारों की यूरोप ने नक़ल की।

लुई के समय में साहित्य, कला तथा विज्ञान की दशा—

इस समय यूरोप में साहित्य तथा कलाओं का अच्छा चमत्कार था। उत्तर में विज्ञान तथा वेदान्त उन्नति पर थे। यूरोप के मध्य में होने के कारण फ्रान्स में इन दोनों का सम्मेलन हुआ। अतः उसकी भाषा का प्रचार यूरोप के प्रत्येक देश में हुआ।

लुई इतिहास में अपना नाम अमर कर जाना चाहता था। अतः वह विद्वानों को भी आश्रय देता था। इस समय का साहित्य अधिकांश धार्मिक था। इस समय मौलियर, डेस्कार्टीज़ आदि विद्वान लेखक तथा कई कलाकोविद हुए। वोसेट ने एक पुस्तक लिखकर मनुष्य और परमात्मा के बीच के सम्बन्ध पर अच्छा प्रकाश डाला। नाटक खेलने में मौलियर, कारनेली, रैसीन आदि मुख्य थे। कविता में मालहर्व, रुसो आदि तथा वक्ताओं में मास्करन, वोसेट और मेसीलोन प्रधान थे। राजा मौलियर से दोस्ती का वर्ताव रखता था और सरदारों के आक्रमणों से उसकी रक्षा भी करता था। अनेक सुखान्त उपन्यास भी इस समय लिखे गये। वोसेट, सेन्ट साइमन आदि ने इतिहास पर अच्छा प्रकाश डाला। साइमन ने राजदरबार का बड़ा बुरा चित्र खींचा है क्योंकि वह राजा और सरदारों के विरुद्ध था।

कुछ लोगों ने भूगोल तथा ससांर-भ्रमण आदि पर भी

ग्रन्थ लिखे। इन में कोचार्ड, वर्नियर आदि प्रधान हैं। वर्नियर शाहजहाँ के समय में भारत में आया था तथा उसने भारत का मनोरंजक वर्णन लिखा है। इसके अतिरिक्त और भी अनेक विद्वान उस समय थे।

फ्रांस की विजयों का इतना प्रभाव पड़ा कि इस समय यूरोप में प्रायः सब जगह फ्रेंच भाषा बोली और लिखी जाने लगी और राजनीतिज्ञों की लिखापढ़ी की भाषा वही हुई। जर्मनी में तो प्रायः यह सर्व साधारण की भाषा हो गई, परन्तु अब जर्मन लोग राष्ट्रीयता के विचार से उसे छोड़कर नये २ शब्द बनाकर जर्मन भाषा की उन्नति कर रहे हैं। अतः युद्ध में विजय का प्रभाव भाषा पर भी पड़ता है।

इंगलैण्ड, इटली और स्पेनल ने फ्रांस का अनुसरण किया। इंगलैण्ड में इस समय बेकन और शेक्सपीयर साहित्य-क्षेत्र में उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त मिल्टन, एडीसन, पोप, स्टील आदि प्रसिद्ध विद्वान हुए।

चौदहवाँ अध्याय

रूस का उत्थान

भौगोलिक स्थिति के कारण रूस यूरोप से प्रायः प्रत्येक बात में भिन्न था। वह यूरोप से अलग कटा हुआ सा था तथा सत्रहवीं शताब्दी तक यूरोप की राजनीति में उसका कुछ भी भाग न था।

रूसवाले स्लाव जाति के हैं। इसी जाति के लोग पोलैण्ड,

सर्विया आदि में रहते हैं। हम देख चुके हैं कि नवीं शताब्दी में स्वीडन के एक अधिकारी ने इन लोगों में ऐक्य स्थापित किया और दसवीं शताब्दी में इनमें ईसाई मत का प्रचार हुआ। इस भाँति धीरे २ ये लोग भी जातीयता के सूत्र में बँधने लगे। यह जाति फिनलैण्ड के आस पास विशेष तौर से बसी थी। नार्मन लोग इन्हें रोस कहकर पुकारते थे। अतः धीरे २ इस जाति का नाम 'रूसी' और देश का नाम 'रूस' पड़ गया।

चंगेजखां के आक्रमणों का हाल हम पढ़ चुके हैं। मध्य-एशिया में उसने अपना राज्य दृढ़ करके वाटूखां के साथ एक सेना पश्चिम की ओर भेजी जिसने रूसियों को हरा दिया। मास्को आदि नगर जला दिये गये। अन्त में एक बड़ी रकम देकर रूसियों ने उससे पीछा छुड़ाया। परन्तु फिर भी ये लोग रूसियों को अनेक प्रकार से तंग करते रहे।

सन् १४६२ में रूरक वंश का कुमार इवान महान् रूस की स्वतंत्रता के लिये कटिबद्ध हुआ। जब मंगोल सरदार ने अपना एक चित्र सलामी किये जाने के लिये भेजा तो इवान ने उसे पृथ्वी पर पटक कर पैर से कुचल दिया। इसी बहाने से युद्ध आरम्भ हुआ। बलगा नदी के किनारे भारी युद्ध हुआ जिसमें रूसियों की विजय हुई। इवान ने मास्को को अपनी राजधानी बनाकर, देश में यूनानी सभ्यता, धर्म, तथा कला आदि का खूब प्रचार किया; परन्तु बहुत दिनों तक तातारियों के साथ रहने के कारण, ये लोग पहनावे तथा आचार विचारों में एशिया वालों से मिलते रहे।

इसके बाद इवान चतुर्थ—भयंकर इवान—ने रूसकी सीमा-

को दक्षिण की ओर बढ़ाया। इसके समय में रूस में कुछ अंग्रेज़ आदि जातियों का प्रवेश हुआ जिससे मास्को का बाज़ार यूरोप के लिये खुल गया।

सन् १५९८ में इस वंश का अन्त हो गया और कुछ दिनों तक अराजकता फैली रही। ऐसी दशा देखकर स्वीडन और पोलैण्ड ने रूस को हड़पना चाहा परन्तु १६१३ में वहाँ के राष्ट्रीय दल ने एक १६ वर्षीय कुमार माइकल रोमनाफ़ को राजा बनाया। इस भाँति यहाँ रोमनाफ़ नामक एक नया वंश चला। इस वंश के समय में रूस की अवस्था बहुत सुधरी। साइबेरिया भी रूस में मिला लिया गया। इसी वंश में सन् १६८२ में प्रसिद्ध पीटर रूस की गद्दी पर बैठा।

यहाँ के राजा स्वच्छन्द थे परन्तु उन्हें दो ओर से भय रहता था। एक तो धार्मिक गुरु जो पेट्रिआर्क कहलाता था तथा दूसरा राजा का अंगरक्षक-दल जो राजा की रक्षा के साथ साथ मौका पड़ने पर उसके ऊपर खंजर रखने तक के लिये तैयार रहता था।

पीटर महान—(१६८२-१७२५) गद्दीपर बैठने के समय पीटर बालक था। सात वर्ष बाद राजकाज उसने अपने हाथ में लिया।

पीटर होश सम्हालते ही यह अनुभव करने लगा कि रूस सभ्यता आदि में यूरोप से बहुत पीछे है। अतः उसे यूरोप की बराबरी में लाना और बलवान बनाना यही उसका उद्देश्य था। इसे पूरा करने के लिये उसने तीन बातें स्थिर कीं—यूरोप की अग्रसर जातियों से घनिष्टता, दक्षिण और पश्चिम में कालासागर तथा बाल्टिक सागर-तक रूस का विस्तार बढ़ाना और ज़ार की शक्ति

को रोकने वालों-धर्मगुरु तथा अंगरक्षक दल—की शक्ति कम करना।

पहले उसने अग्रसर जातियों के शासन तथा उनकी सभ्यता का अध्ययन करने के लिये यूरोप में भ्रमण किया। वह जर्मनी, हालैण्ड, इंगलैण्ड आदि देशों में घूमा तथा वहाँ के कारखाने प्रेस, अजायबघर, अस्पताल आदि देखकर चकित और प्रसन्न हुआ और लौटकर उसने अपने देश में भी इनके प्रचार का प्रयत्न किया।

पीटर की आन्तरिक नीति के दो प्रधान उद्देश्य थे। अपनी शक्ति पूर्ण स्वच्छन्द करना, और अपने देश को नये आविष्कारों, व्यापार तथा कलाओं के प्रचार से धनवान तथा उन्नत बनाना। एक समय जब वह राजधानी से बाहर गया था तो उसके अंगरक्षक दल ने विद्रोह आरम्भ कर दिया। समाचार पाकर वह लौटा और उचित अवसर जानकर तथा इस बहाने को लेकर उसने उस दल को भंग कर दिया तथा उसके स्थान पर एक नई सेना स्थापित की जो सब भाँति उसी के अधीन थी। कुछ दिनों बाद धर्मगुरु की मृत्यु हो गई। उसके भाग्य से दूसरा विघ्न भी दूर हो गया। उसने दूसरा धर्मगुरु न चुना बल्कि उनके धार्मिक कार्यों के लिये एक 'पवित्र सभा' बना दी जिसके सभासदों को स्वयं उसी ने इच्छानुसार नियत किया था। फिर उसने सरदारों का भी बल घटाया और इस भाँति अपनी स्वच्छन्दता के बाधक सब कारणों को दूर करके वह पूर्ण स्वतंत्र हो गया।

फिर उसने अपने देश को और देशों की बराबरी में लाने का प्रयत्न किया। पश्चिमी देशों के आचार, व्यवहार, नाच आदि उसने अपने देश में चलाये। पहनावे और हजामत बनाने में भी उन्हीं देशों

की नकल की। रूस के लोग दाढ़ियाँ रखाते थे और मुसलमानों की भाँति उसे धार्मिक मानते थे। पीटर ने दाढ़ियाँ कटवाने की आज्ञा दी, पादरियों ने इसका भारी विरोध किया। इस पर पीटर ने स्वयं अपने हाथ से कुछ सरदारों की दाढ़ियां वनाईं और फिर दाढ़ीवालों पर एक कर लगा दिया। फिर उसने सड़कें और नहरें वना कर और फेक्टरियाँ स्थापित कर व्यापार वढ़ाया। उसने विदेशियों को रूस में आकर रहने के लिये उत्साहित किया जिससे वहाँ के लोग उनसे भिन्न २ देशों की कलायें तथा वैज्ञानिक वातें सीखें। उसने सेना और जल-सेना में भी सुधार किया और तुर्कों से अज़व नामक नगर छीन लिया। फिर उसने पुरानी राजधानी मास्को को छोड़कर नीवा नदी के तीर एक नई राजधानी वनाई जिसका नाम सेंटपीटर्सवर्ग पड़ा। नीवा नदी वाल्टिकसागर में गिरती है। अतः व्यापार के लिये भी सुविधा की जगह थी। इस भाँति पीटर ने पुराने रूस को सव वात में नया रूस वना दिया। उसने रूस की धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक दशा विलकुल वदल दी।

चारों ओर से वन्द होने के कारण रूस यूरोप से व्यापार नहीं कर सकता था। पीटर ने यह अनुभव करके अपने देश की सीमा को दोनों ओर सागरों तक वढ़ाना चाहा जिससे व्यापार खुल जाय। इस नीति से स्वीडन तथा तुर्की के साथ युद्ध की आशंका थी परंतु उसने अपना उद्देश्य पूरा करने के लिये युद्ध की परवाह न की, यही उसकी वाहरी नीति है।

पीटर ने पहले वाल्टिक सागर पर अधिकार करना चाहा परन्तु वहाँ स्वीडन का प्रभुत्व था। सन् १६९७ में चार्ल्स वारहवाँ

पंद्रह वर्ष की उमर में गद्दी पर बैठा। पीटर ने उसे बालक समझ कर स्वार्थ-साधन का अच्छा अवसर समझा और डेनमार्क, पोलैण्ड और रूस ने मिलकर स्वीडन के विरुद्ध संघ बनाया। परंतु साहसी बालक चार्ल्स ने एक एक के दाँत खट्टे कर दिये। इस संघ का समाचार सुन कर वह पहले सीधा डेनमार्क पहुँचा और राजा को घेर कर उससे संधि की प्रार्थना कराके छोड़ा। फिर बिजली की भाँति वह पीटर की ओर झुका और अपनी ८००० सेना से उसने रूसियों की पचगुनी सेना को पूरी तरह हरा के भगा दिया। यह लड़ाई सन् १७०० में नरवा के पास हुई। फिर वह पोलैण्ड की ओर बढ़ा और वहाँ के राजा को भी हराके भगा दिया। इस भाँति इस वीर बालक ने सब यूरोप को चकित कर दिया। परंतु यहाँ चार्ल्स ने एक ग़लती की। उसे पोलैण्ड के राजा को भगाकर ही सन्तोष नहीं हुआ। वहाँ के राजा आगस्टस को वह अपना व्यक्तिगत शत्रु समझता था अतः उसके सेक्सनी में भाग जाने पर चार्ल्स ने पोलैण्ड में स्टेनलास नामक एक अपना प्रतिनिधि नियत किया। इस पोलैण्ड-विजय का परिणाम हानिकर हुआ। जिन दिनों चार्ल्स पोलैण्ड के झगड़े में फँसा था, उन दिनों पीटर अपनी सेना सुधारने और बढ़ाने में लगा था और उसने स्वीडन के कुल प्रदेश पर अधिकार भी कर लिया। यह समाचार सुनकर चार्ल्स ने मास्को की ओर प्रस्थान किया परन्तु उसकी सेना लगातार युद्ध, तथा सफ़र करते २ थक गई थी, वहाँ का जलवायु भी उसके लिये प्रतिकूल था। अतः १७०९ में पीटर ने पलटावा स्थान पर चार्ल्स को बुरी तरह हरा दिया। चार्ल्स की बड़ी सेना नष्ट हो गई और उसने कुल सिपाहियों

के साथ तुर्की में जाकर आश्रय लिया । पीटर का उद्देश्य पूरा हो गया, बाल्टिक पर उसने अधिकार कर लिया ।

पीटर ने पहले तुर्कों से अज़व छीन लिया था । अब तुर्की के शाह ने चार्ल्स का पक्ष लेकर रूस के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की । पीटर को हारकर अज़व लौटाना पड़ा । चार्ल्स जब अपने देश में लौटा तो उसने देश को रूसियों, पोलैण्ड-वालों और डेनमार्कवालों के आक्रमणों से भयभीत पाया । चार्ल्स ने सात वर्ष तक वीरता से युद्ध करके देश की रक्षा की परन्तु उसका देश थकित तथा निर्धन हो गया था । १७१८ में एक घेरे में चार्ल्स मारा गया । स्वीडन ने अब बाल्टिक प्रान्त देकर सन्धि कर ली जिसमें से रूस, प्रशा और डेनमार्क ने हिस्से बाँट लिये । सेक्सनी का आगस्टस फिर पोलैण्ड का राजा माना गया। यह नीस्ताद की सन्धि कहलाती है। इस समय से स्वीडन की— जो अब तक यूरोप का एक प्रबल राष्ट्र समझा जाता था— अवनति आरम्भ हुई और वह एक तीसरे दर्जे का राज्य हो गया और उसकी पहली स्थिती रूस ने ले ली । चार्ल्स यद्यपि युद्ध-निपुण और वीर था परन्तु पीटर के समान बुद्धिमान और दूरदर्शी न था । वह युद्ध में विजय प्राप्त करना जानता था परन्तु विजित देश का ठीक प्रबंध न कर सकता था । नरवा के युद्ध के बाद उसने पोलैण्ड में कई वर्ष गँवाये और अपने शत्रु पीटर का ध्यान छोड़ दिया जिससे अन्त में उसे हारना पड़ा । इसके विपरीत पीटर का जीवन बड़ी विचित्रताओं से भरा है । वह दुश्चरित्र तथा निर्दय बताया जाता है परंतु साथ ही वह निष्कपट, हँसोड़ और सीधा था, परंतु शत्रुओं के लिये वह निर्दय था ।

उसने युद्ध में किसी के साथ दग़ा न किया। वह वीर और कार्यदक्ष था।

नवीन रूस का संस्थापक वही समझा जाता है। शिक्षित न होने पर भी वह देश की आवश्यकताओं को समझ सका और देश की उन्नति का उसने पूर्ण प्रयत्न किया। उससे पहले रूस एक निर्बल, अशान्त तथा विभक्त राज्य था परन्तु पीटर ने उसे बलवान, शान्त और संगठित किया। यूरोप में रूस को प्रधान बनाया। उसके समय से आजतक रूस का प्रभाव यूरोप की राजनीति पर बढ़ता ही गया है। वह जानता था कि जब तक ज़ार के हाथ स्वतंत्र न किये जावेंगे तब तक वह देश में मन-चाहे सुधार न कर सकेगा क्योंकि पुराने विचार वाले लोग अच्छे और हितकर सुधारों का भी विरोध करेंगे। इसी उद्देश्य से उसने अपनी स्वतंत्रता के बाधक कारणों को दूर किया। वह जनता के हित के लिये सुधारों का इतना पक्षपाती था कि विरोध करने पर उसने अपने पुत्र को भी मार डाला। वह बाहरी नीति में पूर्ण सफल रहा।

पीटर के उत्तराधिकारी—पीटर १७२५ में मर गया। उसकी विधवा स्त्री कैथेराइन गद्दी पर बैठी। दो वर्ष बाद पीटर का पौत्र पीटर द्वितीय के नाम से गद्दी बैठा। पर उसके समय में पुराने विचारवाले लोगों का ज़ोर रहा परन्तु एलिज़ाबेथ के समय में पीटर महान् की नीति फिर काम में लाई गई। पीटर की पुत्री एलिज़ाबेथ (१७४१–६२) ने सातवर्षीय युद्ध में प्रशा के फ्रेडरिक का विरोध किया। उसके बाद पीटर तृतीय एक निर्बल राजा हुआ परन्तु उसकी स्त्री ने उसे शीघ्र ही मार डाला और

कैथेराइन द्वितीय के नाम से सन् १७६२ से १७९६ तक राज्य किया। इसके समय में रूस में पीटर महान् की नीति प्रचलित रही तथा रूस यूरोप में फिर एक बलवान राष्ट्र बन गया। कैथेराइन बुद्धिमती तथा वीर थी और उसकी गणना रूस के सर्वोत्तम शासकों में है। वह विद्याव्यसनी थी तथा फ्रांस के वाल्टेयर तथा अन्य तत्त्ववेत्ताओं से लिखापढ़ी करके अपनी जिज्ञासा शान्त करती रहती थी परन्तु सदाचार में वह निर्बल थी।

उसकी विदेशी नीति अधिक प्रसिद्ध है। उसने देश का विस्तार पश्चिम की ओर और बढ़ाया। उसने पोलैण्ड नष्ट कर दिया और उसका बहुत सा भाग अपने राज्य में मिलाया। तुर्कों से काले सागर का उत्तरी भाग उसने लिया। सन् १७६८ में तुर्कों ने उससे लड़ाई की परंतु हार कर उन्हें मोल्डेविया और वेलेशिया नामक देश रूस को देने पड़े और क्रीमिया पर भी रूस का अधिकार हो गया। यहीं से 'पूर्वी प्रश्न' का झगड़ा आरंभ हुआ।

इस भाँति कैथेराइन द्वितीय के समय में रूस की बहुत उन्नति हुई। पीटर ने नवीन रूस की स्थापना की परंतु कैथेराइन ने यूरोप की राजनीति में भाग लेकर रूस का प्रभाव यूरोप में भलीभाँति जमाया। इस समय से रूस यूरोप का एक प्रधान देश बन गया।

पन्द्रहवाँ अध्याय

प्रशा का उत्थान

प्रशा की उन्नति का इतिहास मनोरंजक है तथा उसकी उन्नति बहुत शीघ्र भी हुई।

आजकल जिसे प्रशा का देश कहते हैं उसका आदि स्थान ब्रेडनवर्ग है। ब्रेडनवर्ग पहले एक सैनिक छावनी थी जहाँ पर उत्तर की जंगली जातियों के आक्रमण रोकने के लिये सेना रक्खी गई थी। सन् १४१५ में यह स्थान सम्राट् सिजिसमण्ड ने होहेंजोलर्न वंश के फ्रेडरिक को दे दिया तथा उसे सात एलेक्टरों में शामिल कर लिया गया। लूथर के समय में ब्रेडनवर्ग में भी प्रायः सब जगह ईसाई मत का प्रचार हो गया।

वाल्टिक सागर में स्थित प्रशा की जागीर पहले ब्रेडनवर्ग से विलकुल स्वतंत्र थी। यहाँ पर ट्यूटोनिक दल के नाइट (सरदार) लोगों का अधिकार था जो अपना एक मुखिया चुन लेते थे। सन् १५११ में उन्होंने ब्रेडनवर्ग के राजवंश के एक कुमार अल्वर्ट को अपना मुखिया चुना। अव तक यह जागीर पोलैण्ड के दवाव में थी तथा उसे कर देती थी। सन् १५२५ में अल्वर्ट ने पूर्वी प्रशा पर अधिकार कर लिया। फिर धीरे २ क्लीव, जूलिच, वर्ग आदि जागीरें भी उन्हें व्याह तथा युद्ध से मिल गईं और उसका विस्तार पोलैण्ड से हालेण्ड तक हो गया। लुई चौदहवें ने जब फ्राँस के प्रोटेस्टेण्ट लोगों को तंग किया तो उनमें से बहुत से लोग इन प्रान्तों में आकर वस गये जिससे ब्रेडनवर्ग तथा प्रशा

के व्यापार तथा कला-कौशल की वहुत वृद्धि हुई। अलवर्ट की मृत्यु होने पर ब्रैंडनवर्ग में राज्य करने वाले राजा ने एक वंशीय होने के कारण प्रशा पर भी अधिकार कर लिया। इस भाँति यह सम्मिलित देश प्रशा की जागीर अथवा डची कहलाने लगा।

फ्रेडरिक विलियम—सन् १६४० में फ्रेडरिक विलियम एलेक्टर हुआ। उसके समय में प्रशा ने वहुत उन्नति की। तीस वर्षीय युद्ध में भाग लेने से उसे मेग्डेवर्ग तथा पोमरेनिया आदि कुछ स्थान मिले। इसके कुछ वर्षों वाद स्वीडन और पोलैण्ड में झगड़ा हुआ. जिसमें उसने प्रशा को पोलैण्ड से स्वतंत्र कर लिया।

इस भाँति उसके समय में उसके राज्य का विस्तार तो वहुत वढ़ गया था परन्तु वह व्यवस्थित नहीं था। उसके राज्य के तीन वड़े भाग थे। प्रशा, ब्रैंडनवर्ग और क्लीव तथा उनका शासन भी भिन्न २ प्रकार से होता था। उसने विलियम ने तीनों की सेना तथा शासनप्रणाली को एक कर दिया और इस भाँति राज्य को संगठित तथा दृढ़ किया। फिर उसने सरदारों के प्रभाव को घटाकर अपनी शक्ति वढ़ाई, सेना में उन्नति की. तथा नहरें वनवाकर व्यापार वढ़ाया। वाहर से वीस सहस्र कारीगर आकर उसके यहाँ रहे जिससे कृषि, व्यापार तथा उद्योग आदि की वहुत वृद्धि हुई।

फ्रेडरिक प्रथम—पिता के मरने पर सन् १६८८ में फ्रेडरिक प्रथम गद्दी पर वैठा। वह अधिक वुद्धिमान न था। इसके समय में स्पेन की गद्दी का युद्ध छिड़ा। फ्रेडरिक ने फ्रांस के विरुद्ध सम्राट् लीपोल्ड को सहायता का वचन दिया जिससे सम्राट् ने

उसे 'राजा' की उपाधि दी। अब तक वह केवल जागीरदार अथवा ड्यूक ही कहलाता था अब वह 'प्रशा में एक राजा' कहलाने लगा। 'प्रशा का राजा' नहीं क्योंकि प्रशा के पश्चिमी भागपर अब भी पोलेण्ड का अधिकार था। अब से, ब्रेडनवर्ग का नाम प्रशा में लुप्त हो गया।

फ्रेडरिक विलियम प्रथम—(१७१३–४०) इससे पहले भी एक फ्रेडरिक विलियम हो चुका था अतः इसे दूसरा फ्रेडरिक विलियम होना चाहिये था परन्तु 'राजा' की उपाधि मिलने के बाद से फिर राजाओं का क्रम आरम्भ हुआ। पहला फ्रेडरिक विलियम राजा नहीं था केवल ड्यूक था अतः इसका नाम राजा फ्रेडरिक विलियम प्रथम हुआ।

यह भी अपने पिता के समान, दूरदर्शी तथा राजनीति निपुण न था। उसका प्रधान उद्देश्य सेना को बलवान करना था। उसने सेना की संख्या ३८००० से ८५००० कर दी और उसे यूरोप के सब देशों की सेनाओं से अधिक शिक्षित बनाया। राज्य के महकमों में इसने ऐक्य स्थापित किया। माल में सुधार किया जिससे बजट में अच्छी बचत होने लगी। इन कारणों से यह सब से बड़ा 'आन्तरिक राजा' कहलाता है। शिक्षा पर भी इसने अधिक ध्यान दिया। यूरोप की अन्तर्राष्ट्रीय नीति में भाग लेने से वह डरता था, अतः उसके राज्य का विस्तार अधिक न बढ़ा। स्वीडन से उसका एक युद्ध हुआ जिसमें सौभाग्य से उसकी विजय हुई और बाल्टिक सागर में सेटिन बन्दर उसे मिला। यह उसी का सैनिक सुधार था जिसके कारण उसके पुत्र ने यूरोप में भारी ख्याति तथा विजय पाई।

फ्रेडरिक महान्—(१७४०—८८) इसका स्वभाव अपने पिता से विलकुल भिन्न था। पुत्र आरम्भ ही से मादक पदार्थों से घृणा करता था परन्तु पिता शराब आदि वहुत चाहता था। महल और दरवार का शौकीनी ठाठ भी, जिसे पिता ने जमाया था, फ्रेडरिक महान् को पसन्द न था और राजा होने पर उसने कई सरदारों को निकाल दिया था जो अधिक ठाटवाट से रहना पसन्द करते थे। साहित्य तथा संगीत से प्रेम होने के कारण पिता उसे विलासी समझता था। पुत्र फ्रांस की सभ्यता का पक्षपाती था परन्तु पिता उसे घृणा की दृष्टि से देखता था। इसी प्रकार और वातों में भी पिता पुत्र में घोर विरोध था जिससे पिता फ्रेडरिक से अप्रसन्न रहता था। एक दिन उसने फ्रेडरिक को मारा भी और वाल पकड़ कर उसे खिड़की के पास खींच ले गया और परदे की रस्सी उसने गले के चारों ओर डालकर उसे मार डालना चाहा परंतु फ्रेडरिक ज़ोर से चिल्लाया जिससे महल का अधिकारी आ गया और उसे छुड़ा ले गया। इसके वाद भी पिता सदा उससे अप्रसन्न रहा और सदा उसकी मौत ही चाहता रहा। कष्ट देने के लिये उसने फ्रेडरिक को सेना में भर्ती कर दिया तथा और २ महकमों में भी साधारण कामों पर उसे नियत किया। परन्तु इसका फल उल्टा हुआ। फ्रेडरिक को इस भाँति राज्य के प्रत्येक भाग का अच्छा अनुभव हो गया और वह प्रबंध तथा सेना आदि के कार्यों में चतुर हो गया।

सन् १७४० में फ्रेडरिक गद्दी पर वैठा और इसी समय से उसके राज्य की असली उन्नति आरम्भ हुई तथा यूरोप में प्रशा प्रथम श्रेणी की शक्तियों में गिना जाने लगा।

आस्ट्रिया की गद्दी के उत्तराधिकार का युद्ध—इसी वर्ष आस्ट्रिया के सम्राट् चार्ल्स छठवें (देखिये स्पेन की गद्दी का युद्ध तथा यूट्रेक्ट की संधि) की मृत्यु हुई। उसके कोई पुत्र न हुआ केवल एक पुत्री मेरिया थेरेसा थी। अतः उसे भय था कि उसके पीछे यूरोप के राजा आपस में लड़कर उसके राज्य के टुकड़े २ कर आपस में बाँट लेंगे। इसलिये उसने एक नये कानून के आधार पर—जो प्रेग्मेटिक सेक्शन कहाता है—मेरिया थेरेसा को उत्तराधिकारी बनाया और यूरोप के प्रधान राजाओं से उसका समर्थन भी करवा लिया। वह सन् १७४० में मर गया। उसकी पुत्री उसकी जगह रानी हुई और उसने पिता के सम्राट्-पद का उत्तराधिकारी अपने पति—लारेन के फ्रांसिस—को बनाना चाहा। परंतु चार्ल्स छठवें के आँख मूँदते ही उसके राज्य तथा सम्राट् पद दोनों के लिये कई उम्मेदवार खड़े हो गये और अपना २ अधिकार बताने लगे।

आस्ट्रिया को इस भाँति निर्बल देखकर फ्रेडरिक ने भी इसे अपने राज्य-विस्तार का अच्छा अवसर समझा। वह बहुत दिनों से अपने दक्षिण में साइलेशिया नामक प्रान्त लेना चाहता था। अतः उसने बिना किसी सूचना के सेना लेकर आस्ट्रिया की ओर प्रस्थान कर दिया और आस्ट्रिया की सेना को हरा दिया। यह देख स्पेन, फ्रांस, बवेरिया, सेक्सनी आदि भी अपना २ अधिकार बता कर सेना भेजने लगे। इस भाँति स्वयं ही युद्ध आरंभ हो गया। फ्रेडरिक ने मेरिया थेरेसा से कहा कि अगर साइलेशिया उसे मिल जाय तो वह सब शत्रुओं के विरुद्ध मेरिया का साथ देगा, परंतु रानी ने इसे स्वीकृत न किया।

इस समय मेरिया की स्थिति बड़ी नाज़ुक थी। अंत में उसने अपनी हंगरी की प्रजा से सहायता की अपील की। उसने वहाँ की डाइट (पार्लमेंट) की स्वतंत्रता क़ायम रखने का वचन दिया और फिर अपने बच्चे को गोद में लेकर एक सार्वजनिक सभा में उसने सहायता की प्रार्थना की। प्रजा में एकदम जोश आ गया। चारों ओर से जोर की आवाजें आने लगीं—'हम अपनी रानी मेरिया के लिये मर जायँगे।' राष्ट्रीय जोश में आकर उन्हों ने सब शत्रुओं को बोहेमिया से भगा दिया परंतु फ्रेडरिक ने सन् १७४२ में उस सेना को हरा दिया। इस पर मेरिया ने फ्रेडरिक को साइलेशिया देकर उससे संधि कर ली। इस युद्ध को आस्ट्रियन गद्दी के युद्ध के अन्तर्गत, सिलेसिया का पहला युद्ध कहते हैं।

दो वर्ष तक फ्रेडरिक चुप रहा। इंगलैण्ड और हालैण्ड मेरिया की ओर हो गये और उन्होंने फ्रांसीसियों को एक युद्ध में हराया भी। बवेरिया तथा दक्षिणी जर्मनी पर मेरिया का फिर अधिकार हो गया। यह देखकर फ्रेडरिक फिर घबड़ाया। उसे भय था कि बलवान होकर मेरिया फिर साइलेशिया पर अपना अधिकार करेगी। अतः उसने फिर आस्ट्रिया की सेना को हराया। ड्रेस्डन में संधि हुई। सिलेसिया पर फ्रेडरिक का अधिकार फिर स्वीकृत किया गया तथा फ्रेडरिक ने मेरिया के पति को सम्राट् मान लिया। इस भाँति साइलेशिया का दूसरा युद्ध समाप्त हुआ।

कुछ दिन और युद्ध हुआ। अंत में थक कर सन् १७४८ में सब ने एक्स-ला-शापेल स्थान पर सन्धि कर ली जिसके अनुसार मेरिया आस्ट्रिया की रानी मानी गई। उसका पति सम्राट्

हुआ। साइलेशिया फ्रेडरिक के पास रहा और सार्डिनिया को सेवाय, नाइस और लम्बार्डी का कुछ भाग लिया, जिससे इटली में उसकी शक्ति बढ़ गई।

राजनैतिक क्रान्ति—(डिप्लोमेटिक रिवोल्यूशन) सन् १७५६ में यूरोप की शक्तियों के राजैनतिक संबंध में एकदम परिवर्तन हो गया। आस्ट्रिया तथा फ्रांस ने अपनी दो सौ वर्ष की शत्रुता छोड़ कर मित्रता कर ली जो फ्रांस की राज्यक्रान्ति तक चली। आस्ट्रिया नें इंगलैण्ड से अपना संबंध तोड़ दिया। अतः इंगलैण्ड ने प्रशिया से मित्रता की। इस भाँति राष्ट्रों के संबंध बदल गये और यूरोप का इतिहास बदलता हुआ मालूम हुआ, परंतु इस क्रान्ति ने अन्त में 'शक्तियों की समता' स्थापित कर दी। वह इस भाँति हुई।

इस समय आस्ट्रिया का प्रधान मंत्री कानिज़ नाम का एक चतुर राजनीतिज्ञ था। उसने मेरिया को राय दी कि सिलेशिया वापस लेने के हेतु आस्ट्रिया का इङ्गलैण्ड से मित्रता करना निरर्थक है; क्योंकि अंग्रेजों ने ही सिलेशिया फ्रेडरिक को दे देने की मेरिया को राय दी थी। मेरिया की राय भी उससे मिल गई। अतः उसने किसी एक ऐसे देश से मित्रता करनी चाही जो प्रशा का शत्रु हो। यह फ्रांस था। फ्रांस अपने पड़ोसी प्रशा की उन्नति से डरता था तथा उसे अपने समुद्री व्यापार तथा उपनिवेशों की रक्षा के लिये तथा इङ्गलैण्ड से स्पर्धा करने के लिए एक मित्र की आवश्यकता थी। दोनों की आवश्यकताएँ समान होने के कारण उनमें मित्रता हो गई।

इस समय यूरोप के बाहर अमेरिका और भारत में फ्रांस और इङ्गलैण्ड वालों में खूब शत्रुता चल रही थी। आस्ट्रिया से

दोस्ती छूट जाने पर इङ्गलैण्ड के राजा द्वितीय जार्ज ने महान् फ्रेडरिक से सन्धि कर ली जिसके अनुसार फ्रेडरिक ने जार्ज की मातृभूमि तथा जागीर हेनोवर की रक्षा का वचन दिया। जार्ज को हेनोवर की इङ्गलैण्ड से भी अधिक चिन्ता थी क्योंकि उसकी मातृभूमि वहीं थी। वहीं से उसका पिता इङ्गलैण्ड की गद्दी के लिये आमंत्रित किया गया था। इस भाँति प्रशा और इङ्गलैंड तथा फ्रांस और आस्ट्रिया मित्र हो गये।

सप्तवर्षीय युद्ध—एक्स-ला-शापिल की संधि के बाद भी मेरिया फिर सिलेशिया को वापस पाने की ताक लगाये रही। उसने फ्रांस से मित्रता कर ही ली थी। अब उसने रूस की रानी एलिजाबेथ तथा स्वीडन और स्पेन को भी अपनी ओर मिला लिया। वह सिलेशिया ही लेना नहीं, बल्कि प्रशा को मिटा देना चाहती थी।

आस्ट्रिया और प्रशा तथा इंगलैण्ड और फ्रांस की शत्रुता हम देख चुके हैं। इन्हीं दो दो दलों में भिन्न २ स्थानों पर युद्ध होने से सप्तवर्षीय युद्ध का आरम्भ हो गया क्योंकि यह युद्ध सन् १७५६ से सन् १७६३ तक चला। इसका उद्देश्य यूरोप में दो बातें सदा के लिये तय कर देना था—जर्मन साम्राज्य में प्रशा और आस्ट्रिया में से किसका प्रभुत्व तथा नेतृत्व रहेगा और समुद्र और उपनिवेशों में इङ्गलैण्ड और फ्रांस में से कौन प्रधान रहेगा।

इस समय फ्रेडरिक के पास एक सुशिक्षित सेना थी तथा उसके लड़ने का तरीक़ा भी अच्छा था। वह चुपचाप शत्रु सेना पर एक ओर से आक्रमण करके झट उसे हरा देता था जब तक कि और सेना वहाँ पहुँच भी नहीं पाती थी। दूसरी ओर आस्ट्रिया भी अब सलेशियन युद्ध के समय से अधिक तैयार था। पहले

सिलेशियन युद्ध में फ्रेडरिक के कई साथी थे परन्तु मेरिया अकेली तथा शत्रुओं से चारों ओर से घिरी हुई थी। इस समय स्थिति इसके विपरीत थी। मेरिया के अब कई साथी थे परन्तु फ्रेडरिक को केवल इंगलैण्ड का सहारा था।

सन् १७५६ में आस्ट्रिया के मेल की बात सुन कर फ्रेडरिक फ़ौरन सेक्सनी पहुँचा और वहाँ की सेना को हरा कर वहाँ के लोगों को अपनी सेना में भर्ती करने लगा। आस्ट्रियन सेना पहले युद्ध में बड़ी वीरता से लड़ी परन्तु हार गई। दोनों ओर के बहुत से आदमी मारे गये परन्तु फ्रेडरिक ही विजयी रहा।

दूसरे वर्ष फ्रेडरिक ने बोहेमिया पर आक्रमण किया और वहां की राजधानी प्रेग पर अधिकार करने ही वाला था कि उसकी सेना का एक हिस्सा कोलिन स्थान पर हार गया और उसे सेक्सनी को लौटना पड़ा। इस समय तक स्वीडन और रूस की सेना भी प्रशा के विरुद्ध लड़ने के लिये पूर्वी प्रशा तक आ चुकी थी और जर्मनी और फ्रांस की सम्मिलित सेना और भी पास आ पहुँची थी। फ्रेडरिक चारों ओर शत्रुओं से घिरा हुआ था। उसका अस्त अति निकट दिखाई देता था। परन्तु फ्रेडरिक घबड़ाया नहीं। उसने अपनी सेना एक पहाड़ी के नीचे छिपा दी तथा उसे शत्रुओं से घिर जाने दिया। फिर वह एकदम फ्रांसीसियों पर टूट पड़ा और स्वयं बिना किसी हानि के उन्हें उसने तितर बितर कर दिया। फिर झट लौट कर आस्ट्रियन सेना को लूथन स्थान पर (१७५७ में) हरा दिया और इस भाँति अपने देश की उसने रक्षा कर ली। इस बीच में फ्रांस ने अंग्रेजों को हरा कर हेनोवर ले लिया। अब तक इंगलैण्ड ने अपने साथी प्रशा के लिये कुछ भी न किया था, परन्तु इसी

समय एक चतुर राजनीतिज्ञ तथा दूरदेशी मनुष्य इङ्गलैण्ड का प्रधान मंत्री हुआ। यह था विलियम पिट। इसने शीघ्र ही युद्ध की स्थिति समझ कर सहायता के लिये रुपया इकट्ठा किया और उसे फ्रेडरिक के पास भेजा। उसे प्रशा की सहायता के अतिरिक्त समुद्री व्यापार की रक्षा के लिये फ्रांस से भी लड़ना था। अतः उसने अपनी सेना का एक बड़ा भाग फ्रांस से लड़ने के लिये रहने दिया तथा प्रशा को रुपयों से खूब मदद देता रहा। फिर उसने एक सेना भेज कर फ्रांस से हेनोवर वापस ले लिया।

दूसरा वर्ष फ्रेडरिक के लिये बड़ा हानिप्रद रहा। रूसियों ने उसकी सेना को बुरी तरह हरा दिया और आस्ट्रियन सेना ड्रेस्डन पर अधिकार करके उसकी ओर बढ़ने लगी। प्रशा फिर यूरोप से लुप्त होता ज्ञात हुआ। फ्रेडरिक ने आत्महत्या का भी विचार किया परन्तु इसी बीच में उसने सुना कि उसकी पैदल सेना ने फ्रांसीसियों की घुड़सवार सेना को तितर बितर कर दिया। दूसरे वर्ष उसकी सेना ने आस्ट्रियनों को फिर दो जगह हराया परन्तु वह भी धन-जन से खाली हो गया था। इसी समय इंगलैण्ड के जार्ज द्वितीय की मृत्यु हुई और पिट भी अपनी जगह से अलग हुआ। इनका स्थान जार्ज तृतीय तथा बूट ने लिया। मार्लबरो के समय की दलीलें फिर पेश की जाने लगीं और कहा जाने लगा कि इंगलैण्ड प्रशा के लिये लड़कर अपने धन-जन का नाश कर रहा है। अतः इंगलैण्ड ने फ्रांस से सन्धि की बातचीत आरम्भ कर दी। इसी समय रूस की रानी एलक्जंड्रा की मृत्यु से फ्रेडरिक को रूस का भी डर जाता रहा क्योंकि अब रूस की गद्दी पर पीटर तृतीय बैठा जो फ्रेडरिक के गुणों तथा वीरत्व

का प्रशंसक था। उसने युद्धक्षेत्र से अपनी सेना हटा ली। इसी बीच में अमेरिका तथा भारत में अंग्रेज विजयी हुए। सन् १७५८ में लुईबर्ग, १७५९ में क्वेबेक और १७६० में मौन्ट्रील अंग्रेजों ने ले लिया। अब युद्धक्षेत्र में केवल प्रशा और आस्ट्रिया रह गये, परन्तु ये भी दोनों थक गये थे और इन्हें एक दूसरे पर विजय पाने की आशा भी नहीं रही थी। अतः इस युद्ध का दो सन्धियों से अन्त हो गया।

सन् १७६३ में पेरिस में फ्रांस और अंग्रेजों के बीच सन्धि हुई जिसमें अंग्रेजों को मिनोर्की, नोवास्काटिया और कनाडा मिले और मद्रास भी उन्हें वापिस मिला। सेन्ट लूसिया, पांडिचरी और चन्द्रनगर फ्रांसीसियों को वापस मिले।

आस्ट्रिया और प्रशा के बीच में ह्यूबर्ट्सबर्ग में सन्धि हुई जिसके अनुसार सिलेशिया प्रशा के ही अधिकार में रहा परन्तु उसने सेक्सनी से अपनी सेना हटा ली।

इस भाँति इस युद्ध से प्रशा भी आस्ट्रिया के बराबर हो गया। अब जर्मनी में समान बल के दो राज्य हो गये जो जर्मनी के नेतृत्त्व तथा अपनी श्रेष्ठता के लिये लड़ने लगे। बिचारा फ्रांस बरबाद हो गया। उसके बहुत से स्थान छिन गये और यूरोप की प्रधान शक्तियों में उसकी गिनती भी अब न रही। फ्रांस इस समय निर्बल था। वहाँ कोई अच्छा राजनीतिज्ञ अथवा वीर सेनापति न था। इसी कारण प्रशा की जीत रही। दूसरे प्रशा का भाग्य भी तेज़ था। उसके भाग्य से ही रूस की रानी एलेक्जन्ड्रा की मृत्यु हो गई।

सप्तवर्षीय युद्ध ने संसार में फ्रांस के स्थान पर अंग्रेजों का

प्रभुत्त्व स्थापित कर दिया। अंग्रेजों ने भारत तथा अमेरिका दोनों जगहों में विजय पायी। दूसरा फल यह भी हुआ कि कनाडा से फ्रांस के हट जाने से अमेरिका के रहने वालों को फ्रांस का डर जाता रहा और उन्होंने थोड़े ही दिनों में लड़कर अंग्रेजों से स्वतंत्रता प्राप्त कर ली।

आस्ट्रिया—हम देख चुके हैं कि वेस्टफालिया की सन्धि (१६४८) से सम्राट् की शक्ति बहुत कम हो गई थी, परन्तु फ्रांस से उसकी शत्रुता जारी रही। सम्राट् लीयोपोल्ड प्रथम ने लुई चौदहवें के विरुद्ध डच लोगों की सहायता की। उसके बाद सन् १७११ से १७४० तक चार्ल्स छठवाँ सम्राट् हुआ जिसने तुर्कों को हरा कर बेलग्रेड, हंगरी तथा सर्बिया के कुछ भाग पर अधिकार कर लिया। उसी के समय में आस्ट्रियन गद्दी का युद्ध छिड़ा क्योंकि उसके कोई पुत्र न था। उसकी पुत्री मेरिया थेरेसा ने बड़ी वीरता से युद्ध किया परन्तु फ्रेडरिक ने उससे सिलेशिया प्रदेश ले ही लिया। मेरिया के समय में सप्तवर्षीय युद्ध हुआ। उसने माल, सेना, कानून आदि में सुधार किये।

सन् १७६५ में उसका पुत्र जोसफ द्वितीय अपने पिता लारेन के फ्रांसिस के स्थान पर सम्राट् चुना गया और मेरिया के मरने पर वह सन् १७८० में आस्ट्रिया का भी राजा हुआ। वह बड़ा मेहनती, होशियार तथा अच्छा शासक था। उसने बहुत से सुधार भी किये जिन्हें पुराने विचार के लोगों ने पसन्द नहीं किया। वह साम्राज्य की सब जातियों को मिला कर एक राष्ट्र बनाना चाहता था। उसने किसानों में से सर्फ-प्रथा (जिसमें किसान ज़मींदार से ज़मीन लेकर उसके नौकर की भाँति काम

करता था) बन्द कर दी। न्याय सबके लिये बराबर किया। हंगरी को आस्ट्रिया में मिलाने के लिये उसने वहाँ भी जर्मन भाषा चलाई। प्रेस तथा धर्म को पूर्ण स्वतंत्रता दी। स्कूल आदि स्थापित किये। सरदारों और गरीबों के बहुत से भेद मिटाये और इसी भाँति के अनेक सुधार किये। परन्तु ये सुधार अति शीघ्र तथा लोगों की इच्छा के विरुद्ध किये गये थे। अतः उनसे देश में असन्तोष फैल गया और बहुत से सुधार सफल न हो सके।

फ्रेडरिक—फ्रेडरिक के जीवन का बहुत सा भाग यद्यपि युद्धों में ही बीता परंतु उसे देश की आन्तरिक दशा सुधारने की भी चिन्ता थी। आस्ट्रियन युद्ध के बाद उसे कुछ दिन के लिये युद्ध से फुर्सत मिली। इस समय में उसने कृषि की उन्नति की, तथा नई सड़कें और नहरें बनवा कर व्यापार बढ़ाया, नये उद्योग-धंधों को प्रोत्साहन दिया। ह्यूबर्ट्सबर्ग की संधि के बाद तेईस वर्ष तक उसने अपने देश के लिये बड़ा परिश्रम किया, स्कूल खुलवाये, कानूनों को सुधारा, प्रेस तथा धर्म में सबको स्वतंत्रता दी और इसी भाँति अनेक सुधार किये जिनके कारण उसे 'महान' की पदवी दी गई।

अठारहवीं शताब्दी में यूरोप के राजनीतिक क्षेत्र में फ्रेडरिक सब से बड़ा पुरुष था। वह बड़ा साहसी और वीर था, सप्तवर्षीय युद्ध में वह प्रायः अकेला ही आधे यूरोप की शक्तियों से लड़ा था। उसकी सैनिक चतुरता देखकर लोग आश्चर्य करते थे। लूथन, मिडन आदि स्थानों की विजय इसके प्रमाण हैं। वह अपना मतलब निकालने के लिये—कुछ देश अथवा धन पाने के लिये—सब प्रकार के साधनों को अख्त्यार करने को तैयार रहता

था। सिलेशिया पर अधिकार तथा पोलैण्ड को लूटना इसके उदाहरण हैं।

शासन में वह स्वतंत्र था परंतु सदा प्रजा की भलाई चाहता था। उसने अपने अधिकारों का उपयोग प्रजा की भलाई के लिये ही किया। वह अपने को 'राज्य का नौकर' समझता था। उसमें और अन्य आदमियों में यही भेद था कि वह सब से बड़ा नौकर था। ऐसे उच्च तथा प्रजा के प्रति अपनी जिम्मेदारी के विचार बहुत कम राजाओं में पाये जाते हैं।

उसके समय में उसके राज्य का विस्तार दूना हो गया। पश्चिमी प्रशा, सिलेशिया, पोलैण्ड आदि मिलाकर उसने अपने देश को यूरोप में प्रथम श्रेणी की शक्ति बना दिया। यहीं से उसका और आस्ट्रिया का झगड़ा आरम्भ हुआ।

परंतु यह ध्यान देने योग्य बात है कि फ्रेडरिक द्वारा स्थापित राज्य-प्रबंध को चलाने के लिये उसी के समान बुद्धिमान मनुष्य की आवश्यकता थी। अतः उसकी मृत्यु के बाद उत्तराधिकारियों की निर्बलता के कारण प्रशा की अवनति आरम्भ हो गई। मंत्री केवल क्लर्क रह गये थे।

सोलहवाँ अध्याय

पोलैण्ड की लूट

सप्तवर्षीय युद्ध के बाद यूरोप में दो बड़े प्रश्न उपस्थित हुए। पोलैण्ड का प्रश्न तथा पूर्वी प्रश्न। इनमें भाग लेने वाले फ्रेडरिक, कैथेराइन तथा जोसफ प्रथम थे।

पोलैण्ड की लूट यूरोपीय इतिहास में बड़ी लज्जाजनक बात समझी जाती है। पोलैण्ड को निर्बल देखकर सब उस पर अपना २ अधिकार बताने लगे। अपने २ राज्यों को बढ़ाने की लालसा से उन्होंने वहाँ के राष्ट्रीय भावों को बिलकुल भुला कर उसे आपस में बाँट लिया।

सोलहवीं शताब्दी में पोलैण्ड एक शक्तिमान राज्य हो गया था तथा यूरोप में तुर्की के विस्तार को रोकने के लिये उसने दीवाल का काम दिया था। राजा जॉन साविस्की के समय में वह उन्नति के चरम शिखर पर पहुँच गया। सोविस्की ने कई जंगली जातियों को हराया और सन् १६८३ में तुर्कों को—जो वियाना में घेरा डाले हुए थे—करारी मात दी और उन्हें भगा दिया। इस विजय से समस्त यूरोप में उसका यश फैला क्योंकि यूरोप को तुर्की से बड़ा भय था।

परन्तु इसके बाद पोलैण्ड निर्बल होता गया। उसकी निर्बलता का कारण वहाँ का ढीला संगठन था। यद्यपि पोलैंड में राज-प्रथा स्थापित थी परन्तु राजा चुनाव द्वारा नियत किया जाता था। अतः वह चुननेवालों के हाथ का खिलौना बना रहता था। असली शक्ति चुननेवाले सरदारों के हाथ में थी। फिर वहाँ 'लिबरम विटो' नामक एक विचित्र नियम प्रचलित था जिसके अनुसार कोई भी एक सरदार वहाँ की डाइट (पार्लमेंट) द्वारा पास किये गये प्रस्ताव को रद्द कर सकता था। एक बार लगातार पन्द्रह सभाएँ इस प्रकार बिना कुछ काम किये भङ्ग कर दी गईं। ये शक्तिमान् सरदार ग़रीबों को तथा किसानों को बड़ा कष्ट दिया करते थे। वहाँ राष्ट्रीयता के भाव बिलकुल न थे। किसान

अधिकतर सर्फ थे जिन्हें इस बात की परवाह नहीं थी कि उनका राजा कौन है। संरक्षकों से ही उनका संबंध रहता था। धार्मिक झगड़े भी वहाँ बहुत चला करते थे। शक्तिमान् कैथोलिक लोग प्रोटेस्टेंट लोगों के साथ—जो वहाँ पर डिसिडेन्टस् कहलाते थे—बड़ी निर्दयता का व्यवहार करते थे।

पोलैंड की ऐसी स्थिति देखकर रूस और प्रशा ने उस पर अपना अपना दख़ल जमाना चाहा। रूस में इस समय पीटर तृतीय की स्त्री कैथेराइन द्वितीय रानी थी। दोनों का उद्देश्य पोलैंड से सेक्सनी वंश के राजा को निकालने का था। फ्रेडरिक तो अपने राज्य के भिन्न २ टुकड़ों के बीच का भाग लेकर अपने राज्य को मिलाना चाहता था, परन्तु कैथेराइन तो सभी पोलैंड को हड़पना चाहती थी।

पोलैण्ड के राजा आगस्टस तृतीय की मृत्यु के बाद कैथेराइन ने वहाँ के आन्तरिक झगड़ों में दख़ल देना आरम्भ कर दिया। उसने वहाँ के डिसिडेण्टस् लोगों की मदद करने का बहाना ढूँढ़ लिया तथा अपने कृपापात्र स्टेनलास का चुनाव वहाँ के राजपद के लिये करवा लिया और इस भाँति एक तरह उसे रूस के अधीन कर लिया।

रूस का विरोध करने के लिये वहाँ के सरदारों ने एक संघ बनाया परन्तु रानी ने इस संघ को दबा दिया। उधर फ्रेडरिक ने पोलैंड को दोनों में बाँट लेने का प्रस्ताव किया परन्तु रूस की रानी ने उसे भी अस्वीकृत कर दिया। इसी समय रूस और तुर्की में युद्ध आरम्भ हो गया। अवसर पाकर आस्ट्रिया ने पोलैंड के कुछ भाग पर अधिकार कर लिया। इससे घबड़ा कर कैथेरा-

इन ने फ्रेडरिक का पोलैंड को वाँटने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। पहला वँटवारा सन् १७७२ में हुआ। इसके अनुसार रूस को लिवानिया और लिथूनिया का कुछ भाग, तथा फ्रेडरिक को पश्चिमी प्रशा मिला। आस्ट्रिया को भी जिप्स तथा लाल रूस दिये गये। यह पोलैंण्ड का पहला बँटवारा हुआ।

सन् १७८७ में रूस और तुर्की में फिर युद्ध छिड़ा। इस अवसर को पाकर पोलैंडवालों ने रूस की अधीनता को उतार फेंकने का प्रयत्न किया। उन्होंने प्रशा से सन्धि कर ली, राज्यपद परम्परा के लिये नियत करके राजपद्धति का ढंग भी वदल दिया और लिबरम विटो भी रद्द कर दिया। कैथोलिक मत प्रधान माना गया परन्तु अन्य मतवालों को स्वतन्त्रता दी गई। आस्ट्रिया का लीयोपोल्ड द्वितीय इस परिवर्तन के पक्ष में था क्योंकि स्वतन्त्र पोलैंड पश्चिम में रूस की प्रगति को रोकने का काम देता। परन्तु प्रशा ने अपने पड़ोस में ऐसा संगठित राज्य स्थापित होने से भय माना और रूस को पोलैंड पर वड़ा क्रोध आया। तुर्की से युद्ध समाप्त होने पर रूस ने पोलैंड पर आक्रमण किया। वहाँ के कुछ देशद्रोही भी रूस से मिल गये। घर में ही दो दल होने से तथा लीयोपोल्ड की मृत्यु होने से पोलैंडवालों की सफलता की सब उम्मेद जाती रही। नया परिवर्तन रद्द कर दिया गया और दूसरा बँटवारा आरम्भ हो गया, जिसके हिस्सेदार रूस तथा प्रशा थे। इनमें रूस ने अधिक भाग ले लिया। इस समाचार को सुनकर आस्ट्रिया क्रुद्ध हुआ परन्तु फ्रान्स से युद्ध में लगे रहने के कारण वह इधर ध्यान न दे सका।

पोलैंड के लोग इन बँटवारों से सन्तुष्ट नहीं थे। कोसिस्को

नामक एक देशभक्त के नेतृत्व में एक राष्ट्रीय दल तैयार हो गया जिसने देश की स्वतन्त्रता के लिये सन् १७९४ में अन्तिम प्रयत्न किया। पहले उसे कुछ सफलता मिली, परन्तु रूस और प्रशा की सम्मिलित शक्ति के आगे वह कुछ न कर सका। रूसी सेना ने उसे हरा दिया और क़ैद कर लिया। वारसा नगर ने एक वीरता की लड़ाई लड़कर अधीनता स्वीकार कर ली और विद्रोह समाप्त हो गया।

सन् १७९५ में आस्ट्रिया और रूस में तीसरा बँटवारा हुआ। रूस, जर्मनी में आस्ट्रिया तथा प्रशा की शक्ति बराबर रखना चाहता था जिससे उनमें सदा झगड़ा होता रहे। अतः उसने एक बड़ा भाग स्वयं लेकर शेष आस्ट्रिया को दिया और एक छोटा सा भाग प्रशा को भी दे दिया गया।

इस भाँति पोलैंड के सरदारों के स्वार्थ तथा परस्पर द्वेष का फल उन्हें मिला। वे किसानों के साथ निर्दयता का बर्ताव करते थे परन्तु इस परिवर्तन से किसानों को कुछ आराम पहुँचा। पोलैंड का बँटवारा राष्ट्रीय अपराध समझा जाता है क्योंकि इन शक्तियों ने वहाँ की राष्ट्रीयता का ध्यान न रक्खा।

—*०*—

सत्रहवाँ अध्याय

अठारहवीं शताब्दी में इङ्गलैण्ड और फ्रांस

हालैंड के विलियम को इङ्गलैंड की गद्दी पर बैठ कर कई युद्ध करने पड़े। आयर्लैंड, स्काटलैंड तथा इंगलैंड के भी कुछ लोग स्टुअर्ट वंश को लौटाना चाहते थे। स्काटलैंड में वाइकाउण्ट

डराडी ने जेम्स का पक्ष लिया और एक अंग्रेजी सेना को हराया, पर वह स्वयं मारा गया और यह आन्दोलन शान्त हो गया।

आयर्लैंएड में भी अधिकांश लोग कैथोलिक थे। अतः उन लोगों ने भी जेम्स की मदद की परन्तु वे हार गये और आयरिश लोग भी बिलकुल दबा दिये गये।

विलियम ने देश में उदारता से काम लिया तथा डिसेन्टर्स (प्रोटेस्टेएट लोगों का एक दल-विशेष) को धार्मिक स्वतन्त्रता दी और इङ्गलैंड के बैंक की स्थापना की। पार्लमेंट प्रत्येक वर्ष बजट पास करती थी। अतः उसका प्रतिवर्ष मिलना आवश्यक हो गया। इसी समय से केबिनेट गवर्नमेंट की स्थापना हुई क्योंकि युद्ध का समर्थन करने के लिये उसे ह्विग दल में से मंत्री नियत करना पड़ता था और प्रतिनिधि सभा में भी उन्हीं का बहुमत था। अतः शासन को ठीक २ तथा शान्तिपूर्वक चलाने के लिये, जो दल प्रतिनिधि सभा (हाउस ऑफ़ कामन्स) में अधिक हो उसी दल का मन्त्री चुनने की परिपाटी चल गई।

बाहरी नीति में भी उसने अधिक भाग लिया। स्टुअर्ट राजा फ्रांस के हाथ के खिलौने थे। विलियम ने यूरोप में अपना प्रभाव जमाया। उसने लुई चौदहवें के राज्य-विस्तार को रोका। इसीलिये उसने अग्सवर्ग-संघ में भाग लिया था तथा जब लुई ने जेम्स के पुत्र को इङ्गलैएड का राजा घोषित किया तो विलियम ने लुई के विरुद्ध 'ग्रांड अलायन्स' की स्थापना की और स्पेन की गद्दी के युद्ध में भाग लिया। इससे इंगलैएड की सामुद्रिक तथा व्यापारिक श्रेष्ठता स्थापित हो गई, (यूट्रेक्ट की संधि) यद्यपि वह उसे देखने के समय तक जीवित न रहा।

रानी एन—(१७०२–१४) विलियम की स्त्री मेरी उससे पहले ही मर चुकी थी अतः विलियम के मरने पर मेरी की बहन एन रानी हुई। इसके समय में स्पेन की गद्दी का युद्ध समाप्त हुआ और इंगलैण्ड का सिक्का बाहरी देशों में जम गया।

इसी के समय में इङ्गलैण्ड और स्काटलैण्ड की पार्लमेंट एक में मिलाई गई जिससे दोनों देशों को लाभ हुआ। इसके राज्य में पार्टी गवर्नमेण्ट ने ज़ोर पकड़ा। इसके चिन्ह तो १६४१ की लम्बी पार्लमेन्ट से ही प्रकट हो निकले थे तथा गृहकलह में यह और भी स्पष्ट हो गये थे। चार्ल्स प्रथम के समय में इंगलैण्ड में दो राजनीतिक दल प्रकट हुए—राउन्ड हैड्स तथा कैवेलियर्स। पहले पार्लमेण्ट के तथा दूसरे राजा के समर्थक तथा पक्षपाती थे। कुछ दिनों बाद ये ही दल व्हिग्ज़ तथा टोरीज़ कहलाने लगे। ये दल उस समय की प्रायः प्रत्येक बात में विरोध रखते थे। टोरी, राजा के 'ईश्वरीय अधिकार' को मानते थे परन्तु व्हिग प्रजा के अधिकारों को माननेवाले थे। व्हिग, फ्रांस के विरुद्ध युद्ध जारी रखना चाहते थे परन्तु टोरी शान्ति चाहते थे क्योंकि युद्ध के लिये उधार लिये गये रुपयों के सूद के लिये टोरी लोगों पर अधिक कर लगाया जाता था। क्योंकि वे प्रायः ज़मींदार तथा जागीरदार थे, व्हिग डिसेण्टर्स लोगों को भी धार्मिक स्वतंत्रता देना चाहते थे परन्तु टोरी एलिज़ाबेथ द्वारा स्थापित इङ्गलैण्ड के गिर्जे के समर्थक थे। इस भांति वे प्रायः बिलकुल विरोधी थे।

सन् १७१४ में रानी एन की मृत्यु हुई। उसके रानी होने के समय ही यह निश्चित कर लिया गया था कि यदि उसके कोई पुत्र न हो तो इङ्गलैण्ड का राज्य हैनोवर की एलेक्ट्रेस स्नेलिया

के वंशजों को मिलेगा, अतः सोफ़िया का पुत्र हैनोवरवंश का जार्ज प्रथम इंगलैण्ड की गद्दी पर बिठाया गया।

हैनोवर वंश-जार्ज प्रथम—इसने आते ही इंगलण्ड की बाहरी नीति बदल दी क्योंकि उसे सबसे अधिक अपने देश हैनोवर की चिन्ता थी। इसलिये उसने हालैण्ड और आस्ट्रिया से मित्रता की तथा स्पेन के प्रसिद्ध मंत्री अलबरूनी के प्रयत्न से इंगलैण्ड और फ्रांस में भी मित्रता हो गई।

अलबरूनी बड़ा बुद्धिमान मन्त्री था। वह स्पेन की खोई हुई शक्ति लौटा कर उसे फिर यूरोप में प्रधान बनाना चाहता था। उसने कृषि, व्यापार, सेना, माल आदि महक्मों में बहुत सुधार किये। वह इटली में आस्ट्रिया के प्रभाव को भी रोकना चाहता था। इस समय लुई चौदहवाँ मर चुका था तथा लुई पन्द्रहवाँ बालक था। फिलिप पंचम, लुई का संरक्षक होना चाहता था, परन्तु यह यूट्रेक्ट की सन्धि के विरुद्ध था। अतः फ्रांस को इंगलैण्ड से मित्रता करनी पड़ी। रूस की ओर से हैनोवर की रक्षा करने के लिये जार्ज प्रथम ने भी इसे स्वीकार कर लिया। इस भांति इंगलैण्ड, फ्रांस और हालैण्ड का एक त्रिगुट बना जिसका उद्देश्य यूट्रेक्ट की शर्तों की रक्षा करना था।

सन् १७१९ में स्पेन ने आस्ट्रिया से युद्ध करके सार्डिनिया और सिसली ले लिये परन्तु यह भी यूट्रेक्ट की सन्धि के विरुद्ध था। अतः त्रिगुट ने युद्ध की घोषणा कर दी। आस्ट्रिया भी इस गुट में शामिल हो गया। स्पेन की सेना हार गई।

जार्ज प्रथम के राज्य में कैबिनेट गवर्नमेंट की प्रथा पूर्ण हुई। वह अंग्रेज़ी भाषा तथा राजनीति से अनभिज्ञ था। अतः किसी सभा में

न जाता था तथा प्रवन्ध के लिये मंत्रियों पर आश्रित रहता था। व्हिग दलकी सहायता से उसे राज्य मिला था। अतः उसने उन्हीं का पक्ष लिया क्योंकि टोरी लोग अब भी स्टुअर्ट वंश के पक्ष में थे। मंत्रियों को अपनी नीति चलाने के लिये कामन्स सभा में उनका वहुमत होना आवश्यक था। इस भाँति राजा, मंत्रीगण तथा पार्लमेण्ट में ऐक्य स्थापित हो गया तथा केविनेट-प्रथा आरंभ हो गई अर्थात् जो दल कामन्स सभा में अधिक हो उसमें से सब मंत्री तथा प्रधानमंत्री चुने जाँय।

जार्ज द्वितीय—(१७२७–६०) जार्ज द्वितीय के वचपन के समय वालपोल प्रधान मंत्री था। वह शांति का बड़ा पक्षपाती था क्योंकि वह व्यापार की वृद्धि करना चाहता था। तो भी उसे स्पेन के उपनिवेशों में अंग्रेज़ व्यापारियों को तंग किये जाने के कारण युद्ध करना पड़ा। दूसरे वर्ष (सन् १७४० में) आस्ट्रियन गद्दी का युद्ध आरंभ हो गया। अतः शान्ति का पक्षपाती होने पर भी उसे युद्धों में प्रवृत्त होना पड़ा।

जब फ्रेडरिक ने सिलेशिया पर आक्रमण किया तो हैनोवर की चिन्ता से जार्ज ने फ्रांस तथा आस्ट्रिया की रानी मेरिया से मित्रता की। १७४८ की सन्धि से फ्रांस ने अन्तिम बार इंगलैण्ड में हैनोवर वंश का राज्य स्वीकार कर लिया और जेम्स के वंशजों को सहायता देना छोड़ दिया।

जार्ज तृतीय—जार्ज द्वितीय के बाद सन् १७६० में उसका नाती जार्ज तृतीय गद्दी पर बैठा और १८२० तक रहा। वह पार्टी सिस्टम तथा केविनेट गवर्नमेन्ट को पसन्द न करता था, क्योंकि इसके कारण मंत्री लोग राजा से स्वतंत्र हो जाते थे।

वह राजाओं को पहले के समान शक्तिशाली चाहता था। इसके समय में सप्तवर्षीय युद्ध समाप्त हुआ; युद्ध-प्रिय होने के कारण उसने पिट को हटाकर बूट को मंत्री बनाया। बूट भी शान्ति चाहता था। अतः उसने फ्रेडरिक को बीच ही में छोड़कर फ्रांस से सन्धि की बातचीत आरम्भ कर दी।

वह हठी और दूरदर्शी था तथा उसके समय में सुधार रुके रहे जिससे अमेरिका युद्ध करके स्वतंत्र हो गया और आयर्लैण्ड में भी बहुत अशान्ति रही।

अमेरिकन क्रान्ति—सप्तवर्षीय युद्ध के कारण इंगलैण्ड पर भारी कर्ज़ा हो गया। अंग्रेजों ने कहा कि इतना कर्ज़ अमेरिका की रक्षा के लिये लड़ने के कारण ही हुआ है। अतः यह उन्हीं से वसूल किया जाना चाहिये। परन्तु अमेरिकावाले इस दलील को सुनकर बड़े क्रोधित हुए। कनाडा से फ्रांसीसियों के चले जाने के कारण वे निर्भय हो गये थे। जब इङ्गलैंड की पार्लमेंट ने 'स्टैम्प एक्ट' नामक एक नया कानून उनसे रुपया वसूल करने के उद्देश्य से जारी किया तो समस्त अमेरिका में एक दम क्रोधाग्नि फैल गई। उनका कहना था कि इङ्गलैंड को उन पर कर लगाने का कोई अधिकार नहीं है। क्योंकि पार्लमेंट में उनका कोई प्रतिनिधि नहीं था। यद्यपि वह क़ानून रद्द कर दिया गया परन्तु फिर भी अंग्रेज़ उन पर कर लगाने का अपना अधिकार बताते रहे। अतः द्वेष चलता रहा। फिर एक दूसरा कर उन पर लगाया गया जिससे बोस्टन नगर में विद्रोह आरंभ हो गया। अवस्था आशंकाजनक देख कर इङ्गलैंड के प्रधान मंत्री लार्ड नार्थ ने चाय के क़र को छोड़ कर शेष सब कर माफ़ कर दिये। इस पर क्रुद्ध

अमेरिकनों ने बन्दरगाहों के सब चाय से लदे जहाजों को पकड़ कर सन्दूकों को समुद्र में फेंक दिया। इस पर अंग्रेजों ने बोस्टन का सब व्यापार बन्द करके उनसे बदला लेना चाहा। अमेरिकनों ने सन् १७७१ में इसके जवाब में 'स्वतन्त्रता की घोषणा' कर दी। युद्ध आरम्भ हो गया। अंग्रेजों की दो बड़ी सेनाएँ जान बरगाइन तथा लार्ड कार्नवालिस के नेतृत्व में थीं। दूसरी ओर प्रसिद्ध देशभक्त जार्ज वाशिंगटन अपनी अशिक्षित परन्तु उत्साहपूर्ण सेना को लिये था। पहले कुछ स्थानों पर अंग्रेजों की जीत हुई परन्तु अमेरिकनों ने सेरेटोगा स्थान पर घेर कर बरगोइन तथा उसकी सेना से अधीनता स्वीकार करा ली। सन् १७८१ में यार्कटाउन स्थान पर लार्ड कार्नवालिस ने भी अधीनता स्वीकार कर ली जिससे युद्ध समाप्त हो गया। सन् १७८३ में वर्साई (वर्सेलीज़) की संधि हुई जिससे अमेरिका की स्वतन्त्रता स्वीकार कर ली गई। फ्रांस ने भी अमेरिकनों को सहायता के लिये कुछ सेना भेजी थी। अतः उसे भी कुछ उपनिवेश मिल गये। परन्तु उसने जिस उद्देश्य से इस युद्ध में भाग लिया था वह पूरा न हुआ। उसने समझा था कि अंग्रेजों से कनाड़ा की हार का बदला लेने का यह अच्छा अवसर है तथा इसमें भाग लेने से फिर उसे कुछ देश मिल जायेंगे। इसमें फ्रांस का बहुत धन खर्च हो गया जो शीघ्र ही क्रान्ति का एक कारण हुआ। इस युद्ध तथा प्रजातंत्र की स्थापना का यूरोप के विचारों पर बहुत प्रभाव पड़ा, विशेषतया फ्रांस पर, जहाँ के लोगों ने अमेरिकनों की तरह स्वतंत्रता पाने की इच्छा से अपने यहाँ भी विप्लव आरम्भ कर दिया।

आयर्लैण्ड के लोगों में भी, जो अब तक अंग्रेजों के सब

कार्यों तथा अत्याचारों को चुपचाप सह लेते थे, इस उदाहरण से जागृति उत्पन्न हो गई तथा उन्होंने अपनी अलग व्यवस्थापक सभा चाही। अंग्रेज सरकार डर गई। इसी बीच में कैथोलिक तथा प्रवासी प्रोटेस्टेण्ट लोगों से झगड़ा हो गया। पिट ने इस कलह के अन्त का एक अच्छा उपाय निकाला। सन् १८०० में उसने इंगलैण्ड की पार्लमेण्ट में आयलैंण्ड की पार्लमेन्ट को भी सम्मिलित करके कुछ काल के लिये आयलैंण्डवालों का असन्तोष शान्त कर दिया, परन्तु वह वहाँ स्थायी शान्ति स्थापित न कर सका और शीघ्र ही फिर झगड़े आरंभ हो गये।

लुई चौदहवें के पश्चात् फ्रांस की दशा

हम देख चुके हैं कि सन् १७१५ में लुई चौदहवाँ केवल अपने एक पांच वर्ष के पौत्र को छोड़ कर मरा था। उसके बाद यही बालक लुई पन्द्रहवें के नाम से फ्रांस की गद्दी पर बैठा और उसका चचा आरलीन्स का ड्यूक फिलिप उसका संरक्षक नियत हुआ। फिलिप योग्य होने पर भी व्यसनी था, इसके सामने सब से विकट प्रश्न आर्थिक सुधार का था। लुई चौदहवें के निरन्तर युद्धों के कारण कोष खाली हो गया था। जानला नामक एक स्काटलैण्ड वासी ने आर्थिक स्थिति सुधारने के कुछ सुधार बताये जो बड़े ध्यान से सुने गये। उसके कहने से फ्रांस में एक सरकारी बैंक स्थापित किया गया और उत्तरी अमेरिका में अपने अधिकार की साख पर कागजी रुपया चलाया गया। उत्तरी अमेरिका के प्रान्त लूसियाना में व्यापार का सर्वाधिकार कुछ रुपया लेकर एक विशेष कम्पनी को दिया गया। इस कम्पनी के

शेयर्स भी खूब बिके परन्तु सरकार के ये दोनों प्रयत्न असफल हुए और हजारों फ्रांसवासियों को भारी आर्थिक हानि सहनी पड़ी।

हाँ, विदेशी नीति में संरक्षक फिलिप को अवश्य सफलता मिली। १७१३ की यूट्रेक्ट संधि के अनुसार फ्रांस और स्पेन की गद्दियों का सम्बन्ध तोड़ दिया गया था। एक दूसरे पर अधिकार नहीं कर सकता था, न दोनों मिलाये जा सकते थे। परन्तु स्पेन के फिलिप पंचम ने स्वयं लुई पन्द्रहवें का संरक्षक बनना चाहा। इसका कारण यह था कि योग्य प्रधान मंत्री अलबरूनी की नीति के कारण स्पेन फिर समृद्ध और बलवान हो गया था। संरक्षक फिलिप ने यह देखकर इंगलैण्ड से पुरानी शत्रुता छोड़कर उससे मेल कर लिया और हालैण्ड को भी अपनी ओर मिला लिया। परन्तु शीघ्र ही फ्रांस और स्पेन में भी संधि हो गई और एक शर्त के अनुसार लुई पन्द्रहवें की शादी स्पेन के फिलिप पंचम की पुत्री से हो गई।

१७२३ में लुई पन्द्रहवें ने केवल १३ वर्ष की अवस्था में राज्यकार्य अपने हाथ में ले लिया और एक विश्वासपात्र नौकर कार्डिनल फ्लूरी को अपना प्रधान मंत्री बनाया। फ्लूरी ने उचित काट छाँट कर के आर्थिक अवस्था को बहुत कुछ सुधारा। वह शान्तिप्रिय था परन्तु फिर भी उसे दो युद्ध करने पड़े।

सन् १७३३ में आगस्टस द्वितीय की मृत्यु के पश्चात् पोलैण्ड का सिंहासन खाली हुआ और उसके लिये शीघ्र ही दो उम्मेवार सेक्सनी का आगस्टस–(तृतीय) और स्टेनलास–खड़े हो गये। आस्ट्रिया के सम्राट् चार्ल्स षष्ट ने आगस्टस का पक्ष लिया परन्तु लुई पन्द्रहवाँ अपने सम्बन्धी स्टेनलास की ओर था।

दोनों दलों में युद्ध हुआ जिस में आस्ट्रिया की हार हो गई। परन्तु वियाना की सन्धि के अनुसार आगस्टस ही पोलैण्ड का राजा माना गया और स्टेनलास को जीवन भर के लिये फ्रांस के पास लारेन नामक जागीर दे दी गयी। यह जागीर अब तक जर्मनी के अधिकार में थी।

कार्डिनल फ्लूरी १७४३ में मर गया और फ्रांस की व्यवस्था में फिर गड़बड़ मच गयी। लुई पन्द्रहवाँ आरामतलब और विषयी निकला और राज्य की बागडोर वास्तव में दो स्त्रियों के—जिनमें मेडम डी पोम्पेडोर प्रधान थी—हाथ में आ गयी। इसका फल यह हुआ कि सप्तवार्षिक युद्ध (१७५६–६३) में फ्रांस की भारी पराजय और क्षति हुई और अमेरिका और भारत में साम्राज्य स्थापित करने का स्वप्न धूल में मिल गया।

सन् १७६४ से ७० तक चोइसल प्रधान मंत्री रहा। उसने फ्रांस की जलशक्ति को बढ़ाना चाहा। इसके समय में ही लारेन और कार्सिका फ्रांस में मिलाये गये। देश को ऋण से लदा तथा प्रजा को कष्टमय तथा असन्तुष्ट छोड़कर सन् १७७४ में लुई पन्द्रहवाँ भी मर गया। लक्षणों से वह जान गया था कि फ्रांस में शीघ्र ही असन्तोष और उपद्रव फैलेगा। यह भारी उपद्रव उसके पुत्र लुई सोलहवें के समय में हुआ।

—*:※:*—

अठारहवाँ अध्याय

फ्रांस की राज्यक्रान्ति

राज्यक्रांन्ति के कारण

किसी लेखक का कहना है—'फ्रांस की राज्यक्रान्ति के आरम्भ से, यूरोप का इतिहास, एक राष्ट्र के, एक घटना के तथा एक ही मनुष्य के इतिहास में लीन हो जाता है।' वह राष्ट्र फ्रान्स है, वह घटना क्रान्ति है तथा वह मनुष्य नेपोलियन है ? वास्तव में अठारहवीं शताब्दी में यह एक ऐसी घटना हुई जिसने यूरोप का इतिहास ही बदल दिया। यह घटना एक प्रकार के राजनैतिक भूकम्प के समान थी जिसने समस्त यूरोप को हिलाकर पुराने आचार विचारों को मिट्टी में मिला दिया। अब विचारने की बात यह है कि इतनी बड़ी घटना किस प्रकार घटित हुई। क्या यह अकस्मात् हो गई ? क्या इसका कोई कारण न था। इसके उत्तर में एक विद्वान का कहना है कि क्रान्तियाँ कभी भी बिना विशेष कारणों के नहीं होतीं। वे अकस्मात् नहीं होतीं। अतः इस घटना के कारण भी उतने ही प्रबल होना चाहिये जितनी बड़ी यह घटना थी। इन कारणों को जानने के लिये हमें तत्कालीन फ्रांस की राजनैतिक तथा सामाजिक दशा का अवलोकन करना चाहिये।

निरंकुशता—फ्रांस में यद्यपि नाम के लिये एक पार्लमेन्ट थी परन्तु शासक वास्तव में पूर्ण स्वतंत्र थे। उनका काम आज्ञा

देना तथा प्रजाका कार्य उस आज्ञा को शिरोधार्य करना था। परन्तु ऐसा राज्य चलाने के लिये शक्तिमान शासक की आवश्यकता थी। लुई चौदहवाँ जबतक रहा, तब तक सब काम ठीक चलता रहा परन्तु उसके उत्तराधिकारी निर्बल हुए और राज्य को न सँभाल सके। राज्यभार स्वार्थी मंत्रियों तथा सुन्दरी प्रेमिकाओं के हाथ में आ गया। लुई १५ वें के महल में अनेक सुन्दरियाँ रहती थीं, जिनमें ड्यूबारी का अधिक प्रभाव था। राजा का अधिकांश समय ऐसे ही लोगों के साथ जाता था। इन कारणों से प्रजा असन्तुष्ट हो गई और राजा के प्रति उसकी श्रद्धा घट गई।

इसके अतिरिक्त वहाँ पर—जैसा इस समय बंगाल में है—एक ऐसा भी कानून था जिसके अनुसार कोई भी सन्दिग्ध मनुष्य तुरन्त पकड़ा जा सकता था और बिना जाँच किये कारागार में भेजा जा सकता था। इस कानून के कारण लोगों की स्वतंत्रता प्रतिक्षण सन्देह में रहती थी। उन्हें सभाएँ करने अथवा इकट्ठे खड़े होकर बातचीत करने की भी मनाही थी।

सामाजिक असमानता—उस समय फ्रांस में अनेक सामाजिक श्रेणियाँ थीं जिनके अधिकार भिन्न २ थे। उनके मुख्य दो भाग किये जा सकते हैं। एक तो वे लोग जिन्हें कुछ विशेषाधिकार प्राप्त थे तथा दूसरे वे जो उनसे वंचित थे। पहली श्रेणी में सरदार तथा ऊँची श्रेणी के पादरी थे जिनके पास सम्पत्ति अपार थी परन्तु जो कर नाममात्र का देते थे। दूसरे दर्जे में व्यापारी कारीगर तथा किसान थे। कर का सारा भार इन्हीं पर और विशेषतया किसानों पर पड़ता था। पादरी तथा

सरदार फ्रांस की ⅕ भूमि के मालिक थे परन्तु कर से प्रायः बिलकुल मुक्त थे। पादरी लोग धार्मिक कामकाज छोटे नौकरों और पुजारियों पर छोड़ कर स्वयं बिलकुल सरदार बने रहते थे। इनका आदर भी बहुत होता था। अतः सरदारों के ऐसे लड़के जिन्हें जायदाद कम मिलती थी, अथवा जो उससे वंचित रह जाते थे, वे इस श्रेणी में भर्ती हो जाते थे। यहाँ उन्हें सब तरह का आराम था, उनका सम्मान होता था, सेना तथा बेड़े में भी उन्हें अच्छी नौकरियाँ मिल जाती थीं, आमदनी खूब होती थी, जिससे ऐश का सारा सामान तैयार रहता था, सारा ठाठ नवाबी था। नीचे के पुजारी जो अधिकांश किसानों में से भर्ती किये जाते थे, बिलकुल ग़रीब थे, बहुत से पूरा भोजन भी न पाते थे परन्तु बड़ों को उनकी क्या चिन्ता थी, उन्हें अपने आराम से काम था। अतः ये छोटी श्रेणी के पुजारी भी असन्तुष्ट ही रहते थे।

इस भाँति सरदारों और बड़े महन्तों के बाद उनका नम्बर था जिन्हें ये विशेषाधिकार प्राप्त न थे। ये लोग 'टायर एटाट' (थर्ड एस्टेट) कहलाते थे। मध्यश्रेणी के लोग, व्यापारी आदि इन्हीं में शामिल थे। इनमें व्यापारी तथा अन्य कुछ लोग पढ़े लिखे होते थे और प्रायः ये ही लोग रुपया देकर म्युनिसपैलटियों की मेम्बरी ख़रीद लेते थे। ये लोग धनवान थे। अतः दर्जे में नीचे समझे जाने के कारण असन्तुष्ट थे। कारीगर तथा किसान आदि इन्हीं के आश्रित थे जिनकी संख्या सब से अधिक अर्थात् ढाई तीन करोड़ थी परन्तु इनकी दशा बहुत हीन थी। उन्हें सरदारों को मालगुजारी देनी पड़ती थी। गिर्जे में भेंट

चढ़ानी पड़ती थी, तथा राजा को कर देना पड़ता था जो प्रायः अधिक होता था। इसके अतिरिक्त नई सड़कें, नहरें आदि बनते समय उनसे ज़बरदस्ती बेगार ली जाती थी। उनके लड़कों को भी नाममात्र के वेतन पर सरदारों तथा जमींदारों के यहाँ नौकरी करनी पड़ती थी। इस भाँति उनमें से बहुतों को निर्वाह के लिये रात में चन्द्रमा के उजाले में हल चलाना और अनाज बोना पड़ता था क्योंकि दिनमें उन्हें समय ही न मिलता था। फिर उनके ये खेत भी सुरक्षित न थे। सरदारों को शिकार का पूरा अधिकार प्राप्त था, तथा उनके जानवर गाय, बैल, घोड़े आदि स्वेच्छापूर्वक फिर सकते थे। अतः किसानों को अपने खेतों के चारों ओर मेढ़ बाँधने का अधिकार न था, क्योंकि इससे सरदारों के जानवरों के स्वेच्छापूर्वक विचरण में बाधा पड़ती थी।

कर उगाहने का तरीका भी दूषित था। कर उगाहने का ठेका कुछ सरदारों को पहले ही एक निश्चित रक़म लेकर दे दिया जाता था। अतः सरदार अब मनमाना कर वसूल कर सकते थे और न देने पर किसानों पर खूब अत्याचार करते थे। उनकी सूरत देखकर गाँव वाले काँपने लगते थे और अनेक बीमार भी पड़ जाते थे परन्तु इस भाँति भी वे कर देने से बच न सकते थे। उनके चौपाये, किंवाड़, खाट आदि नीलाम कर करके कर वसूल किया जाता था। इस भाँति गाँव अस्पताल बन रहे थे जहाँ अनेक मनुष्य भूखों मरते थे। अनेक बीमार हो कष्ट से कराहते थे। उन्हें राजनैतिक अधिकार बिलकुल न थे। कुछ लोगों ने साहस करके राजा के पास लिखकर शिकायत भी की परन्तु नतीजा यह हुआ कि राजा ने महल की खिड़की से उनकी भीड़ को देखा, उनके

प्रार्थना-पत्र को केवल देख लिया पर उसे पढ़ा भी नहीं और उनके दो मुखियाओं को फौरन फाँसी पर चढ़ा दिया और शेष को भगा दिया।

कहते हैं कि उस समय फ्रांस की ही नहीं, वल्कि समस्त यूरोप के किसानों की ऐसी ही दशा थी, और कहीं २ इससे भी खराव थी। परन्तु वात यह थी कि अन्य देशों के किसान उन कष्टों को चुपचाप सह लेते थे और वहुत अंशों में भारत के किसानों के समान उन्हें ज्ञान भी न था कि उनके कष्टों का मूल कारण क्या है? परन्तु फ्रांस के किसानों में विद्वानों के प्रभाव से—जैसा कि हम आगे देखेंगे—जागृति उत्पन्न हो गई थी और उन्हें अपनी स्थिति का पता चल गया था। इसी कारण यह क्रान्ति फ्रांस से ही आरम्भ हुई।

तत्कालीन साहित्य—इस भाँति फ्रांस की सभी श्रेणियों में असन्तोष फैला था। लोगों की क्रोधाग्नि धीरे २ चढ़ रही थी। इसी समय वहाँ के तत्कालीन साहित्य ने वायु के झोंकों का काम किया। इस समय का फ्रांस का वेदान्त क्रान्तिकारी था, जिसका उद्देश तत्कालीन सरकार और समाज का विरोध करना था। उस समय के लेखकों में माण्टेस्क्यू, वाल्टेयर तथा रूसो वहुत प्रसिद्ध हैं तथा फ्रांस पर उनका प्रभाव भी वहुत पड़ा। वाल्टेयर वड़ा विद्वान था। वह कविता, इतिहास नाटक, वेदान्त, धर्मशास्त्र आदि सभी विषयों में अद्वितीय था। उसके लेखों ने प्रजा के हृदय में राजा तथा धर्म के लिये श्रद्धा कम कर दी। वह राज्य में अनेक सुधार चाहता था। रूसो उससे भी वढ़ा हुआ था। उसका कहना था

कि समाज की नींव व्यक्तियों के आपस के समझौते पर है। उसने प्रसिद्ध पुस्तक 'सोशल कन्ट्राक्ट' लिख कर बतलाया कि सब मनुष्य स्वतंत्र तथा बराबर हैं। उसका कहना था कि मनुष्य स्वतंत्र उत्पन्न हुआ है परन्तु प्रत्येक जगह बन्धन में पड़ा हुआ है। उसके अनुसार वह सरकार जिसके कार्यों में समस्त प्रजा का भाग नहीं है सच्ची सरकार नहीं हैं। असली शक्ति जनता के हाथ में है। सरकार की उत्पत्ति जनता से ही है। अतः जनता को सरकार को पलट देने का भी अधिकार है। सदियों से अत्याचार से पीड़ित तथा दुखी मनुष्यों पर इन लेखों का बड़ा प्रभाव पड़ा।

आर्थिक दशा—दुर्भाग्य से इसी समय फ्रान्स की आर्थिक दशा भी बहुत बुरी थी। लुई चौदहवें के युद्धों के कारण फ्रान्स पर बहुत ऋण हो गया था तथा उसके पश्चात् भी प्रबन्ध ठीक न होने से ऋण बढ़ता ही गया। लुई पन्द्रहवें ने भी अपने कृपापात्रों पर तथा ऐशआराम में यथेच्छ धन उड़ाया। उसके बाद भी खर्च बढ़ा ही रहा परन्तु आय न बढ़ी। १७८९ में आय २ करोड़ से कम थी परन्तु व्यय २॥ करोड़ हुआ।

ऐसे समय में सन् १७७४ में लुई पन्द्रहवें की मृत्यु हुई और उसके पापों का प्रायश्चित्त करने के लिये उसका पुत्र लुई सोलहवाँ गद्दी पर बैठा। वह सुशील राजा था, पिता के समान अवगुणी न था तथा राज्य में सुधार भी करना चाहता था, परन्तु अब सुधारों का समय निकल चुका था, फ्रांस में असन्तोष बहुत बढ़ चुका था। इस समय की स्थिति के सुधारने के लिये किसी योग्य दूरदर्शी, राजनीतिज्ञ तथा दृढ़ शासक की आवश्यकता थी; परन्तु

विचारा लुई सीधा सादा मनुष्य था। अतः वह स्थिति को न सम्हाल सका।

सबसे पहिले आर्थिक दशा ने उसका ध्यान अपनी ओर खींचा। सौभाग्य से उसे टरगट नाम का एक अनुभवी मनुष्य भी मिल गया। उसने अनेक विभागों में व्यय कम किया और कई नई युक्तियों से आमदनी बढ़ाई परन्तु फिर भी उसे पूर्ण सफलता न मिली। एक उपाय और था परन्तु क्या वह कार्यान्वित हो सकता था? सरदारों की आमदनी बहुत अधिक है क्या उनसे उसी हिसाब से कर नहीं लेना चाहिये? वह इस प्रकार सोचता ही था कि पार्लमेंट के सरदारों ने एकदम 'टरगट को हटाओ' की पुकार मचा दी। राजा विचारा निर्बल था तथा अपनी स्त्री मेरिया एण्टोइनेट—आस्ट्रिया की मेरिया थेरेसा की सुन्दर पुत्री,—के प्रभाव में था। स्त्री ने भी सरदारों का साथ दिया और टरगट को पद से अलग होना पड़ा। इतने ही समय में उसने कई कार्य कर लिये थे और यदि वह बना रहता तो बहुत सम्भव था कि स्थिति सुधर जाती।

फिर कुछ दिनों बाद दूसरा प्रसिद्ध अर्थमन्त्री नेकर हुआ। वह जेनोवा का एक प्रसिद्ध तथा अनुभवी बेंकर था। यूरोप में उसकी ख्याति तथा साख थी। उसने पहले व्यापार तथा उद्योग की वृद्धि के लिये कागज़ी रुपया जारी किया। वह करों को कम करना तथा प्रांतों में प्रतिनिधि-मण्डल स्थापित करना चाहता था जिससे प्रजा का असन्तोष कम हो जाय। उसने राज्य के आय-व्यय का हिसाब प्रकाशित भी किया। शांति के समय नेकर सफल हो जाता परन्तु वही समय अमेरिका के स्वातन्त्र्य-युद्ध का

था। फ्रांस ने इंगलैंड से पिछली हारों का बदला लेने का अच्छा अवसर समझ कर अमेरिका की बहुत सहायता की जिससे उनकी विजय हो गई और उन्हें स्वतन्त्रता मिल गई। परन्तु इस से फ्रांस को क्या लाभ हुआ ? उसने धन जन का भारी त्याग किया किन्तु परिणाम उलटा हुआ। फ्रांस का ऋण बहुत अधिक बढ़ गया तथा अमेरिका से जो लोग लौटे वे भी स्वतन्त्रता के विचार लेकर आये और अपने देश में भी उन्होंने अमेरिका के समान प्रजातन्त्र स्थापित करना चाहा। अब नेकर को भी सरदारों पर कर लगाने के अतिरिक्त और कोई उपाय न सूझा। परंतु यह सोचते ही उसे भी टरगट की भाँति अपने पद से अलग होना पड़ा, यद्यपि प्रजा ने इसके लिये बहुत खेद प्रकट किया। राजा ने अब प्रजा से और अधिक कर वसूल करना चाहा परन्तु प्रजा का कहना था कि कर बढ़ाने या घटाने का अधिकार स्टेट्स जनरल (फ्रान्स की प्रतिनिधि सभा) को है। स्टेट्स जनरल को १६१४ से रिचलू तथा लुई चौदहवें ने बन्द कर रखा था और निरंकुश राज्य आरम्भ कर दिया था। उस सभा को बुलाना राजा के अधिकारों में कमी करना था, परन्तु अन्य कोई उपाय न था। अतः उदास मन से राजा ने स्टेट्स जनरल को बुलाने की आज्ञा दे दी। अब तक तीनों दलों—पादरी, सरदार तथा तृतीय श्रेणी—के प्रतिनिधियों की संख्या बराबर होती थी परन्तु इस बार तृतीय श्रेणी अर्थात् जन साधारण के अधिक ज़ोर देने के कारण उनकी संख्या शेष दोनों दलों के बराबर कर दी गई। अर्थात् ६०० से अधिक प्रतिनिधि जनसाधारण के थे और इतने ही पादरी तथा सरदारों के सम्मिलित प्रतिनिधि थे। प्रजा की प्रार्थना पर नेकर भी फिर

अपने पद पर नियत किया गया। इसी भाँति एक सौ पचहत्तर वर्ष वाद स्टेट्स जनरल का पुनर्जन्म हुआ। प्रजा के प्रभाव तथा राजा के ऊपर उसकी विजय का यह पहला अवसर था।

क्रांति का आरम्भ

सन् १७८९ के आरम्भ में ही वर्सेलीस में नई स्टेट्स जनरल की वैठक हुई। अव तक फ्रांस में यह नियम था कि तीनों दलों के लोग किसी विषय पर अपनी सम्मति व्यक्तिगत रूप से न दे सकते थे; अर्थात् पहले उस विषय पर तीनों दलों में अलग २ वहस होती थी और उसमें वहुमत के अनुसार समस्त दल की सम्मति निश्चित कर ली जाती थी। फिर तीनों दलों की सम्मिलित वैठक होती थी और अलग २ तीनों दलों की सम्मति ली जाती थी। जिधर दो दल हो जाते उधर ही वहुमत होता था तथा उधर ही विजय होती थी। इस भाँति पादरी तथा सरदार मिलकर सदा तृतीय श्रेणी के लोगों को हरा देते थे। अतः इस स्टेट्स जनरल के आरम्भ में ही तृतीय श्रेणी के सभासदों ने यह सूचना दी कि तीनों दलों की वैठक इकट्ठी हो और मत व्यक्तिगत रूप से माना जाय न कि दलवन्दी के हिसाव से। केवल इसी भाँति वे शेष दोनों दलों को हरा सकते थे। क्योंकि उन्होंने अपने मेम्वरों की संख्या शेष दोनों दलों के मेम्वरों के वरावर कर ली थी। प्रजा की राय तथा एक प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ मिराव्रू की राय भी उन्हीं के पक्ष में थी। परन्तु पादरी तथा सरदार अपनी वैठक अलग ही रखना चाहते थे और उन्होंने तृतीय श्रेणी के मेम्वरों के साथ वैठने से इनकार कर दिया।

प्रजा की राय अपने पक्ष में होने से उत्साहित होकर तृतीय श्रेणी के लोगों ने सरदारों के न मानने पर एक बहुत साहस का काम कर दिखाया। उन्होंने अपनी अलग सभा बना ली और उसका नाम 'राष्ट्रीय सभा' रख लिया (१७ जून १७८९) और अपना नाम 'तृतीय श्रेणी' कहलाना नापसन्द किया और उस पते से आये हुये पत्र खोलने से भी इनकार कर दिया। साथ ही उन्होंने शेष दोनों को सूचना दे दी कि राष्ट्र के सच्चे प्रतिनिधि हम हैं। यदि तुम लोग भी शासनकार्य में सम्मिलित होना चाहते हो तो हमारा साथ दो अन्यथा हम स्वयं ही सारा कार्य करना आरम्भ कर देंगे। यह घटना स्वयं ही क्रान्तिकारी थी।

राजा ने घबराहट में उसकी बैठक बन्द कर दी। इस पर क्रुद्ध होकर वे लोग दौड़ कर पास के टेनिस क्लब में पहुँच गये और सब ने मिलकर शपथ खाई कि हम सब एक रहेंगे और जब तक नया शासन-विधान तैयार न करेंगे तब तक अलग न होंगे। उसके एक मेम्बर एबीसीस के प्रस्ताव पर मिराबू ने राजा को अन्तिम सूचना दी कि आप हमारे कार्यों को उचित और न्याय-युक्त मान लें अन्यथा हम अपना कार्य और आगे बढ़ावेंगे और हमें आपके विरुद्ध कार्य करना पड़ेगा। नीची श्रेणी के गरीब पुजारी स्वभावतः ही इस दल में सम्मिलित हो गये तथा ला फायट के कहने से कुछ सरदार भी इसमें आ मिले। इस भाँति यह राष्ट्रीय सभा पूरी हो गई।

राजा ने कुछ लोगों के बहकाने से इस साहसी सभा को दबाने का प्रयत्न किया। पेरिस के चारों ओर सशस्त्र सेना चक्कर लगाने लगी। इससे गिरफ़्तारी के डर से राष्ट्रीय सभा घबराने

लगी परन्तु मिराबू ने फिर राजा को सूचना दी कि वह सेना को हटा ले, जिसका कुछ दिनों तक राजा ने कुछ उत्तर न दिया।

इस समय राजधानी पेरिस में बड़ी अशान्ति थी। अतः नगर के मुखियाओं ने अपनी एक स्वतंत्र कमेटी बनाकर नगर की रक्षा का भार स्वयं अपने ऊपर ले लिया। धीरे२ इसने अपने प्रभाव से 'राष्ट्रीय सभा' को भी दबा दिया। नगर की रक्षा के लिये नवयुवकों की एक नई सेना भी तैयार कराई जिसका नाम 'राष्ट्रीय-रक्षक गारद' या दल रख लिया।

इस भांति जब पेरिस नगर क्रांति के लिये तैयार था तो राजा ने नेकर को, जो इस समय बहुत लोकप्रिय हो गया था, उसके शत्रुओं के बहकावे में आकर, अलग कर दिया। इससे प्रजा में बड़ा क्रोध फैल गया। अब तक झगड़ा सरकार तथा जनता के प्रतिनिधियों में ही था पर अब जनता स्वयं लड़ने के लिये तैयार हो गई। १४ जुलाई को क्रुद्ध जनता ने नगर के पुराने कारागार बेस्टाइल को तोड़ दिया जिसमें अनेक राजनीतिक क़ैदी सड़ रहे थे और उसकी चाबी का गुच्छा स्वतंत्र-भूमि अमेरिका को भेज दिया। इसमें अस्सी २ नब्बे २ बरस के ऐसे क़ैदी थे जिन्होंने कभी रोशनी के दर्शन भी नहीं किये थे। इसके पतन से निरंकुशता का साक्षात् स्वरूप नष्ट हो गया तथा पुरानी राज्य-प्रथा का अन्त हुआ। इस घटना से फ्रांस में तथा बाहर भी बड़ा उत्साह तथा हर्ष फैला। यह प्रत्यक्ष प्रमाण था कि असली शक्ति अब सरदारों से निकल कर साधारण जनता के हाथ में आई।

राजा ने घबड़ा कर नेकर को फिर उसी पद पर नियत किया तथा पेरिस-सभा और राष्ट्रीय रक्षक-दल को न्यायमुक्त मान लिया;

परन्तु बेस्टाइल के तोड़े जाने की खबर बिजली की भांति समस्त प्रान्तों तथा गाँवों में फैल गई थी। जगह २ किसानों के उपद्रव आरम्भ हो गये। सरदारों के किले लूट लिए गये और उनके सब कागज़ पत्र जलाये जाने लगे जिनसे उन्हें बेगार आदि का अधिकार था। बहुत से सरदार देश से बाहर भाग गये और जो रह गये उन्होंने किसानों से बेगार लेने के तथा और कई अधिकार छोड़ दिये और ४ अगस्त की उनकी एक सभा में इसी बात पर प्रतिद्वन्द्विता हुई कि कौन अधिक अधिकार छोड़ता है। इस भांति उनके सब अधिकार चले गये।

लुई सोलहवाँ प्रजा की भलाई चाहता था परन्तु वह चतुर तथा दूरदर्शी न था। वह शासन में भी कुछ सुधार करना चाहता था परन्तु वह इस इच्छा का लाभ न उठा सका। राष्ट्रीय सभा की सफलता देखकर उसने उत्साह से सभा का साथ नहीं दिया। बेस्टाइल के पतन के बाद भी यदि वह सुधारकों का नेता बन जाता तो उसकी स्थिति दृढ़ बनी रहती, परन्तु उसने ऐसा न किया और धमका कर सुधारकों को दबाना चाहा। फल यह हुआ कि सभा ने लुई को ही नहीं बल्कि राज्यप्रथा को ही प्रतिनिधी-सत्ता का शत्रु बताया।

उधर राष्ट्रीय-सभा राज्यव्यवस्था तैयार करने में लगी हुई थी। हमें उसकी ओर भी एक दृष्टि डाल देनी चाहिये। वहाँ पर कुछ लोग सभापति की दाहिनी ओर बैठे थे और कुछ बाईं ओर और कुछ सामने दाहिनी ओर के लोगों में प्रधान मिराबू और ऐबीमारी थे। यह दल प्रजातंत्र का पक्षपाती था तथा विशेषाधिकारों का कट्टर विरोधी था। जनता अधिकांश इसी

दल की समर्थक थी। वाईं ओरवाले आर्लीन्स वंश के पक्षपाती कहे जाते थे। इन्हीं के बीच में रोब्सपीयर नामी गम्भीर तथा विचारवान मनुष्य बैठता था जिसके बारे में मिराबू ने कह दिया था कि यह मनुष्य अवश्य कुछ करेगा। इन दोनों दलों के बीच में नर्मदल के लोग बैठते थे जिनमें कई बुद्धिमान तथा ईमानदार मनुष्य थे। ये इंगलैण्ड की शासन-प्रथा को आदर्श मानते थे अर्थात् इनका मत था कि व्यवस्थापक सभा दो भागों में विभक्त की जाय। त्रैवार्षिक चुनाव हुआ करे तथा मंत्रि-मण्डल प्रतिनिधियों के प्रति उत्तरदायी रहे। कुल मिलाकर इस सभा में १२०० से अधिक मनुष्य थे जिनसे किसी संगठन के बजाय बने बनाए काम के बिगड़ने की अधिक आशा थी।

इस राष्ट्रीय सभा ने कई क़ानून बनाये। एक के अनुसार सब मनुष्यों के अधिकार समान माने गये तथा मनुष्यों को व्यक्तिगत स्वतंत्रता दी गई अर्थात् बिना कारण के कोई भी अकस्मात् गिरफ़्तार नहीं किया जा सकता था क्योंकि उनके अनुसार सरकार का उद्देश प्रजा की समृद्धि, स्वतंत्रता आदि की रक्षा करना था। फिर इस सभा ने एक नई राज्य-व्यवस्था तैयार की। इसके अनुसार एक व्यवस्थापक सभा बनाई गई तथा उसके प्रतिनिधि चुनने का अधिकार उन सबको दिया गया जो कर स्वरूप अपनी तीन दिन की आय देते थे। राजा और मंत्रियों को उसके प्रति उत्तरदायी ठहराया गया। राजा किसी कानून को अब रद्द अथवा अस्वीकार नहीं कर सकता था। वह केवल कुछ काल के लिये रोक सकता था। सेना तथा शासन आदि के अफ़सरों की नियुक्ति तथा विदेशी नीति राजा के अधिकार

में ही रक्खी गई। अच्छे प्रबन्ध के लिये फ्रान्स ८३ विभागों में बाँटा गया जिनके अन्तर्गत ज़िले, केन्टन, कम्यून आदि और भी विभाग होते थे। कानून तथा न्याय में भी सुधार किये गये। पेरिस में एक अपील सुनने की अदालत स्थापित की गई। कानूनों को सरल किया गया तथा जज भी चुनाव द्वारा ६ वर्ष के लिये नियत होने लगे। आर्थिक दशा सुधारने के लिये गिरजों का माल ज़ब्त करके वेंच दिया गया। उनकी जायदाद राष्ट्र की सम्पत्ति मानी गई तथा महन्तों और पादरियों के लिये रियाअत से उचित तनख्वाहें बाँध दी गईं और वे भी चुनाव द्वारा नियत किये जाने लगे। परन्तु धर्म के विरोधी भी वहुत थे। उन्होंने इस प्रकार राज्य के धर्म में हस्तक्षेप करने के कारण हल्ला मचा दिया तथा कुछ पादरियों और सरदारों से मिलकर अपना अलग 'महामण्डल' वना लिया। दूसरे व्यवस्थापक सभा तथा कार्यकारिणी सभा (राजा तथा मंत्रि-मण्डल) में एक दूसरे के प्रति सन्देह, तथा लिखा पढ़ी में अति कठिनाई होने के कारण यह व्यवस्था अन्त में सफल न हुई।

विचारा राजा इन सब घटनाओं को अपने सामने होते देख रहा था पर उसका कुछ वस न था। वह केवल कभी २ एकान्त में कुछ आँसू वहा लिया करता था। रानी का भी यही हाल था।

ऊपर लिखा जा चुका है कि राष्ट्रीय सभा में मिराबू का प्रभाव अधिक था। वह यद्यपि सरदार था परन्तु जनसाधारण के अधिकारों का पक्षपाती था तथा उन्हीं की ओर से वह प्रतिनिधि भी चुना गया था। वह वुलन्द आवाज़वाला, धाराप्रवाही

वक्ता था तथा उसके व्याख्यानों का जनता पर बहुत प्रभाव पड़ता था। वह केवल सुधार चाहता था, प्रजातन्त्र नहीं। कुछ दिन बाद वही राष्ट्रीय सभा का सभापति भी हो गया। नगर में अशान्ति तथा असन्तोष को बढ़ते देख कर उसने कई बार राजा को भाग जाने की भी सलाह दी, परन्तु राजा ने उसपर ध्यान न दिया।

इधर एक दूसरी घटना की तैयारी हो रही थी। फ्रान्स में बेस्टाइल का पतन हो गया। स्वतन्त्रता स्थापित हुई। शक्ति प्रजा के हाथ में आई। सब कुछ हुआ किन्तु लोगों की अन्न की तकलीफ़ वैसी ही बनी रही। अनाज सस्ता न हुआ बल्कि अकाल पड़ने से और महँगा हो गया। अनेकों मनुष्य भूखे रहने लगे, बच्चों को प्रतिदिन प्रातःकाल रोटी के लिये रोते हुए माताएँ न देख सकीं। एक दिन वे सड़क पर जमा हो गईं और उन्होंने सोचा कि राजा और रानी को अपनी दशा सुनावें; परन्तु राजा पेरिस में अशान्ति देख कर सकुटुम्ब वर्सेलीस में रहने लगा था। अतः इस स्त्री-पल्टन ने वहाँ जाने के लिये कमर कस ली। पाँचवीं अक्तूबर का प्रातःकाल इस नवीन तमाशे के लिये निश्चित किया गया था। लोगों ने इन ८-१० हज़ार घाँघरी वालियों का तमाशा बड़ी आतुरता से देखा। उस भीड़ में 'वर्सेलीस को चलो' का शोर था। उनका कहना था कि हम राजा को पेरिस में लावेंगे और उससे उचित प्रबन्ध करने के लिये कहेंगे। यदि वह ऐसा नहीं कर सकता तो उसे अपना राजमुकुट उतार देना चाहिये। इस भाँति यह जुलूस वर्सेलीस पहुँचा। राजा ने खिड़की में से झाँक कर पूछा कि क्या बात है? नीचे से उत्तर मिला कि हम महाराज से कुछ बातचीत

करना चाहती हैं। कुछ औरतें अन्दर गईं और उनके प्रसन्नमुख लौटने से सबने समझ लिया कि वे सफल हुईं। वर्सेलीस से शीघ्र ही यह बरात पेरिस को चली। आगे २ स्त्रियाँ, बीच में राजा की गाड़ी तथा पीछे से कुछ पैदल तथा सवार थे। राजा पेरिस के पुराने ट्रिवलरीज़ नामक महल में रहने लगा।

अक्तूबर सन् १७८९ अर्थात् जब से औरतें राजा को पेरिस लाईं थीं, तब से वह एक प्रकार का बन्दी हो गया था। उसके हाथ से सब शक्ति छीन ली गई थी तथा उसके प्रति असन्तोष बढ़ता जाता था। इस भाँति लगभग दो वर्ष उसने काटे। वह अपने महल के पास के बाग़ में स्त्री, एक बहिन तथा एक दो बच्चों को साथ लेकर कभी २ मन बहलाया करता था। अब उसे मिराबू की सलाह का औचित्य ज्ञात होता जाता था, परन्तु सन् १७९१ में ही उसका एक मात्र प्रभावशाली पक्षपाती मिराबू भी मर गया। अब राजा ने फ्रान्स से भागने का निश्चय किया। २० जून १७९१ को उसने सकुटुम्ब गुप्त रीति से फ्रान्स से प्रस्थान कर दिया परन्तु जब बिलकुल सीमा पर पहुँच गया था तो कुछ लोगों ने उसे पहचान कर रोक लिया। यह समाचार झट चारों ओर फैल गया। अभागा लुई फिर पेरिस लाया गया। अब वह बिलकुल पराधीन तथा प्रजा का बन्दी था।

उसके इस कृत्य का परिणाम और भी बुरा हुआ। अब प्रजा में उसके प्रति बिलकुल भक्ति न रही। क्रान्ति को एक नया रूप मिला। सभा में एक नया दल खड़ा हो गया जिसके नेता रोब्सपीयर तथा डेण्टन थे। इन्होंने इस बात पर बहुत ज़ोर दिया कि भागने का प्रयत्न करने से लुई ने सिंहासन स्वयं ही छोड़

दिया है। अतः उस पर लुई का अब कोई अधिकार नहीं है। अब यहाँ पर प्रजातन्त्र स्थापित होना चाहिये परन्तु अब भी वैध-शासन चाहनेवालों की संख्या कम न थी। ये लोग बड़े परिश्रम-पूर्वक तैयार किये गये। ये वर्तमान संगठन को तोड़ना नहीं चाहते थे। उन्होंने राजा को फिर सिंहासन पर बिठा दिया। राजा को अपनी स्थिति दृढ़ करने का एक अवसर और मिला। उसने प्रचलित राज्य-व्यवस्था के अनुसार चलने की शपथ खाई। इतना करके राष्ट्रीय सभा भंग हो गई।

व्यवस्थापक सभा

१ अक्तूबर १७९१ को नई व्यवस्थापक सभा बैठी जिसमें ७४५ मेम्बर थे। इनमें सभी नये तथा अनुभवहीन थे। इनमें कुछ लोग प्रजातंत्र के पक्षपाती भी थे और वे क्लबों द्वारा देश में अपने मत का प्रचार कर रहे थे। इनमें जेकोबिन तथा कार्डेलियर दो क्लब विशेष प्रसिद्ध हो गये। जेकोबिन क्लब में पहले शिक्षित तथा उदार दल वाले लोगों का जोर था परन्तु शीघ्र ही ये प्रजातंत्र के कट्टर समर्थक हो गये जिनमें रोब्सपीयर प्रधान था। जगह २ इस क्लब की शाखाएँ खुल गईं जिसमें देशभर में इसका प्रभाव हो गया। दूसरे क्लब का नेता डेन्टन था। यह भी प्रजातंत्र का पक्षपाती था। इन क्लबों में सामयिक तथा राजनैतिक प्रश्नों पर खूब बहस होती थी।

इस भांति व्यवस्थापक सभा में शीघ्र ही कई दल हो गये। एक दल वैध-शासन का समर्थक था तथा दूसरा प्रजातंत्र का। प्रजातंत्र चाहने वालों के भी दो दल थे जैसा कि ऊपर कहा गया है।

डेण्टन का दल कुछ नर्म था तथा पशुबल का विरोधी था परन्तु जेकोबिन्स दल (जिसके मेम्बर ऊँची जगह पर बैठने के कारण बाद में 'माउन्टेन्स' अथवा पर्वत कहलाने लगे थे) गर्मदल था। वे प्रजातंत्र की रक्षा के लिये उचित, अनुचित, न्याय्य, अन्याय्य सब साधन स्वीकार करने को तैयार थे।

इस सभा ने पहले पादरियों का पुनर्संगठन किया और इसके अनुसार आचरण करना जिन पादरियों ने अस्वीकार किया, उनकी तनख्वाहें बन्द कर दीं।

बाहर भागे हुए सरदार अन्य देशों के राजाओं से क्रान्ति को दबाने के लिये सेना मांग रहे थे। अतः उनको फिर देश में बुलाया गया और एक तिथि भी नियत कर दी गई कि यदि कोई उसके अन्दर न आवेगा तो वह मृत्युदण्ड का भागी होगा। परंतु राजा ने इस आज्ञा को अस्वीकार कर दिया; जिसका, व्यवस्था के अनुसार उसे अधिकार नहीं था। यह देखकर प्रजा बहुत असंतुष्ट हुई और उसकी शपथ का भी विश्वास चला गया क्योंकि राजा व्यवस्था को पालन करने की शपथ खा चुका था।

फ्रांसीसी जनता ने जितने अधिकार प्राप्त कर लिये थे, वह उन्हें अपने देश में ही रखने से संतुष्ट नहीं थी। वह चाहती थी कि समस्त युरोप की प्रजा को भी वैसे ही अधिकार मिलें। यूरोप में इन सिद्धान्तों का प्रचार होते देख अन्य राजा बड़े चिन्तित हुए। आस्ट्रिया के राजा लीयोपोल्ड द्वितीय (जो जोसफ़ द्वितीय के मरने के बाद १७९० में गद्दी पर बैठा था और लुई सोलहवें की रानी मेरी एन्टाइनेट का भाई था) ने अपनी बहन के कई करुणापूर्ण पत्र पाकर उसकी रक्षा के लिये

तथा उद्दण्ड फ्रांसीसी जनता को दबाने के लिये वहाँ पर अपनी सेना भेज दी और फ्रांस के राजा की रक्षा करना उसने यूरोप के सब राजाओं का धर्म बताया। इस भाँति प्रशा भी आस्ट्रिया से मिल गया। इधर फ्रांस के जो अमीर बाहर चले गये थे, उनके प्रति फ्रांस में यह सन्देह हो रहा था कि वे अन्य राजाओं से सेना लेकर फ्रांस पर चढ़ाई करेंगे। यह भी संदेह हो रहा था कि राजा लुई भी उनसे मिला हुआ है। इसे जानने की इच्छा से फ्रांस की व्यवस्थापक सभा ने आस्ट्रिया के सम्राट् के पास एक पत्र लिखकर पूछा कि फ्रांस से भागे हुए सरदारों के साथ उसका कैसा सम्बन्ध है? इस पत्र के उत्तर में आस्ट्रियन सम्राट् ने फ्रांस की उद्दण्ड जनता की बहुत निन्दा की। इससे फ्रांस में बहुत लोग युद्ध के लिये तैयार हो गये, परंतु कुछ लोग युद्ध के विरुद्ध भी थे, जिनमें रोब्सपीयर, डेन्टन तथा मेरट प्रधान थे। इस भाँति वहाँ भी दो दल हो गये जिनमें द्वेष बढ़ता गया।

युद्ध हुआ, आरम्भ में फ्रांस की सेनाएँ हारने लगीं। इससे लोगों को राजा पर और क्रोध आया क्योंकि उन्होंने समझा कि राजा अपने छुटकारे के लिये आस्ट्रिया की जीत चाहता है। वक्ताओं ने उसे अत्याचारी, धोखेबाज खुले बाजार कहना आरम्भ कर दिया और उस पर आक्रमण करने की धमकी दी। यह दशा देख कर ब्रन्सविक के ड्यूक ने आज्ञा निकाली कि यदि राजा के शरीर अथवा कुटुम्ब को कोई क्षति पहुँची तो सब नगर उजाड़ दिया जायगा। फ्रान्सीसी लोग इस आज्ञा के कारण क्रोध से पागल हो गये और उन्होंने राजा के महल पर भी आक्रमण कर दिया। राजा के स्विस रक्षकों ने इस अवसर पर

अपूर्व साहस दिखाया। अपनी जान रहते उन्होंने राजा को हाथ न लगने दिया परन्तु उनकी संख्या बहुत थोड़ी थी। भीड़ अपार थी। एक २ करके वे सब वहीं पर सो गये परन्तु उनकी वीरता की स्मृति दिलाने के लिये स्वीज़रलैण्ड की राजधानी बर्न में एक सिंह की मूर्ति बनी हुई है। राजा का महल धूल में मिला दिया गया और उसे भाग कर व्यवस्थापक सभा के भवन में आश्रय लेना पड़ा। अब नयी राज्य-व्यवस्था फिर तैयार की गई। राजा को पदच्युत मान लिया गया। अब पेरिस में रोब्सपीयर, मेरट आदि का दल—जो जेकोबिन दल कहलाता था—प्रधान था और उन्होंने पेरिस की पुरानी सभा तोड़ कर अपना नया 'कम्यून' स्थापित किया। जिस समय इधर ये घटनाएँ हो रही थीं, उधर आस्ट्रिया की सेना पेरिस की ओर बढ़ती आती थी। स्थिति भया-वह देखकर तथा इस शंका से कि राजा के पक्षपाती लोग उस सेना को सहायता देंगे, रोब्सपीयर आदि ने क्रोध से पागल होकर सब राजपक्षपातियों के क़त्ल की आज्ञा दे दी। पाँच दिन तक वे लोग ढूँढ़ २ कर मारे गये। वे क़ैदी भी जिन पर राजभक्त होने का सन्देह था, गली में गोली से उड़ा दिये गये। इस भाँति लगभग एक हज़ार से अधिक स्त्री पुरुषों की हत्या की गई। यह १७९२ का 'सितम्बर का क़त्ल' है। अब आस्ट्रिया के विरुद्ध एक दृढ़ सेना भेजी गई जिसने वाल्मी स्थान पर शत्रुओं को हरा कर फ्रान्स का भय दूर कर दिया। इस विजय की खुशी में लोग उस दल के सब क्रूर कृत्यों को भूल गये। राजा के हट जाने से व्यवस्थापक सभा स्वयं टूट गई थी। अब 'नेशनल कन्वेन्शन' नाम की एक और सभा बनाई गई।

इस नई सभा में एक भी राज-पक्षपाती न था। फ्रांस में प्रजातन्त्र की घोषणा कर दी गई और २१ जून १७९२ से नया साल (सम्वत्) आरम्भ हो गया। सब दिनों तथा महीनों के नाम बदल दिये गये यथा जुलाई का नाम थर्मीडर (गर्मी) तथा अप्रैल का नाम जर्मिनल (वसन्त) आदि रक्खा गया।

अब इस कन्वेन्शन के सामने एक और प्रश्न उठा। राजा का क्या किया जाय? सब लोग राजा से अप्रसन्न थे। उसे गली बाज़ारों में गालियाँ दी जाती थीं। कितना परिवर्तन! जिसके पुरखाओं की निरंकुश शक्ति के सामने कोई चूँ तक न कर पाता था, उसी का अब यह हाल! कमेटी ने निश्चित किया कि राजा अत्याचारी, देश-द्रोही तथा धोखेबाज़ है। अतः उसे प्राण-दण्ड मिलना चाहिये। राजा इन न्यायी पञ्चों के सामने दण्ड सुनने के लिये बुलाया गया। अब वह एक साधारण अपराधी था, कोई उसके लिये उठ कर खड़ा न हुआ। उसने चुपचाप बेंच पर बैठ कर आज्ञा सुनी और प्रजा के निश्चय को स्वीकार किया। २१ जनवरी १७९३ को उसे फ़ांसी पर लटकना पड़ा!

इस घटना का बड़ा प्रभाव पड़ा। अपराधी के मरने पर भी लोगों के हृदय में उसके प्रति दया उत्पन्न होती है। अब फ्रांस में विचार होने लगा कि राजा को अपराध के हिसाब से बहुत कड़ा दण्ड दिया गया। लोगों की राय क्रान्ति के विरुद्ध हो चली। इंगलैंड आदि देशों ने पहले इस आन्दोलन का हर्ष से स्वागत किया था परन्तु अब इसकी क्रूरताएँ, राजा को मृत्युदंड तथा और देशों में उन सिद्धान्तों के प्रचार का प्रयत्न देखकर अब वे क्रांति की निन्दा करने लगे। इङ्गलैंड ने इन सिद्धान्तों का

प्रचार रोकने के लिये इतने कड़े नियम बनाये और फ्रांसीसी राजदूत को निकाल दिया और फिर यूरोप के अनेक देशों ने फ्रांस के विरुद्ध एक बड़ा गुट बनाया जिसमें आस्ट्रिया, प्रशा, इङ्गलैंड, हालैंड तथा स्पेन थे। इन्होंने १७९३ में फ्रांसीसी सेना को हरा दिया और उसे चारों ओर से घेर लिया। इस हार से फ्रांस की जनता बड़ी भयभीत हुई और शत्रुओं को डराने के लिये उन्होंने एक शक्तिमान् सभा 'जनता रक्षक सभा' के नाम से स्थापित की जो पूर्ण स्वतन्त्र तथा शक्तिमान् थी।

चारों ओर के भयप्रद समाचारों के कारण फ्रांस में फिर कड़े साधन स्वीकार करने का विचार किया गया। इस पर नर्मदल (जिरोण्डिस्ट दल) ने विरोध किया। गरम बहस हुई और माउण्टेन्स (जेकोबिन्स) ने नगरवासियों को जिरोण्डिस्टों के विरुद्ध उकसाया। इस पर एक झुण्ड ने कन्वेन्शन पर आक्रमण कर दिया और ३१ जिरोण्डिस्ट नेताओं को गिरफ्तार कर लिया। इस भाँति माउण्टेन्स अब बिलकुल स्वतंत्र हो गये और उन्होंने पूर्ण निरंकुश तथा क्रूर शासन किया जो 'आतंक का शासन' कहलाता है।

रोबसपीयर की अध्यक्षता में १२ मेम्बरों की एक नई शक्तिमान 'जनता रक्षक सभा' बनी, तथा उसने फौरन ही अशान्ति दूर करने के लिये कड़े प्रयत्न आरंभ कर दिये। कोई भी मनुष्य राज-पक्षपाती होने के सन्देह में गिरफ्तार किया जा सकता था और उसका शीघ्र निर्णय करने के लिये एक क्रान्तिकारी 'ट्रिब्युनल' की स्थापना हुई थी। दिन प्रतिदिन इस ट्रिब्युनल द्वारा प्राणदण्ड प्राप्त लोगों की संख्या बढ़ने लगी। अप्रैल से सितम्बर (१७९३)

तक ऐसी मृत्युओं की संख्या का औसत प्रति सप्ताह ३ था, परन्तु सितम्बर १७९३ से जून १७९४ तक यह औसत ३२ हो गया, तथा जुलाई में प्रति सप्ताह १९६ तक पहुँच गया। ऐसा कोई दिन न जाता था जिस दिन ८-१० अभागे मनुष्य गिलोटिन (एक प्रकार का मृत्युदण्ड देने का यन्त्र जिससे सिर धड़ से अलग हो जाता था) पर न लटकाये जायँ। इस भांति दो हज़ार से ऊपर सिर उड़ाये गये जिनमें प्रसिद्ध आरलीन्स के ड्यूक, जिरोण्डिस्ट दल की नेत्री मेडम रोलैण्ड तथा लुई सोलहवें की स्त्री मेरी एण्टाइनेट भी थी। अब तक एण्टाइनेट अपने पुत्र समेत एक वन्दीगृह में रख दी गई थी परन्तु हत्यारे शासकों को इतने से सन्तोष न हुआ। उन्हें भय था कि कहीं लोग रानी तथा राजपुत्र का पक्ष लेकर हमें अलग न कर दें। अतः उन्हें भी प्राण-दण्ड की आज्ञा दी गई। आज्ञा रानी के पास ले जाने वाले मनुष्य का कहना है कि उस समय रानी अपने बच्चे को गोद में लिये उसकी ओर बड़े ध्यान से देख रही थी और कभी २ रो देती थी। लुई की बहन भी प्रायः उसी के पास रहती थी।

अपनी मृत्युदण्ड की आज्ञा सुनकर उसने अपनी ननँद को निम्नलिखित पत्र लिखा—"बहन! आज तुमसे अन्तिम बार मैं कुछ कह रही हूँ। तुम्हारे निरपराध भाई की तरह उन्हीं का साथ देने के लिये मुझे भी प्राणदण्ड मिला है...... मैं केवल अपने बच्चों के लिये रोती हूँ। मेरे पुत्र को यही उपदेश देना कि हमारी मृत्यु का बदला लेने का प्रयत्न न करे। मेरे मित्रों से कहना कि मैंने मरते समय उन्हें स्मरण किया था। हा दैव! बच्चों, सम्बन्धियों तथा मित्रों को सदा के लिये छोड़ना कितना हृदय विदा-

रक है। बहन ! तुम्हें जो अनजान में कष्ट दिये हों उनके लिये क्षमा करना। अंतिम प्रणाम !"

इस भाँति रानी भी फाँसी पर लटकाई गई। ऐसे अत्याचारों से तंग आकर एक सुन्दर नार्मन युवती ने मेरेट का भी काम तमाम कर दिया। उसे इसके लिये प्राणदण्ड दिया गया परंतु वह तनिक भी न डरी। सिर अलग हो जाने पर भी उसके मुख पर प्रसन्नता झलकती थी।

इसी समय कारनोट ने अपनी सेना सुदृढ़ करके शत्रुओं को कई जगह हरा कर भगाया और इंगलैण्ड और अस्ट्रिया को छोड़ कर शेष सब देशों ने संधि कर ली।

जब ट्रिब्युनल इस भाँति प्रजातंत्र के शत्रुओं का दमन कर रहा था, तब कन्वेशन देश की आंतरिक दशा बदल रहा था। वे लोग राजा के समय की प्रत्येक बात से घृणा करने लगे थे। अतः प्रत्येक बात में परिवर्तन किया गया। नये वर्ष तथा महीने नियत किये गये। नाप के लिये मीटर बनाया गया जो अब तक अनेक देशों में प्रचलित है। तौलने के बाँट भी इसी भाँति बदले गये। प्रत्येक मास में ३० दिन माने गये तथा साल के अंत में पाँच दिन उत्सव के दिन बनाये गये। प्रत्येक मास के दस दस दिन के तीन विभाग किये गये। इतने से संतुष्ट न होकर कुछ महत्वाकांक्षियों ने स्वर्ग के राजा को भी गद्दी से उतारने का प्रयत्न किया। गिरजे बन्द करके उनका सामान नीलाम कर दिया गया। पुजारी निकाल दिये गये तथा ईसा और उनकी माता मेरी के स्थान पर देशभक्तों की पूजा की घोषणा की गई।

अब बाहरी शत्रुओं का भय दूर हो चुका था। अतः लोग

'आतंक राज्य' के विरुद्ध होते जाते थे। ह्यूबर्ट के नेतृत्व में एक और धार्मिक दल खड़ा हुआ जिसने 'ज्ञान' (रीज़न) की पूजा चलाई; परन्तु रोब्सपीयर ने उन्हें फाँसी दिला दी। डेन्टन भी अब शासन की कठोरता कम करना चाहता था। अतः वह भी फाँसी पर लटकाया गया। जल्लाद से उसने केवल इतना ही कहा कि—"मेरा सिर लोगों को दिखा देना क्योंकि वह उन्हें दिखाने योग्य है।" डेन्टन बड़ा बुद्धिमान तथा वीर नेता था। १७९२ में उसी ने फ्रांस को प्रशा के ड्यूक के हाथों में जाने से बचाया था।

अब रोब्सपीयर बिलकुल स्वतंत्र था। उसने ४५ दिन में डेढ़ हज़ार के लगभग प्राण और लिये। अन्त में जनता को उसके अत्याचार असह्य हो गए। अतः कन्वेन्शन ने १० वीं थर्मीडर (२७ जुलाई) को उसे तथा उसके पक्षपातियों को गिरफ्तार कर लिया और दूसरे ही दिन वह परमधाम पहुँचा दिया गया। परन्तु जिस उद्देश से यह आतंक राज्य स्थापित किया गया था वह बहुत कुछ पूर्ण हो गया अर्थात् फ्रांस में क्रान्ति का विरोध बन्द हो गया और बाहरी शत्रु भी दब गये।

रोब्सपीयर एक वकील था। वह भय से लोगों को दबाकर प्रजातंत्र स्थिर रखना चाहता था। उसकी मृत्यु के बाद नेशनल कन्वेन्शन ने पेरिस कम्यून, ट्रिब्युनल, जेकोबिन क्लब आदि बन्द करके आतंक राज्य का अन्त किया। प्रेस को स्वतंत्रता दी गई तथा राज्यव्यवस्था बनाने का काम फिर हाथ में लिया। अब कार्यकारिणी शक्ति पाँच मेम्बरों की एक डाइरेक्टरी को दी गई

तथा धारा सभा के दो भाग किये गये। पाँच सौ की एक सभा तथा वृद्धों की दूसरी सभा। यह तृतीय वर्ष (क्रान्तिकारी कलेण्डर के हिसाव से) की राज्यव्यवस्था कहलाती है।

एक यह भी नियम वना कि व्यवस्थापक सभा के दो तिहाई सदस्य कन्वेन्शन के सदस्यों में से चुने जाया करें। इस स्वार्थपरता से अप्रसन्न होकर कुछ लोगों ने कन्वेन्शन पर आक्रमण किया परन्तु कोर्सिका से आये हुए एक युवक अफ़सर ने उन्हें हराकर भगा दिया। यह सैनिक अफसर नेपोलियन वोनापार्ट था। यहीं से उसका आश्चर्योत्पादक जीवन आरम्भ होता है। अक्तूबर १७९५ में कन्वेन्शन स्वयं भंग हो गया और नई राज्यव्यवस्था के अनुसार कार्यारम्भ हुआ।

फ्रांस के शत्रुओं में से अब तक इंगलैण्ड और आस्ट्रिया दृढ़ थे। अतः फ्रांस ने इनसे भी निवटना चाहा। पहले आस्ट्रिया की ओर दो सेनाएँ भेजी गईं—एक इटली होकर जिसका आधिपत्य नेपोलियन को दिया गया तथा दूसरी जर्मनी होकर। नेपोलियन ने लड़ने के पहले अपनी सेना के सामने एक मार्के की वक्तृता दी और फिर शीघ्रता से ट्यूरिन पहुँच कर अपनी से दूनी आस्ट्रियन तथा सार्डिनियन सेना को हराकर सेवाय और नाइस पर अधिकार कर लिया और आस्ट्रियन सेना को नेपोलियन ने कई वार हराया। एक स्थान पर उसके विरुद्ध पाँच सेनाएँ भेजी गईं परंतु उसने सब को हरा दिया। इससे भयभीत होकर सम्राट् फ्रांसिस द्वितीय ने सन् १७९७ में केम्पो फ़ोर्मियो स्थान पर संधि कर ली जिसके अनुसार वेलजियम तथा राइन नदी का कुछ देश फ्रांस को मिला और लिगुरियन (जिनोवा) तथा

सिजल्याइन (लम्बार्डी) दो प्रजातंत्र राज्य फ्रांस के संरक्षण में स्थापित किये गये। इस विजय ने नेपोलियन की कीर्ति को बहुत बढ़ा दिया। पेरिस आने पर बड़ी धूमधाम से उसका स्वागत किया गया और वह प्रमुख हो गया।

नेपोलियन सन् १७६९ में कोर्सिका द्वीप में उत्पन्न हुआ था। इसके एक साल पहले ही यह द्वीप जिनेवा से फ्रांस सरकार ने खरीद लिया था। इस भाँति नेपोलियन जन्म से ही फ्रांस की प्रजा था। उसका पिता साधारण आदमी था, परंतु माता बड़ी बुद्धिमती थी तथा उसी के गुणों को पुत्र ने भी पाया। वह अपनी माता का सदा बड़ा आदर करता था तथा महत्वपूर्ण विषयों पर उससे सलाह लेता था। दस वर्ष की आयु से ही उसने फ्रांस में सैनिक शिक्षा पाई। उसे इतिहास तथा गणित में विशेष रुचि थी और उसने अनेक पुराने योद्धाओं के जीवन-चरित्र पढ़े थे। १७ वर्ष की आयु से ही उसने अपनी सैनिक चतुरता का कई बार परिचय दिया। उसका विवाह सुन्दरी जोसेफाइन से हुआ था।

आस्ट्रिया से निबटकर फ्रांस ने इङ्गलैंड की ओर दृष्टि फेरी। डाइरेक्टर लोग, इस भय से कि नेपोलियन कहीं जनता का सहारा पाकर हमें हटा कर स्वयं शासक न बन जाय, उसे फ्रांस से बाहर ही रखना चाहते थे। अतः इङ्गलैण्ड जाने के लिये भी उसी से कहा गया। इङ्गलैण्ड का समुद्री बेड़ा सदा से बलवान् रहा है। अतः नेपोलियन ने इङ्गलैण्ड पर सीधा आक्रमण करना हानिकर समझ पूर्व में इङ्गलैण्ड का व्यापार नष्ट करने के विचार से मिस्र की ओर प्रस्थान किया। वहाँ के निवासियों ने वीरता से लड़ाई की। परंतु वे हरा दिये गये और नेपोलियन ने कैरो ले लिया। फिर भी

अंग्रेज़ जनरल नेल्सन ने उसका पीछा किया और नेपोलियन की अनुपस्थिति में उसकी सेना को नाइल नदी की लड़ाई में हरा दिया। इस भाँति पूर्व में फ्रेंच साम्राज्य स्थापित करने की नेपोलियन की अभिलाषा पूरी न हुई। इसी समय भारत के टीपू सुलतान से भी उसकी कुछ बातचीत हुई थी।

अव फ्रांस के विरुद्ध दूसरे गुट की स्थापना हुई जिसमें इंगलैंड, रूस, पुर्तगाल, आस्ट्रिया और तुर्की थे। इन्होंने फ्रांसीसी सेना को इटली से हरा कर भगा दिया और इस भाँति नेपोलियन की विजय निष्फल हो गई।

फ्रांस के विरुद्ध नये गुट की स्थापना और देश में अशांति का समाचार नेपोलियन के पास पहुँचा और वह अंग्रेज सेनाओं को धोखा देकर जो उसका मार्ग रोक रही थीं, फ्रान्स में आ उपस्थित हुआ।

कन्सोलेट

मिश्र में फ्रांसीसी सेना की हार के कारण लोग डाइरेक्टरी को दोष देने लगे। इसी समय २ दिसम्बर १७९७ को नेपोलियन फ्रान्स में पहुँचा। डाइरेक्टरों में आपस में भी मतभेद तथा द्वेष रहता था। अतः नेपोलियन ने एक डाइरेक्टर ऐवीसीस की सहायता से वलपूर्वक व्यवस्थापक सभा तथा डाइरेक्टरी को भंग कर दिया। यह १८ वीं ब्रूमेयर (९ नवम्बर १७९९) का 'कूप डी एटाट' (वलप्रयोग) कहलाता है। अव तीन मेम्बरों—नेपोलियन, ऐवीसीस तथा ड्यूकस—की एक शासक सभा वनी जिसका नाम 'कन्सोलेट' रखा गया। इस छोटी क्रान्ति ने फ्रांस की राज्यक्रान्ति का अन्त किया। फ्रांस की वागडोर

अब नेपोलियन के हाथ में आई। वह वास्तव में फ्रांस का राजा हो गया क्योंकि शेष कोन्सलों (कोन्सोलेट के मेम्बरों) का सेना तथा देश पर बहुत कम प्रभाव था।

नेपोलियन 'प्रथम कौन्सल' अथवा प्रधान नियत किया गया जिसे युद्ध तथा संधि करने तथा मंत्री और बड़े अफ़सरों को नियत करने का अधिकार था। शेष दो मेम्बरों का काम केवल उसे सलाह देना था जिसका मानना न मानना उसके हाथ में था। अब प्रश्न यह था कि कार्यकारिणी का व्यवस्थापक सभा के साथ क्या संबंध होना चाहिये ? अब तक तीन व्यवस्थाएँ बन चुकीं थीं। सन् १७९१ में राजा से कार्यकारिणी शक्ति छीन ली गई थी, तथा १७९३ में शासन प्रबंध-व्यवस्थापक सभा के अधीन कर दिया गया था तथा १७९५ में दोनों को समान तथा भिन्न रखा गया था परंतु ये सफल न हुए।

अतः १७९९ की इस नई राज्यव्यवस्था द्वारा व्यवस्थापक सभा कार्यकारिणी के अधीन कर दी गई।

अब नेपोलियन ने मोरियो तथा जार्डन के नेतृत्व में जर्मनी और आस्ट्रिया की ओर सेना भेजी और स्वयं भी एक सेना के साथ इटली होकर वहाँ पहुँचा और मारिंगो स्थान पर आस्ट्रिया की एक बड़ी सेना को परास्त किया। थोड़े ही दिन बाद मोरियो ने भी होहेनलिंडन स्थान पर विजय पाई और १८०१ में आस्ट्रिया के सम्राट् को लुनविली की संधि करनी पड़ी जिसकी शर्तें कैंपो-फोर्मियो की संधि के अनुसार ही थीं। विनिशिया का कुछ भाग, मोडेना आदि मिला कर सिजल्पाइन प्रजातंत्र और बढ़ाया गया।

इस समय इंग्लैण्ड की दशा भी नाज़ुक थी जैसी कि चार वर्ष पहिले थी। उस समय तो मंत्री पिट ने विद्रोह के लिये तैयार मल्लाहों को रुपये आदि देकर शान्त करके इंग्लैण्ड की रक्षा की थी और स्पेन की एक सेना को सेन्ट विन्सेन्ट स्थान पर हरा भी दिया था। परंतु अब सभी युरोप उसके विरुद्ध था, क्योंकि अंग्रेज़ सभी देशों के जहाज़ों की तलाशी लेने का अपना अधिकार बताते थे, जिसका उद्देश यह था कि फ्रांस का विदेशी व्यापार बंद हो जाय। उत्तरी देशों ने इंग्लैण्ड के विरुद्ध एक गुट बना लिया था तथा आयर्लैण्ड में भी अशांति थी और वहाँ वाले फ्रांसीसियों से सहायता माँग रहे थे। परंतु मंत्री एवर्डीन ने चतुरतापूर्वक इंग्लैण्ड की इस समय भी रक्षा कर ली। नेलसन ने कोपनहेगन में डेनमार्क की सेना को हरा दिया और कुछ ही दिन बाद उत्तरी देशों का गुट टूट गया।

अब नेपोलियन समस्त युरोप में प्रधान था, परंतु समुद्रों पर अब भी अंग्रेजों का ज़ोर था किंतु दोनों देश युद्धों के कारण थक गये थे। नेपोलियन को आन्तरिक सुधारों के लिये समय की आवश्यकता थी तथा इंग्लैण्ड ऋण से लदा होने के कारण शांति चाहता था। फ्रांसीसी सेना मिश्र में हार कर वापस आ गई थी। इस भाँति फ्रांस और इंग्लैण्ड में अमीन्स की संधि हुई (१८०२) जिसके अनुसार ब्रिटेन ने सीलोन तथा ट्रिनीडाड को छोड़ कर शेष जीते हुए भाग फ्रांस को लौटा दिये। बेल्जियम तथा राइन का सरहद्दी प्रदेश फ्रांस के पास रहा। मिश्र तुर्की को लौटा दिया गया और भूमध्यसागर में माल्टा द्वीप भी अंग्रेज़ों ने उन सरदारों को लौटाने का वचन दिया जिनसे वह छीन लिया

गया था। इस संधि से इंग्लैण्ड की जल-सेना का महत्त्व सब देशों को मालूम हो गया।

आंतरिक सुधार—युद्धों से निबटकर नेपोलियन ने देश की आंतरिक दशा पर ध्यान दिया। वह संसार के महान् सामाजिक सुधारकों में गिना जाता है।

उसने पहले राज्य के सब अधिकारियों को अपनी हुकूमत में करके शासन को केन्द्रित किया। वह स्वयं ही सब अधिकारियों को नियत भी करता था। सर्वसाधारण की सहानुभूति प्राप्त करने के लिये उसने भिन्न २ दलों तथा श्रेणियों के भेदों और विशेषाधिकारों को दूर कर दिया। प्रवासियों को बुला कर उनके अपराध क्षमा कर दिये और उनके साथ प्रीति का वर्ताव किया। पुराने सब क़ैदी छोड़ दिये गये तथा भूतकाल को भूल जाने का पूर्ण प्रयत्न किया गया। इस समय की धार्मिक व्यवस्था से पादरी लोग अप्रसन्न थे। अतः नेपोलियन ने पोप से सन्धि करके कैथोलिक धर्म को फ्रांस का राजधर्म नियत किया। पादरियों तथा विशपों को स्वयं वही नियत करता था तथा प्रचलित राज्य-व्यवस्था के प्रति भक्त रहने की शपथ लेने पर उन्हें तनख्वाह भी राज्य से ही मिलती थी। इसके अतिरिक्त शेष सब धर्मों को भी पूरी स्वतंत्रता दी गई।

इन सुधारों से फ्रांस में शान्ति हो गई और नेपोलियन सर्वप्रिय हो गया। उसने पुल, नहरें और सड़कें बनवाकर, बन्दरगाह सुधरवाए तथा व्यापार और कृषि की वृद्धि की। अनेक नई इमारतें, नये स्कूल, अजायबघर आदि बनाये गए, पुस्तकालय स्थापित किये गए तथा फ्रांस में एक विश्वविद्यालय भी स्थापित किया गया। इस भांति शिक्षा की उन्नति का भी उसने पूरा प्रबन्ध किया।

न्यायालयों में भी उसने अनेक सुधार किये परन्तु इन सब में अधिक प्रभावशाली तथा महत्त्वपूर्ण कार्य यह था कि उसने एक पूर्ण दण्डविधान (कोड) तैयार कराया जिसके कारण वह संसार के महान नियमनिर्माताओं में गिना जाता है। क्रान्ति के पहले फ्रांस में प्रान्त २ के कानून भिन्न थे। अतः न्याय में प्रायः बड़ी कठिनाइयाँ पड़ती थीं। नेपोलियन ने इन कठिनाइयों को समझ कर देश के प्रसिद्ध २ क़ानून जाननेवालों की अपनी अध्यक्षता में एक कमेटी बनाई। इस कमेटी ने प्रजा को कष्ट देने वाले, न्याय में बाधा डालने वाले, सब पुराने क़ानून, रस्मरिवाज तथा सरदारों आदि के विशेषाधिकारों को मिटा दिया और एक सर्वांगपूर्ण, स्पष्ट तथा विस्तृत विधान बनाकर न्याय को सरल तथा सस्ता बना दिया। इसके कारण उसकी प्रसिद्धी बहुत बढ़ गई। आज तक अनेक देश दण्डविधान तैयार करने में इस विधान से सहायता लेते रहे हैं। यह विधान 'नेपोलियन-विधान' (कोड नेपोलियनिक) कहलाता है।

इन सुधारों ने फ्रांस की दशा को एक दम बदल दिया परन्तु साथ ही राजनैतिक अधिकार जनता के हाथ से छूटकर नेपोलियन के हाथ में आ गये। सुधारों से प्रसन्न होकर जनता ने इस बात पर ध्यान न दिया कि हमारे राजनैतिक अधिकार छिन गये और थोड़े ही दिनों में नेपोलियन बहुमत द्वारा (२ हज़ार उसके विरुद्ध परन्तु ३॥ हज़ार उसके पक्ष में थे) जन्म भर के लिये कौंसिल नियत कर दिया गया जिससे वह अपने सुधारों को स्वतंत्रतापूर्वक कार्यान्वित करा सके।

सम्राट् नेपोलियन

नेपोलियन ने एक वार कहा था 'मैंने फ्रांस के राजमुकुट को पृथ्वी पर पड़ा पाया, और उसे मैंने अपनी तलवार से उठा लिया।"

इटली की विजय के समय से वह फ्रांस में बड़े आदर की दृष्टि से देखा जाने लगा तथा दिन प्रति दिन वह सर्वप्रिय होता गया जिससे उसकी शक्ति भी बढ़ती गई। प्रजा ने उसकी इच्छा पर उसे आजीवन कौंसल नियत कर दिया और इस भांति वह पूर्णतया फ्रांस का राजा बन गया। इसी समय उसकी हत्या के लिये एक षड्यंत्र का पता लगा। षड्यन्त्रकारियों को कठोर दण्ड दिया गया और नेपोलियन और भी अधिक लोकप्रिय हो गया। बोर्वन वंश के राजाओं के पक्षपातियों को डराने के लिये सीनेट ने उसे 'सम्राट्' की पदवी देकर सिंहासन पर बिठाया और राज-तिलक करने के लिये मध्यकाल की प्रथा के अनुसार रोम से पोप बुलाया गया। परंतु नेपोलियन ने पोप को अपने सिर पर मुकुट नहीं रखने दिया बल्कि उसने पोप के हाथों से मुकुट लेकर स्वयं ही अपने सर पर रख लिया।

अब नेपोलियन की महत्वाकांक्षाएँ और भी बढ़ीं। वह विश्व-सम्राज्य स्थापित करने का विचार करने लगा। केवल इंग्लैण्ड उसके मार्ग में बाधक था। अब नेपोलियन ने बोलोन स्थान पर एक भारी जल-सेना तैयार की। इससे इंग्लैण्ड में बड़ी घबरा-हट उत्पन्न हुई। इङ्गलैण्ड से पूरी तैयारी न युद्ध होने के पहले ही वीर अंग्रेज जनरल नेल्सन ने १८०५ में ट्राफलगार के प्रसिद्ध युद्ध में उसकी सेना को हरा दिया, यद्यपि उसमें नेल्सन स्वयं मारा गया।

इस विजय का बड़ा प्रभाव पड़ा। इंग्लैंड की जलसेना को हराने की नेपोलियन की आशा पर पानी फिर गया और उसे सदा के लिये यह विचार त्याग देना पड़ा। इंगलैण्ड ने अपने बन्दरगाहों की रक्षा के लिये एक नयी सेना भर्ती कर रखी थी जिसका व्यय बहुत अधिक था। अतः अब इङ्गलैण्ड ने इस सेना को तोड़ दिया। इसी हार ने नेपोलियन को इङ्गलैण्ड को नष्ट करने के लिये उसका व्यापार नष्ट करने की युक्ति सुझाई, जिसे वह आगे काम में लाया।

इसी समय इङ्गलैण्ड और आस्ट्रिया का फ्रांस के विरुद्ध तीसरा गुट बना। नेपोलियन इस समाचार को सुनकर आस्ट्रिया पहुँचा और अल्म तथा आस्टरलिज़ के प्रसिद्ध युद्धों में आस्ट्रिया तथा रूस की सेनाओं को बिलकुल हरा दिया और आस्ट्रिया को सन्धि की प्रार्थना करनी पड़ी। प्रेसबर्ग की सन्धि के अनुसार वेनिस आस्ट्रिया से लेकर इटली में मिलाया गया और आस्ट्रिया के पश्चिम में वटिमबर्ग तथा बवेरिया दो नई रियासतें बनीं। फिर उसने सिज़ाल्पाइन प्रजातन्त्र को तोड़ कर इटली राज्य स्थापित किया और स्वयं उसका राजा बन गया और हालैण्ड के प्रजातंत्र को तोड़ कर वहाँ पर अपने भाई लुई को राजा बनाया और एक और भाई जोसफ़ को नेपिल्स का राजा बनाया। इन नए राज्यों की स्थापना का उद्देश यह था कि वह जर्मन साम्राज्य के भीतर आस्ट्रिया तथा प्रशा की शक्ति को घटाना चाहता था। इसीलिये उसने छोटी २ रियासतों को बलवान बनाया जिससे वे आवश्यकता के समय आस्ट्रिया तथा प्रशा का सामना कर सकें। वटिमबर्ग और बवेरिया की जागीरें इसी कारण से रियासतें

बनायी गयी थीं। फिर उसने जर्मनी की छोटी २ रियासतों—सेक्सनी, वारसा, बवेरिया, वटिमबर्ग, वेडनबर्ग, वेस्टफालिया आदि को मिलाकर अपनी अध्यक्षता में 'राइन फेडरेशन' (राइन का संघ) स्थापित किया। उसके साथ ही 'पवित्र रोमन साम्राज्य' का नाम भी मिटा दिया गया।

आस्ट्रिया से निबटकर उसने प्रशा की ओर ध्यान दिया। नेपोलियन के जर्मनी में हस्तक्षेप करने तथा 'राइन कन्फेडरेशन' की स्थापना होने से प्रशा नेपोलियन से बहुत अप्रसन्न था। अतः वहाँ के राजा फ्रेडरिक विलियम तृतीय ने रूस से मेल कर लिया और दोनों ने मिल कर १८०६ में नेपोलियन से युद्ध किया। फ्रेडरिक महान् के समय से प्रशा की सेनाएँ अजेय समझी जाती थीं। अतः उन्हें अपनी विजय का पूर्ण भरोसा था और इसी भरोसे पर उन्होंने अपनी पुरानी चाल ढाल को बिलकुल न बदला था। उधर नेपोलियन की सेनाएँ नये ढङ्ग पर शिक्षा पाये हुए थीं। अतः उसने बड़ी शीघ्रतापूर्वक प्रशियन सेनाओं को घेर लिया और जेना और आस्टरडाट स्थानों पर दो बार उन्हें बुरी तरह से हराया। रूसी सेनापति ने बड़ी वीरता दिखाई परन्तु फिर भी प्रशा की हार हो गई और उसकी सैनिक शक्ति नष्ट हो गई। नेपोलियन विजयी होकर बर्लिन पहुँचा और एक बार फिर दोनों आस्ट्रिया और रूस की सम्मिलित सेना को फ्रीडलैंड स्थान पर हराया (१८०७ ई०)।

अब जार ने टिलसिट की सन्धि कर ली। प्रशा ने पोलैंड की लूट के समय उसका जो भाग अपने राज्य में मिला लिया था, वह उससे छीन लिया गया और उसके दो विभाग किये गये—

वेस्टफालिया तथा वारसा। वेस्टफालिया में नेपोलियन ने अपने चौथे भाई जेरोमी को राजा बनाया और वारसा सेक्सनी के एलेक्टर को दिया गया। एक गुप्त सन्धि और भी नेपोलियन तथा ज़ार के बीच में हुई जिसका उद्देश यूरोप को आपस में बाँट लेना था। फ्रांस पश्चिमी यूरोप में प्रधान रहे तथा रूस पूर्वी यूरोप में अपना आधिपत्य जमावे।

नेपोलियन का विचार पहले यह था कि पोलैण्ड की लूट के समय उसका जो भाग भिन्न २ देशों ने ले लिया है, उसे वापस लेकर फिर पोलैण्ड राज्य की स्थापना की जाय। इसी कारण वीर पोल लोगों ने नेपोलियन का साथ दिया और अनेक युद्धों में उसके लिये जी-जान से लड़े, परन्तु इस वीरता की पुरस्कार-प्राप्ति में उन्हें बड़ी निराशा हुई। नेपोलियन यदि पोलैण्ड की फिर स्थापना करता तो उसे प्रशा, आस्ट्रिया और रूस तीनों से कुछ भाग माँगना पड़ता अथवा लड़कर लेना पड़ता परन्तु वह रूस तथा आस्ट्रिया की अप्रसन्नता से डरता था। अतः उनसे पोलैण्ड का भाग न मांग सका। यदि वह इस महान् राजनीतिक लूट को मिटा देने में समर्थ हो जाता और वीर पोलों को उनका छिना हुआ देश फिर वापिस दिलाता तो निःसन्देह पोल लोग उसे देवता की भाँति पूजते, परन्तु वह ऐसा न कर सका।

१८०७ में नेपोलियन उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच गया था। वह फ्रांस का सम्राट् तथा इटली का राजा था। जर्मनी में उसका पूरा प्रभाव था तथा स्वीज़रलैण्ड में भी वही प्रधान था। हालैण्ड, नेपिल्स और वेस्टफालिया में उसके तीन भाई राज्य कर रहे थे। आस्ट्रिया और प्रशा को उसने हराकर

दबा दिया था और रूस हारकर उसका मित्र बन गया। इस भाँति केवल इंगलैण्ड को छोड़कर वह समस्त यूरोप में प्रधान था। एक इतिहासज्ञ का कथन है कि यदि इस समय नेपोलियन मर जाता तो वह संसार के महान से भी महान पुरुषों—बल्कि देवताओं—में गिना जाता। उसकी वीरता तथा उसके विस्तृत साम्राज्य पर सब को महान् आश्चर्य होता परन्तु उसे अभी और कुछ दिन रहकर स्थान २ पर अपनी हार देखनी थी, अनेक कष्ट उठाने थे तथा अन्त में बन्दी रह कर प्राण गँवाने थे।

अस्ताचल की ओर

कान्टीनेन्टल सिस्टम—अब तक इंगलैण्ड ही नेपोलियन के पंजे से बचा था। जलसेना द्वारा उसे हराने में असमर्थ होकर नेपोलियन ने इंगलैण्ड का व्यापार बन्द कर देना चाहा। उसने सोचा कि इंगलैण्ड व्यापार-प्रधान देश है और व्यापार के ऊपर ही उसका जीवन है। अतः व्यापार बन्द हो जाने से वह शीघ्र ही भूखों मरने लगेगा और सन्धि की प्रार्थना करने लगेगा। उसका विचार बहुत ठीक था परन्तु वह सफलतापूर्वक अपनी नीति को कार्यान्वित न कर सका।

१८०६ में उसने बर्लिन से तथा दूसरे वर्ष मिलन से आज्ञाएँ निकालीं कि यूरोप का कोई भी देश इंगलैण्ड के साथ व्यापार न करे। समुद्र पर इंगलैण्ड का प्रभुत्व था। अतः उसने भी आज्ञा निकाली कि फ्रांस तथा उसके मित्रों से यूरोप का कोई देश व्यापार न करे, और वह अटलान्टिक महासागर तथा अन्य सागरों में आने जाने वाले जहाजों की तलाशी भी लेने लगा। इस भाँति दोनों ने एक दूसरे का व्यापार बन्द कर देना

चाहा। नेपोलियन की ये आज्ञाएँ 'कान्टीनेन्टल सिस्टम' के नाम से प्रसिद्ध हैं क्योंकि उसने कान्टीनेन्ट अर्थात् यूरोप महाद्वीप में इंगलैण्ड का व्यापार बन्द करके उसे हराना चाहा था।

कुछ दिन तक नेपोलियन को सफलता मिली। रूस ने भी उसकी आज्ञाएँ मान लीं और इंगलैण्ड से व्यापार बन्द कर दिया। परन्तु शीघ्र ही इसकी असफलता प्रकट होने लगी। यूरोप में खाद्य सामग्री का अकाल सा पड़ने लगा, क्योंकि सारा व्यापार प्रायः इंगलैण्ड के जहाजों से ही होता था। अब सब वस्तुएँ तेज होने लगीं, उनका मूल्य बढ़ता गया। अतः लोग उसका दोष नेपोलियन को देने लगे और उसकी सर्वप्रियता शीघ्रतापूर्वक घटने लगी। दूसरे वह उसे पूर्णतया सफल भी न बना सका क्योंकि उसे कार्यान्वित करने के लिये समस्त यूरोप पर पूर्ण अधिकार की आवश्यकता थी। कुछ ही दिन बाद स्पेन और पुर्तगाल ने उसकी आज्ञा मानने से इन्कार किया और इंगलैण्ड के साथ व्यापार खोल दिया। इसके पहले भी इंगलैण्ड का बहुत सा माल चोरी से यूरोप में आता रहा जिससे इंगलैण्ड को बहुत कम हानि हुई परन्तु नेपोलियन की ही अधिक हानि हुई और उसे स्पेन से युद्ध भी करना पड़ा जिसमें इंगलैण्ड के भी आ जाने से उसकी हार हो गई, और यह हार उसके पतन का एक प्रधान कारण है। आर्थिक हानि के कारण रूस भी बहुत दिन तक इस आज्ञा को न मान सका। अतः नेपोलियन को उससे भी युद्ध करना पड़ा जिसमें उसकी अपार क्षति हुई और उसकी सब शक्ति नष्ट हो गई। इस भाँति नेपोलियन के पतन के जितने कारण हैं वे सब कान्टिनेन्टल सिस्टम के ही कारण उत्पन्न हुए। अतः

यह नीति उसकी एक महान् भूल थी। ऐसे २ महान् पुरुष भी कभी २ अदूरदर्शिता के कारण गलती कर जाते हैं!

पेनिन्सुलर वार [प्रायद्वीप युद्ध]

पुर्तगाल ने पहले कान्टीनेन्टल सिस्टम मानने से इन्कार किया, इस पर नेपोलियन ने जूनो के नेतृत्त्व में वहाँ पर एक सेना भेजी। जूनो ने स्पेन से मिलकर पुर्तगाल पर आक्रमण किया और लिस्बन पर अधिकार कर लिया। पुर्तगाल का राज-परिवार डरकर ब्राजिल प्रदेश में (दक्षिणी अमेरिका में) भाग गया। इसी समय स्पेन के राजा चार्ल्स षष्ठ तथा उसके पुत्र फर्डिनेन्ड में राज्य के लिये कलह हुआ। नेपोलियन ने हस्तक्षेप किया और कहा कि तुम दोनों हमारे निर्णय को मानो। उसका निर्णय यह था कि तुम दोनों कहो कि हम राज्य को छोड़ते हैं और आप के (नेपोलियन के) भाई जोसफ को स्पेन का राजा मानते हैं।

नेपोलियन के इस विचित्र निर्णय ने स्पेन में एकदम क्रोधाग्नि भड़क उठी। फर्डिनेन्ड स्पेन में सर्वप्रिय था और उसका देश उसके लिये फ्रांस से लड़ने को भी तैयार था, परंतु उसने चुपचाप नेपोलियन के निर्णय को स्वीकार कर लिया।

स्पेन की गद्दी से वहाँ के राजा तथा उसके पुत्र को हटा कर अपने भाई को वहाँ बैठाना, यह नेपोलियन की दूसरी बड़ी भूल हुई। इससे स्पेन में एकदम राष्ट्रीयता के भाव फैल गये। नेपोलियन ने अब तक कई राजाओं को उतारा था और कई नयी रियासतें स्थापित की थीं, परंतु वे राजा या तो विदेशी थे या अत्याचारी। अतः वह सफल हुआ, परंतु इस बार उसे एक निर्दो

जनता से सामना करना था जिसे स्वतंत्रता तथा राष्ट्रीयता, जीवन से भी प्यारी थी।

नेपोलियन ने समझा कि धार्मिक स्वतंत्रता, वैध-शासन आदि स्थापित करने से स्पेन की प्रजा संतुष्ट हो जायगी, परंतु देशभक्त स्पेन के लोगों ने नये प्रबंध का बड़े जोर से विरोध किया और उसे मानने से इन्कार कर दिया। नेपोलियन के दबाव डालने पर समस्त राष्ट्र ने हाथ में तलवार ली। पुर्तगाल की जनता ने भी उनका साथ दिया और जोसफ़ को शीघ्र ही स्पेन से प्रस्थान करना पड़ा। फ्रांस की सेनाएँ भी दो तीन स्थानों पर हार गईं। इससे यह प्रत्यक्ष है कि राष्ट्रीय भावों से उत्तेजित मनुष्य सैनिक कार्यों में अशिक्षित होने पर भी अपने सच्चे उत्साह तथा वीरता से शत्रु की बड़ी से बड़ी सेना को भी हरा सकते हैं।

इसी समय इंग्लैण्ड भी स्पेन की सहायता को आ गया। सर आर्थर वेलेसली—जो बाद में विलिंगटन के ड्यूक बनाये गये—के नेतृत्त्व में एक सेना स्पेन आई जिसने फ्रांसीसियों को हरा दिया और सिन्ट्रा की संधि के अनुसार उन्हें पुर्तगाल खाली करना पड़ा।

इस हार का समाचार सुनकर १८०८ में स्वयं नेपोलियन एक सेना के साथ स्पेन पहुँचा। उसकी उपस्थिति से उत्साह में आकर फ्रांसीसियों ने फिर स्पेन पर अपना अधिकार कर लिया और जोसफ़ फिर स्पेन के राजा हुए। फ्रेंच सेनापति साल्ट ने अंग्रेज़ी सेना को हरा कर पीछे भगा दिया।

परंतु इसी समय आस्ट्रिया में विद्रोह आरंभ हुआ और नेपोलियन को उधर जाना पड़ा। अतः अब विलिंगटन ने फ्रांसीसी

सेना को तलवरा स्थान पर फिर हरा दिया (१८०९)। दूसरे वर्ष नेपोलियन को अपनी कुछ और भी सेना रूस की ओर बुलानी पड़ी और वेलिंगटन इधर शेष सेना को सेलमेन्सा और विटमेरिया में हराते हुए १८१३ में मेड्रिड तक पहुँच गये और फ्रांसीसी फिर स्पेन से निकाल दिये गये।

नेपोलियन की स्पेन जीतने की इच्छा असफल हुई। उसके धन-जन की बड़ी क्षति हुई और उसकी प्रतिष्ठा भी कम हो गई। इस उदाहरण से उत्तेजित होकर अन्य देश भी उससे स्वतंत्र होने लगे। आस्ट्रिया ने जर्मनी में फ्रांस के विरुद्ध राष्ट्रीय भाव जागृत करना चाहा, परंतु १८०९ में वाग्राम स्थान पर उसकी हार हुई और उसे कुछ देश देने पड़े और अपनी पुत्री भी नेपोलियन को विवाह में देनी पड़ी। इसमें नेपोलियन का उद्देश यह था कि यूरोप के एक प्रतिष्ठित और प्राचीन राजवंश से उसका संबंध हो जाय जिससे यूरोप की आँखों में उसका और उसके वंशजों का सिंहासन पर पूरा अधिकार हो जाय।

१८१० में उसके भाई लुई ने भी जो हालैण्ड का राजा था, कान्टिनेंटल सिस्टम मानना अस्वीकार किया। अतः नेपोलियन ने हालैण्ड को भी अपने राज्य में मिला लिया और जर्मनी के नोगा-प्रांत के कुछ भागों को भी अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया। इससे हालैण्ड वाले भी उससे अप्रसन्न हो गये जो उनके भाई लुई की नीति से संतुष्ट थे।

रूसी संकट [रशियन डिज़ास्टर]

नेपोलियन की पत्नी जी जोसेफाइन के कोई पुत्र न हुआ। इस पर उसने रूस के जार की बहन से विवाह करना चाहा।

परंतु शीघ्र ही आस्ट्रिया की राजकुमारी मेरी लुइसा से विवाह कर लिया। यह व्यवहार ज़ार को बहुत बुरा लगा। दूसरे व्यापारिक क्षति के कारण उसने भी १८१० में इंग्लैण्ड के साथ व्यापार आरंभ कर दिया। इन कारणों से दोनों में वैमनस्य हो गया और नेपोलियन ने फिर ज़ार को हराने के विचार से एक बड़ी सेना तैयार कराई और प्रस्थान भी कर दिया। बोर्डिनो स्थान पर पहली लड़ाई हुई जिसमें यद्यपि नेपोलियन की विजय हुई, परंतु उसके ३०,००० सैनिक मारे गये और दोनों ओर के ७५,०००। अब उसने मास्को की ओर प्रस्थान किया और उसे आशा थी कि ज़ार शीघ्र ही समर्पण करेगा, परंतु जब वह नगर में पहुँचा तो जले हुए मकानों के अतिरिक्त उसे वहाँ कुछ न दिखाई दिया। आस पास का सब प्रदेश उजाड़ पड़ा था, फिर भी वह एक मास तक वहाँ पड़ा रहा। अकस्मात् उसके डेरों में भी आग लग गई जिससे उसकी बहुत क्षति हुई। जब उसने रूसियों पर विजय पाने की कोई आशा न देखी तो स्वयं ज़ार से पत्र-व्यवहार आरंभ कर दिया। ज़ार ने उत्तर दिया कि जब तक रूस की भूमि पर एक भी फ्रांसीसी खड़ा रहेगा तब तक संधि की बिलकुल बात चीत नहीं हो सकती। अब लौटने के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय न था। कुल मिलाकर उसकी सेना में ६ लाख मनुष्य थे जिनमें ढाई लाख फ्रांसीसी थे, शेष इटैलियन, प्रशियन, स्पेनिश और पोल आदि थे। भोजन की बहुत कमी पड़ी, इसके अतिरिक्त वहाँ की आबहवा अस्वास्थ्यकर तथा अत्यंत ठंढी थी। विकट जाड़े में २००-३०० सैनिक प्रतिदिन मरने लगे। कई छोटी २ लड़ाइयों में उसकी सेना का एक बड़ा भाग मर

चुका था। लौटते समय कुछ भूखे से तथा कुछ बीमारी से मर गये। इस पर वहाँ की कोजक आदि जंगली जातियों ने छिपे २ आक्रमण करके सैकड़ों को मार डाला। इस भाँति उसकी आधी से अधिक सेना नष्ट हो गई। मार्ग में मार्शल ने आक्रमण करने वालों से सेना की बहुत रक्षा की तथा नेपोलियन ने 'वीरों में महावीर' की पदवी पाई। इस भारी आपत्ति के कारण नेपोलियन की शक्ति बिलकुल घट गई। यह उसकी तीसरी बड़ी भूल तथा पतन का तीसरा बड़ा कारण है।

प्रशा से युद्ध—जेना की बड़ी हार के समय से अब तक प्रशा शान्त था परन्तु नेपोलियन की ऐसी दशा देख कर वहाँ के कुछ लोगों ने, जिनमें स्टेन मुख्य था, फिर फ्रांस के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ किया। स्टेन के प्रभाव से प्रशा में जाति-भेद दूर हो गया था, नगरों में स्थानीय-स्वराज्य की स्थापना हो गई थी तथा सेना में भी बहुत सुधार हो गये थे। जेना में जो सेना नेपोलियन से लड़ी थी, वह सरदारों और सामन्तों द्वारा भेजी हुई थी परंतु यह नई सेना देशभक्त नागरिकों की थी जो प्रशा में सैनिक शिक्षा अनिवार्य होने से तैयार हुई थी। नेपोलियन ने वहाँ की सेना की संख्या ४०,००० नियत कर दी थी परंतु वहाँ पर सैनिक शिक्षा आवश्यक करके सबको लड़ना सिखा दिया गया था। वहाँ पर राष्ट्रीय भाव भी जागृत हो गये थे।

उधर नेपोलियन की हार तथा रूसी विपत्ति के कारण फिर यूरोपीय देश उससे लड़ने को तैयार हो रहे थे और रूस, प्रशा, इंगलैंड, और स्वीडन ने उसके विरुद्ध चौथा बड़ा गुट बना लिया था। जनता ने जोर लगा कर आस्ट्रिया के राजा, फ्रेडरिक विलि-

यम तृतीय से रूस के साथ संधि करा ली जिससे आस्ट्रिया भी नेपोलियन के विरुद्ध गुट में सम्मिलित हो गया।

नेपोलियन इस समाचार को सुन कर जर्मनी पहुँचा और उसने आस्ट्रिया और रूस की सम्मिलित सेनाओं को लुटज़न तथा बुटज़न स्थानों पर हरा कर अपनी डूबती हुई प्रतिष्ठा को बचा लिया। उसने इस विजय के बाद ही प्लेविज स्थान पर संधि कर ली। यह भी उसकी भूल हुई क्योंकि इस अवसर में आस्ट्रिया ने अपनी सेना को फिर संगठित तथा दृढ़ कर लिया। युद्ध-संचालन में अद्भुत चतुरता तथा वीरता के कारण ड्रेस्डन स्थान पर उसने एक और भारी विजय प्राप्त की, परंतु यही उसकी अन्तिम विजय थी। गुट के सभी देशों की सेनाएँ अब आस्ट्रिया की सहायता को आ गईं जिससे शत्रुदल की सेना की संख्या उसकी सेना से अठगुनी हो गई। लिपज़िग स्थान पर दोनों का सामना हुआ। यह बड़ा भारी युद्ध था। अनेक राष्ट्रों की सेनाएँ इसमें सम्मिलित थीं। अतः यह राष्ट्रों का युद्ध कहलाता है। तीन दिन तक नेपोलियन की सेनाओं ने बड़ी वीरता से शत्रुओं का सामना किया परंतु अंत में उसकी थोड़ी सेना रह गई और जर्मनी से निकाल दी गई।

जर्मनी में उसका किया सब कार्य अब बिगाड़ा गया। राइन कन्फेडरेशन तोड़ दिया गया, हालैंड स्वतन्त्र हो गया तथा वेस्टफालिया राज्य भी मिट गया। शत्रुओं के गुट ने कहा कि यदि फ्रांस अपनी स्वाभाविक सीमा अर्थात् एक ओर राइन नदी, एक ओर आल्प्स तथा पैरेनीज़ पर्वत स्वीकार करे तो हम संधि करने को तैयार हैं, परंतु नेपोलियन ने इसे अस्वीकार कर दिया। शत्रुओं ने

फ्रांस को चारों ओर से घेर लिया और विजय की कोई आशा न देख कर वह ६ अप्रैल १८१४ को पेरिस छोड़ कर एल्बा द्वीप को भाग गया। परंतु जो मनुष्य आधे यूरोप का सम्राट् होकर भी संतुष्ट न हुआ था वह एल्बा द्वीप में कैसे संतुष्ट रह सकता है? अतः उसने एक वार फिर प्रयत्न किया।

अन्तिम प्रयत्न

नेपोलियन के एल्बा चले जाने पर यूरोप के पुनर्निर्माण पर विचार करने के लिये वियाना स्थान में कांग्रेस की बैठक आरंभ हुई। लुई सोलहवें का भाई लुई १८ वाँ फ्रांस की गद्दी पर बिठाया गया और फ्रांस की सीमा वही नियत की गई जो क्रान्ति आरम्भ होने से पहले थी। शेष प्रान्तों के बटवारे में कांग्रेस के मेम्बरों में मतभेद होने लगा। इधर लुई १८ वाँ थोड़े ही काल में अपनी प्रतिक्रिया की नीति के कारण फिर अप्रिय होने लगा। इन समाचारों को सुनकर नेपोलियन ने फिर एक वार अपने भाग्य की परीक्षा करनी चाही। फरवरी १८१५ में वह थोड़े से विश्वासी सैनिकों के साथ फिर फ्रांस के किनारे उतरा। जनता ने अपने बिछुड़े हुए वीर नेता का बड़ी धूमधाम से स्वागत किया। एक के बाद एक पल्टन बोर्बन राजा के प्रति राजभक्ति की शपथ तोड़ कर नेपोलियन से मिलने लगी। पुराने सेना-नायकों ने, अपने पुराने मालिक को बड़े प्यार से गले लगाया। मार्शल जो नेपोलियन को क़ैद करके पिंजड़े में पेरिस लाने के लिये भेजा गया था उसके गले लग गया और अपनी तलवार समर्पण कर दी। इस भांति वह बिना रक्तपात के फिर फ्रांस का राजा हो गया और लुई

भाग गया। इस समाचार को सुनकर यूरोपीय शक्तियाँ एकदम घबड़ा गईं। वियाना कांग्रेस में खलबली मच गई और मेम्बरों ने अपने भेदभाव दूर कर दिये तथा नेपोलियन के विरुद्ध फिर सम्मिलित सेनाएँ चलने लगीं। अंग्रेजों की सेना वेलिंगटन के अधीन थी तथा जर्मन सेना ब्लूचर के। नेपोलियन ने दोनों को अलग २ करके जर्मन सेना को परास्त कर दिया। उसकी अद्भुत वीरता का यह एक और नमूना है। थोड़े से अशिक्षित सैनिकों को लेकर उसने जर्मनी की बड़ी सेना को हराया। वेलिंगटन ने अपनी सेना वाटरलू स्थान पर जमा कर रखी थी। नेपोलियन की सेना ने बहुत देर तक उसका सामना किया और उसकी विजय की बहुत सम्भावना थी क्योंकि वेलिंगटन की सेना बहुत थकी हुई तथा घबरा गई थी। परंतु इतने में दूसरी ओर से जर्मन सेना आती हुई दिखाई देने लगी जिसकी अंग्रेज बहुत देर से बाट देख रहे थे। नेपोलियन की सेना दोनोंओर से घिर गई और हार गई। नेपोलियन की सेना में अधिकांश सिपाही अशिक्षित तथा युवक थे, क्योंकि उसके बहुत से पुराने जनरल तथा सैनिक अब तक काम आ चुके थे। उधर दूसरी ओर शत्रुओं की सेना उससे बहुत अधिक थी। नेपोलियन हार गया और भाग कर पेरिस पहुँचा और वहाँ से अमेरिका भाग जाना चाहता था परन्तु अंग्रेज गुप्तचरों ने उसे पकड़ लिया। अनेक राजाओं और सैनिक अफ़सरों की राय हुई कि उसे फौरन तोप से उड़ा दिया जाय, परन्तु वेलिंगटन आदि कुछ सच्चे वीरों के विरोध करने के कारण वह आजन्म के लिये सेण्ट हेलेना द्वीप में भेज दिया गया, जो अफ्रिका के दक्षिण-पश्चिम में अटलाण्टिक महासागर में है। वहाँ

पर भी उस पर कड़ी निगाह रखी गई और उसे अनेक कष्ट दिये गये। अन्तिम पराजय का उसे सदा बड़ा खेद रहा। किसी २ का मत है कि उसके सैनिक अफ़सरों ने उसे धोखा दिया क्योंकि वे लोभ में आकर शत्रुदल से मिल गये थे। नेपोलियन उस सुदूर द्वीप में अकेले दिन बिताता था, दो चार जनरल तथा सैनिक उसके साथ थे। वह प्रायः अन्तिम पराजय का स्मरण आ जाने पर पूछा करता था—'मार्शल! क्या वह धोखा था अथवा दुर्भाग्य?'। इस भाँति अनेक कष्ट सहता हुआ फ्रांस का सम्राट् १८२१ में मर गया।

इस भाँति इस महान अद्भुत वीर पुरुष का जीवन समाप्त हुआ। उसकी महत्त्वाकांक्षाएँ ही उसके पतन का कारण हुईं। उन्होंने उसे अन्धा तथा अदूरदर्शी बना दिया। उसका साम्राज्य बड़ी शीघ्रता से बना था, पर उसकी नींव दृढ़ नहीं थी। वह बलपूर्वक स्थापित किया गया था। अतः बल से ही उसकी रक्षा भी की जा सकती थी। इसके अतिरिक्त उसके पतन के और भी अनेक कारण हैं जिनमें उसकी 'कान्टीनेन्टल सिस्टम' प्रधान है। इसी को कार्यान्वित करने के प्रयत्न में चारों ओर उसके शत्रु—स्पेन, पुर्तगाल और रूस, उत्पन्न हो गये जिनके कारण उसकी सैनिक शक्ति बिलकुल नष्ट हो गई। उसने स्पेन में अपने भाई को बिठाकर भी बड़ी भूल की। इस से उसने वहाँ के लोगों के राष्ट्रीय भाव जागृत करके अपना पतन निकट बुलाया। उसकी सेना में भी केवल अशिक्षित तथा युद्धानुभवहीन युवक रह गये थे। पुराने सेवक प्रायः सब मर चुके थे, और अन्त में भाग्य ही उस के विरुद्ध था।

युद्ध-व्यय के लिये नेपोलियन को कुछ कर भी लगाना पड़ा था। अतः प्रजा कुछ अप्रसन्न हो गई थी। जिन राजाओं को उसने गद्दी से उतारा था, वे भी क्रुद्ध थे। इसके अतिरिक्त वे सभी लोग जिन्हों ने पहले उसका स्वागत बड़ी धूमधाम से किया था, उसके सम्राट् बन कर दरबार स्थापित करने और पहली स्त्री जोसफाइन को छोड़ कर राज-वंश से संबंध स्थापित करने से—जो राजवंश उस समय यूरोप का घृणापात्र था—उसके कट्टर शत्रु हो गये थे !

नेपोलियन संसार के सब से बड़े शक्तिमान विजयियों में—सिकन्दर, सीज़र, शार्लमैन आदि की श्रेणी में—गिना जाता है। वह अद्भुत मनुष्य था। शासन, युद्ध, कानून, शिक्षा आदि सभी में वह अद्भुत ज्ञान रखता था। वह बड़ा समाज-सुधारक था, परंतु कुछ लोगों ने फिर भी उसे डाकू, अत्याचारी आदि कहने में कसर नहीं की है।

क्रान्ति के स्थायी परिणाम—नवीन यूरोप की स्थापना क्रान्ति के समय से ही हुई, क्योंकि इस राजनैतिक क्रान्ति ने लोगों के आचार विचारों तथा सामाजिक व्यवहारों में भी क्रान्ति कर दी और राजनैतिक दृष्टिकोण भी बिलकुल बदल दिया। उन्नीसवीं शताब्दी में क्रान्ति के सिखाए हुए पाठों का ही प्रचार होता रहा है और यद्यपि कुछ काल के लिये इन विचारों को रोकने का भी प्रयत्न किया गया था, परन्तु वह प्रयत्न सफल न हुआ। क्रान्ति के विचार बढ़ते गये।

इन में पहला वैयक्तिक स्वातंत्र्य का विचार है जिस से समस्त यूरोप में सर्फ-प्रथा तथा कुछ लोगों अथवा श्रेणी-विशेष

के विशेषाधिकारों का अन्त हुआ और इस भाँति किसानों को जमींदारों तथा सरदारों के अत्याचारों से छुटकारा मिला।

दूसरा बड़ा पाठ राजनैतिक स्वतंत्रता का है। अब निरंकुश राजाओं को रखना प्रजा ने अस्वीकार कर दिया, चाहे वे कैसे भी प्रजा-हितचिन्तक तथा उदार क्यों न हों।

अठारहवीं शताब्दी में ही यह विचार उत्पन्न हो गया था कि सरकार का अर्थ तथा कर्तव्य यह है कि शासितों की रक्षा करे और उनकी समृद्धि में वृद्धि करे, परन्तु विद्वान, वेदान्ती तथा राजा महाराजा आदि किसी ने यह न सोचा कि उपरोक्त कारणों से प्रजा, प्रजा द्वारा ही शासित भी होना चाहिये; क्योंकि प्रत्येक मनुष्य अथवा समाज अपना स्वार्थ स्वयं ही पूर्णरूप से समझ सकता है। उन्नीसवीं शताब्दी में ये विचार प्रबल हुए कि राज्य-प्रबंध जनता के प्रतिनिधियों के द्वारा ही किया जाना चाहिये और इस भाँति से पहले गलतियाँ तथा भूलें होना भी किसी अनुत्तरदायी निरंकुश राजा से शासित होने से अच्छा है, चाहे वह कैसा ही चतुर क्यों न हो।

क्रांति का तीसरा परिणाम युरोपीय देशों में राष्ट्रीय भावों की जागृति है। अनेक देश, जो अब तक अनेक भागों में बँटे थे तथा विदेशियों के अधीन थे, तथा अनेक जातियां जो इधर उधर असंगठित बिखरी हुई पड़ी थीं, उन्होंने एक होकर स्वतंत्रता प्राप्ति का प्रयत्न किया। अठारहवीं शताब्दी में राजा तथा राज्य-शासक तथा राष्ट्र का एक ही अर्थ था। राजा ही राज्य समझा जाता था। अतः प्रजा की राष्ट्रीयता या, राष्ट्र की सीमा अथवा जाति-भेद का कुछ विचार न किया जाता था। कोई शासक ऐसे

दशा का अपने देश में न मिला सकता था जिसमें कोइ भिन्न जाति वसती हो, परंतु क्रांति के पश्चात् जाति-भेद का प्रश्न प्रधान हो गया। वियाना कांग्रेस ने इस नये विचार को दबाकर पुरानी नीति चलाने का प्रयत्न किया परंतु उसे सफलता न मिली क्योंकि राष्ट्रीयता के विचार जड़ पकड़ चुके थे।

इस भाँति इस क्रांति के कारण पोलैण्ड, इटली, जर्मनी आदि में, जहाँ के किसान बड़े दुखी थे, किसानों और सरदारों में समानता के भाव स्थापित किये। स्थान स्थान पर वैध शासन पर जोर दिया जाने लगा। राजा, मजिस्ट्रेट, थानेदार आदि प्रजा के नौकर समझे जाने लगे न कि मालिक। इस शताब्दी में क्रांति के समय के इस वाक्य का—'सब मनुष्य स्वतंत्र उत्पन्न हुए हैं और उनको स्वतंत्र ही रहना चाहिये'—बहुत जोर रहा।

वियाना कांग्रेस—नेपोलियन को सेंट हेलेना में भेज कर निश्चिंत होकर यूरोपीय शक्तियों ने फिर यूरोप के पुनर्निर्माण पर विचार आरंभ लिया। लुई १८वाँ फ्रांस की गद्दी पर बिठाया गया और उससे पेरिस की संधि के अनुसार युद्ध-व्यय तथा क्षति-पूर्त्ति के लिये एक भारी रक़म वसूल की गई तथा मित्रदल की सेना भी पाँच वर्ष के लिये फ्रांस में रखी गई जिसका व्यय फ्रांस पर ही था। इसके अतिरिक्त नेपोलियन ने विजित स्थानों से अनेक कलाओं के अच्छे अच्छे नमूने लाकर पेरिस में जमा किये थे, वे सब फिर वापस ले लिये गये। शेष देशों तथा सीमाओं का निम्न प्रकार से निर्णय किया गया—

आस्ट्रियन नेदरलैण्ड्स अर्थात् बेलजियम हालैण्ड में मिला दिया गया और नार्वे स्वीडन को दे दिया गया। ३८ रियासतों का

एक संघ बनाया गया तथा उनके कार्यों के लिये आस्ट्रिया के सभापतित्व में एक डाइट अथवा पार्लमेंट की स्थापना हुई। प्रशा को आधा सेक्सनी तथा राइन के पास के कुछ जिले मिले और आस्ट्रिया को वेनिस और लम्बार्डी दिये गये। रूस को फिनलैण्ड दिया गया और पोलैण्ड का भी कुछ भाग मिला, जहाँ पर उसने वैध-शासन स्थापित करने का वचन दिया। माल्टा, मारिशस, तथा केप ऑफ़ गुड होप इंग्लैण्ड के पास रहे। इटली में पुराने राजवंश को फिर स्थापित किया गया और पोप का इलाका भी वापिस किया गया, परंतु वेनिस और लम्बार्डी मिलने से आस्ट्रिया इटली में प्रधान रहा।

इन निर्णयों पर दृष्टिपात करने से प्रकट होता है कि निर्माताओं ने पहले तो क्रान्ति को बिलकुल असफल हुआ समझा। अतः प्रत्येक बात क्रान्ति के पहले समय के अनुसार स्थापित की गई। फिर उन्होंने बलसाम्य का अधिक विचार किया और इस कारण प्रजा के राष्ट्रीय विचारों पर कुछ ध्यान न दिया। बेलजियम, जिसका धर्म कैथोलिक था तथा भाषा फ्रेन्च, प्रोटेस्टैन्ट धर्म तथा ट्यूटोनिक भाषावाले हालैण्ड के साथ मिला दिया गया और इसी भाँति नार्वे स्वीडन से मिला दिया गया। इटली तथा जर्मनी में आस्ट्रिया का प्रभुत्व रखा गया। जिससे दोनों देशों में राष्ट्रीयता के विचार फैले और दोनों ने लड़कर स्वतंत्रता प्राप्त की। इन भूलों को दूर करने का प्रयत्न ही उन्नीसवीं शताब्दी का इतिहास है।

लागत मूल्य पर हिन्दी पुस्तकें प्रकाशित करनेवाली
एक मात्र सार्वजनिक संस्था

सस्ता-साहित्य-प्रकाशक मण्डल, अजमेर

उद्देश्य—हिंदी-साहित्य-संसार में उच्च और शुद्ध साहित्य के प्रचार के उद्देश्य से इस मण्डल का जन्म हुआ है। विविध विषयों पर सर्वसाधारण और शिक्षित-समुदाय, स्त्री और बालक सबके लिये उपयोगी, अच्छी और सस्ती पुस्तकें इस मण्डल के द्वारा प्रकाशित होंगी।

इस मण्डल के सदुद्देश्य, महत्व और भविष्य का अन्दाज पाठकों को होने के लिए हम सिर्फ़ उसके संस्थापकों के नाम यहाँ दे देते हैं—

मंडल के संस्थापक—(१) सेठ जमनालालजी बजाज, वर्धा (२) सेठ घनश्यामदासजी बिड़ला, कलकत्ता (सभापति) (३) स्वामी आनन्दानंदजी (४) बाबू महावीर प्रसादजी पोद्दार (५) डा० अम्बालालजी दधीच (६) पं० हरिभाऊ उपाध्याय (७) श्री जीतमल लूणिया, अजमेर (मन्त्री)

पुस्तकों का मूल्य—लगभग लागतमात्र रहेगा। अर्थात् बाजार में जिन पुस्तकों का मूल्य व्यापाराना ढंग से १) रखा जाता है उनका मूल्य हमारे यहाँ केवल ।=) या ।≡) रहेगा। इस तरह से हमारे यहाँ १) में ५०० से ६०० पृष्ठ तक की पुस्तकें तो अवश्य ही दी जावेंगी।

हिन्दी-प्रेमियों का स्पष्ट कर्तव्य

यदि आप चाहते हैं कि हिंदी का—यह 'सस्ता मण्डल' फले-फूले तो आपका कर्तव्य है कि आजही न केवल आपही इसके ग्राहक बनें, बल्कि अपने परिचित मित्रों को भी बनाकर इसकी सहायता करें।

हमारे यहाँ से निकलनेवाली दो मालाओं के स्थायी ग्राहक होने के नियम खूब ध्यान से पढ़ लीजिये

(१) हमारे यहां से 'सस्ती विविध पुस्तक-माला' नामक माला निकलती है जिसमें वर्ष भर में ३२०० पृष्ठों की छोटी बड़ी [illegible] पुस्तकें निकलती हैं और वार्षिक मूल्य पोस्ट खर्च सहित केवल ८) है। अर्थात् [illegible] रुपया ३२०० पृष्ठों का मूल्य और २) डाकखर्च। इस विविध पुस्तक-माला के दो विभाग हैं : एक 'सस्ती-साहित्य-माला' और दूसरी 'सस्ती-प्रकीर्ण पुस्तक-माला'। दो विभाग इसलिये कर दिये

गये हैं कि जो सज्जन वर्ष भर में आठ रुपया खर्च न कर सकें, वे एक ही माला के ग्राहक बन जावें । प्रत्येक माला में १६०० पृष्ठों की पुस्तकें निकलती हैं और पोस्ट खर्च सहित ४) वार्षिक मूल्य है। माला से ज्यों ज्यों पुस्तकें निकलती जावेंगी, वैसे वैसे पुस्तकें वार्षिक ग्राहकों के पास मण्डल अपना पोस्टेज लगाकर पहुँचाता जायगा। जब १६०० या २२०० पृष्ठों की पुस्तकें ग्राहकों के पास पहुँच जावेंगी, तब उनका वार्षिक मूल्य समाप्त हो जायगा।

(२) वार्षिक ग्राहकों को उस वर्ष की—जिस वर्ष के वे ग्राहक बनें—सब पुस्तकें लेनी होती हैं। यदि उन्होंने उस वर्ष की कुछ पुस्तकें पहले से ले रखी हों तो अगले वर्ष की ग्राहक-श्रेणी का पूरा रुपया यानी ४) या ८) दे देने पर या कम से कम १) या २) जमा करा देने तथा अगला वर्ष शुरू होने पर शेष मूल्य भेज देने का वचन देने पर, पिछले वर्षों की पुस्तकें जो चाहें, एक एक कापी लागत मूल्य पर ले सकते हैं।

(३) **दोनों मालाओं का वर्ष**—जनवरी मास से शुरू होकर दिसम्बर मास में समाप्त होता है। मालाओं की पुस्तकें हर तीसरे महीने इकट्ठी निकलती हैं और तब ग्राहकों के पास भेज दी जाती हैं। इस तरह वर्ष भर में कुल १६०० या २२०० पृष्ठों की पुस्तकें ग्राहकों के पास पहुँचा दी जाती हैं।

(४) **जो ग्राहक जिस माला के ग्राहक होते हैं**—उन्हें उसी माला की एक एक पुस्तक लागत मूल्य पर मिल सकती है। अन्य पुस्तकें मँगाने के लिये उन्हें आर्डर भेजना चाहिये। जिन पर नियमानुसार कमीशन काटकर वी. पी. द्वारा पुस्तकें भेज दी जावेंगी। **पत्र देते समय अपना ग्राहक नम्बर ज़रूर लिखना चाहिये।**

दक्षिण अफ्रिका का सत्याग्रह—प्रथम भाग (ले०—महात्मा गांधी)

(१) पृष्ठ सं० २७२, मूल्य स्थायी ग्राहकों से ।=) सर्वसाधारण से ॥)

(२) **शिवाजी की योग्यता**—(ले० गोपाल दामोदर तामस्कर एम० ए०, एल० टी०) पृष्ठ १२२, मूल्य ग्राहकों से ।) सर्वसाधारण से ।=)

(३) **दिव्य जीवन**—अर्थात् उत्तम विचारों का जीवन पर प्रभाव। संसार-प्रसिद्ध स्विट् मार्सडन के The Miracles of Right Thoughts का हिंदी अनुवाद। पृष्ठ-संख्या १३६, मूल्य स्थायी ग्राहकों से ।) सर्व साधारण से ।=); चौथी बार छपी है।

(४) **भारत के स्त्री-रत्न** (पाँच भाग) इस ग्रन्थ में वैदिक काल से लगाकर आजतक की प्रायः सब धर्मों की आदर्श, पातिव्रत्य-परायण, विद्वान् और भक्त कोई ५०१ स्त्रियों का जीवन-वृत्तान्त होगा। प्रथम भाग पृष्ठ ४१०, मूल्य स्थायी ग्राहकों से ॥।) सर्वसाधारण से १); आगे के भाग छप रहे हैं।

(५) **व्यावहारिक सभ्यता**—यह पुस्तक बालक, पुरुष, स्त्री सभी को उपयोगी है। पृष्ठ १०८, मूल्य स्थायी ग्राहकों से ≤) सर्वसाधारण से ।)॥, तीसरी बार छपी है।

(६) **आत्मोपदेश**—(यूनान के प्रसिद्ध तत्त्वज्ञानी महात्मा एपिक्टेट के विचार) पृष्ठ १०४, मूल्य स्थायी ग्राहकों से ≤) सर्वसाधारण से ।)

(७) **क्या करें?** (ले०—महात्मा टाल्स्टाय) इसमें मनुष्य जाति के सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक प्रश्नों पर बहुत ही सुन्दर और मार्मिक विवेचन किया गया है। महात्मा गांधी जी लिखते हैं—"इस पुस्तक ने मेरे मन पर बड़ी गहरी छाप डाली है। विश्व-प्रेम मनुष्य को कहाँ तक ले जा सकता है, यह मैं अधिकाधिक समझने लगा।" प्रथम भाग, पृष्ठ २९६ मूल्य ॥=) ग्राहकों से ।≤); दूसरा भाग छप रहा है।

(८) **कलवार की करतूत**—(नाटक) (ले० टाल्स्टाय) अर्थात् दुर्व्यसनों के दुष्परिणाम; पृष्ठ ४० मूल्य -)॥ ग्राहकों से -)।

(९) **जीवन-साहित्य**—(भू० ले० बाबू राजेन्द्र प्रसाद जी) म० गांधी के सुयोग्य अनुयायी काका कालेलकर के धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक विषयों पर मौलिक और मननीय लेख—प्रथम भाग-पृष्ठ २०० मूल्य ।) ग्राहकों से ।=)